उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्ड़न
मुक्त विश्वविद्यालय,प्रयागराज

B.Ed.SE-102
लिंग और दिव्यांगता

पाठ्यक्रम
श्रवण बाधित बच्चों के लिए पाठ्यचर्या अभिकल्प, अनुकूलन एंव मूल्यांकन

खण्ड–1 मानवाधिकार आधारित उपागम एवं अक्षमता		
इकाई–1	मानवाधिकार आधारित उपागमः संकल्पना, इतिहास, सिद्धान्त एवं लाभ	**4–30**
इकाई–2	मानवाधिकार तन्त्र के तत्वः कानूनी रूपरेखा, संस्थाएँ, विकास नीतियाँ एवं कार्यक्रम, लोक जागरूकता, नागरिक समाज	**31–42**
इकाई–3	अक्षमता के लिए निहितार्थः सशक्तता परिवर्तनीयता, अविभाज्यता एवं सहभागिता	**43–57**
खण्ड–2 लिंग एवं अक्षमता		
इकाई–4	अक्षमता का लैंगिक अनुभव	**58–67**
इकाई–5	लिंग एवं अक्षमता विश्लेषणः तकनीकी एवं रणनीतियाँ	**68–74**
इकाई–6	मानस एवं लिंगः शिक्षण के लिए निहितार्थ	**75–81**
खण्ड–3 अक्षम बालिकाएँ एवं महिलाएँ		
इकाई–7	समावेशी समानता	**82–88**
इकाई–8	लैंगिक समानता को बढ़ावा देने में शिक्षक की भूमिका	**89–94**
इकाई–9	कानून, सरकारी नीतियों एवं योजनाओं की लैंगिक आलोचना	**95–103**

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश, प्रयागराज

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 सत्यकाम	कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 पी0 के0 स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 पी0 के0 पाण्डेय	आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 छत्रसाल सिंह	आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0के0 एस0 मिश्रा	पूर्व कुलपति एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 धनन्जय यादव	आचार्य, विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी
डॉ0 जी0 के0 द्विवेदी	सह–आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 दिनेश सिंह	सह–आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ0 प्रियंका श्रीवास्तव	सहायक आचार्य (वि'ाष शिक्षा) बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी (इकाई 1,2,3,4,5,6,7,8,9,)

सम्पादक

डॉ0 संजय कुमार	सहायक–आचार्य, विशिष्ट शिक्षा, डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ,उ.प्र. (इकाई1,2,3,4,5,6,7,8,9)

परिमापक

डॉ0 मृत्युंजय मिश्रा	सह–आचार्य, विशिष्ट शिक्षा, डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ,उ.प्र. (इकाई 1,2,3,4,5,6,7,8,9)

समन्वयक

डॉ. नीता मिश्रा	सहा0 आचार्य, (विशेष शिक्षा), शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज.

प्रकाशक

प्रथम मुद्रण– मार्च, 2025

B.Ed-SE-102 fyx vkj fn0;kxrk

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN- **978-93-48987-87-7**

उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अं'ा उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशक – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशन : कर्नल विनय कुमार, कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2025।

मुद्रक : सिग्नस इन्फार्मेशन सल्यूशन प्रा० लि०, लोढ़ा सुप्रीमस साकी विहार रोड, अन्धेरी ईस्ट, मुम्बई।

खण्ड परिचय– लिंग एवं अक्षमता

खण्ड–1– मानवाधिकार आधारित उपागम एवं अक्षमता

प्रस्तुत खण्ड में आप मानवाधिकार आधारित उपागम, इसकी संकल्पना, इतिहास, सिद्धान्तों तथा लाभों से अवगत हो सकेंगे। इसके साथ ही मानवाधिकार तन्त्र के तत्वों जैसे कानूनी रूपरेखा, संस्थाएँ, इससे सम्बन्धित विभिन्न नीतियाँ एवं कार्यक्रम, लोक जागरूकता तथा नागरिक सभ्यता के विषय में भी जान सकेंगे। अक्षमता से सम्बन्धित विभिन्न निहितार्थ जैसे– सशक्तता, परिवर्तनीयता, अविभाज्यता एवं सहभागिता को भी समझना आवश्यक है जो कि आप इस खण्ड में जान सकेंगे। इस खण्ड में 3 इकाई है।

इकाई–1– मानवाधिकार आधारित उपागमः संकल्पना, इतिहास, सिद्धान्त एवं लाभ

इकाई–2– मानवाधिकार तन्त्र के तत्वः कानूनी रूपरेखा, संस्थाएँ, विकास नीतियाँ एवं कार्यक्रम, लोक जागरूकता, नागरिक समाज

इकाई–3– अक्षमता के लिए निहितार्थः सशक्तता परिवर्तनीयता, अविभाज्यता एवं सहभागिता

खण्ड–2– लिंग एवं अक्षमता

प्रस्तुत खण्ड में लिंग की जैविक एवं सामाजिक परिभाषा के साथ ही लिंग के मनोवैज्ञानिक संकल्पना को समझेंगे। अक्षम बालिकाओं के लैंगिक अनुभवों से अवगत हो सकेंगे। लिंग एवं अक्षमता के विश्लेषण की विभिन्न तकनीकों एवं रणनीतियों को समझ सकेंगे। इसके साथ ही इनका शिक्षण में निहितार्थ को जान सकेंगे। इस खण्ड में भी 3 इकाई हैं–

इकाई–4– अक्षमता का लैंगिक अनुभव

इकाई–5– लिंग एवं अक्षमता विश्लेषणः तकनीकी एवं रणनीतियाँ

इकाई–6– मानस एवं लिंगः शिक्षण के लिए निहितार्थ

खण्ड–3– अक्षम बालिकाएँ एवं महिलाएँ

प्रस्तुत खण्ड में आप सरकारी नीतियों, योजनाओं तथा कानूनों की लिंग के आधार पर आलोचना के द्वारा इन नीतियों को बेहतर रूप से समझ सकेंगे। इसमें समावेशी समानता तथा लैंगिक समानता से अवगत हो सकेंगे। इसमें आप यह भी समझ सकेंगे कि एक शिक्षक किस प्रकार से लैंगिक समानता को बढ़ावा दे सकता है। इस खण्ड में भी 3 इकाई हैं।

इकाई–7– समावेशी समानता

इकाई–8– लैंगिक समानता को बढ़ावा देने में शिक्षक की भूमिका

इकाई–9– कानून, सरकारी नीतियों एवं योजनाओं की लैंगिक आलोचना

इकाई–1

मानव अधिकार आधारित उपागम : संकल्पना, इतिहास, सिद्धान्त तथा लाभ
(Human Rights-Based Approach: Concept, History, Principles and Advantages)

इकाई संरचना

1.1 परिचय

1.2 इकाई के उद्देश्य

1.3 मानव अधिकार आधारित उपागम की संकल्पना

1.4 मानव अधिकार आधारित उपागम का इतिहास

1.5 मानव अधिकार आधारित उपागम के सिद्धान्त

1.6 मानव अधिकार आधारित उपागम के लाभ

1.7 इकाई सारांश

1.8 बोध प्रश्न के उत्तर

1.9 अभ्यास कार्य

1.10 चर्चा के बिन्दु

1.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 परिचय

विकास का हर दशक विकास के लिए कुछ नए दृष्टिकोण लाता है, जो विकास को समझने के तरीके को नई अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है। हालांकि अधिकार और मानवाधिकार अपेक्षाकृत हाल ही के हैं। विकास विचारक हमेशा आर्थिक विकास से अधिक होने के रूप में विकास को फिर से परिभाषित करना चाहते हैं। मानव अधिकारों के बारे में बात करना, एक अधिक समग्र परिभाषा का निर्माण करने जैसा है। हाल ही के वर्षों में विकास के लिए ''अधिकार–आधारित दृष्टिकोण'' को बदलने में भी रुचि देखी गयी है। अन्तर्राष्ट्रीय विकास एजेंसियों ने अधिकारों के सन्दर्भ में अपने काम को बढ़ाना शुरू कर दिया है। इसी प्रकार मानवाधिकार संगठन भागीदारी की अवधारणाओं और रणनीतियों की खोज कर रहे हैं। फिर भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर "अधिकारों की बात" और "भागीदारी की बात" का एक बड़ा मुद्दा है। वास्तव में एक "अधिकारवादी दृष्टिकोण" क्या है? और यह "भागीदारी" के नाम पर क्या किया जा रहा है? मानवाधिकार का इतिहास क्या है? इसके सिद्धान्त क्या हैं? मानवाधिकार आधारित उपागम को अपनाने से हमें क्या लाभ है, ये कुछ ऐसे बिंदु हैं जिन्हें हम इस इकाई में समझेंगे।

1.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप अवगत हो सकेंगे–

- मानव अधिकार आधारित दृष्टिकोण की संकल्पना को समझ सकेंगे।
- मानव अधिकार के इतिहास को जान सकेंगे।
- मानवाधिकार के सिद्धान्तों को समझ सकेंगे।
- मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण के लाभ को जान सकेंगे।
- मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण विकसित कर सकेंगे।

1.3 मानव अधिकार आधारित उपागम की संकल्पना (Concept of Human Right Based Approach)

'मानव अधिकार' वे न्यूनतम अधिकार हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यक रूप से प्राप्त होने चाहिये, क्योंकि वह मानव परिवार का सदस्य है। मानव अधिकारों की धारणा मानव गरिमा की धारणा से जुड़ी है अतएव जो अधिकार मानव गरिमा को बनाये रखने के लिये आवश्यक हैं, उन्हें मानव अधिकार कहा जा सकता है। मानवाधिकार शब्द दो शब्दों मानव + अधिकार के योग से निष्पत्त है, जिसका तात्पर्य है 'मनुष्य का अधिकार'। मानवाधिकार सभी मनुष्य चाहे वे किसी भी धर्म, लिंग, क्षेत्र, देश या समुदाय का हो या फिर दिव्यांग हो, सभी को प्राप्त होंगे। इसके अनुसार, किसी के भी साथ, किसी भी दृष्टि से कोई भेद–भाव नहीं किया जाना चाहिये।

इस प्रकार मानव अधिकारों की धारणा आवश्यक रूप से न्यूनतम मानव आवश्यकताओं पर आधारित है। इनमें से कुछ शारीरिक जीवन तथा स्वास्थ्य के लिए हैं और अन्य मानसिक जीवन तथा स्वास्थ्य के लिये तात्त्विक हैं।

यद्यपि मानव अधिकारों की संकल्पना उतनी ही पुरानी है, जितनी की प्राकृतिक विधि पर आधारित प्राकृतिक अधिकारों का प्राचीन सिद्धान्त तथापि 'मानव अधिकारों' पद की उत्पत्ति द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय चार्टरों और अभिसमयों से हुई। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् व्यक्तियों की स्थिति में रूपान्तरण हुआ है, जो कि समसामयिक अन्तर्राष्ट्रीय विधि में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण विकास है। एक बार जब मानव प्राधिकारियों पर आबद्धकर उच्चतर विधि की संकल्पना का उद्विकास हो गया तो यह निश्चयपूर्वक कहा गया कि समाज से पूर्ववर्ती कतिपय अधिकार हैं, जो मानव प्राधिकारियों द्वारा सृजित अधिकारों से वरिष्ठ हैं तथा जिनको सार्वभौम रूप से सभी मनुष्यों पर सभी काल में लागू किया जा सकता है। इनके बारे में यह भी मान लिया गया है कि ये अधिकार राजनीतिक समाज के जन्म के पहले ही अस्तित्व में थे। अतः इन अधिकारों का राज्य द्वारा अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। मानवाधिकार अपनी प्रकृति में किसी एक राज्य तक सीमित न होकर अपितु अन्तर्राष्ट्रीयता को प्राप्त कर चुके हैं और संयुक्त राष्ट्र संघ इन अधिकारों को सुरक्षित रखने तथा सबको इन अधिकारों की प्राप्ति के प्रति दृढ़ संकल्पित है।

मानवाधिकार आधारित उपागम, गरीब, हाशिए पर, कमजोर समूहों अथवा दिव्यांगों को नीति के मूल में और क्षमता विकास रणनीतियों पर ध्यान केंद्रित करता है। यह लिंग विश्लेषण विकास के अधिकार–आधारित दृष्टिकोण का एक आंतरिक हिस्सा है। मानव विकास का सम्बन्ध मूल मानव अधिकारों और मौलिक अधिकारों की पूर्ति से है। मानव अधिकारों तथा सतत् मानव विकास के बीच दो सम्बन्ध हैं। पहला, विकास की प्रक्रिया को मानव स्वतंत्रता के विस्तार के रूप में देखा जा सकता है। मानव विकास का सम्बन्ध बुनियादी मानवाधिकारों और मूलभूत मानवीय स्वतन्त्रता की पूर्ति से है। दूसरा, दोनों ही मानव अधिकार विकास की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे लक्ष्य की प्राप्ति के लिए, गरीबी उन्मूलन हेतु प्रभावी उपकरणों सहित विकास कार्यकर्ता उपलब्ध कराते हैं।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1– मानव अधिकार 'पद' की उत्पत्ति विश्व में कब हुई?

उत्तर– ....

....

....

प्रश्न 2– मानवाधिकार एवं सतत विकास में कोई एक सम्बन्ध बताइए ।

उत्तर– ....

....

....

....

1.3.1 मानव अधिकारों की उत्पत्ति एवं विकास (Origin and Development of Human Rights)

मानवाधिकारों की पृष्ठभूमि भारतीय सन्दर्भ में अत्यधिक प्राचीन है। इसके तत्व हमें प्राचीन काल से ही प्राप्त होते हैं और तत्कालीन सामाजिक संरचना कर्मणा और वर्णज आधारित थी जो किसी भी प्रकार की हीनता की विरोधी थी। प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता के द्वारा आगे बढ़ सकता था और अपने वर्ण में परिवर्तन की पूरी छूट प्राप्त थी, परन्तु धीरे–धीरे इस व्यवस्था में दोष आने लगे, ये व्यवस्थाएँ रूढ़ और स्थायी बन गयीं, जिसके परिणामस्वरूप कालान्तर में तमाम प्रकार के भेदभावों का जन्म हुआ।

आज हम सम्पूर्ण विश्व में कई प्रकार के भेदभावों को देखते हैं, जो निम्न प्रकार से हैं–

1. भाषागत भेदभाव, 2. स्थानगत भेदभाव.

3. धर्मगत भेदभाव, 4. रंगगत भेदभाव,

5. जातिगत भेदभाव, 6. लिंगगत भेदभाव,

7. वर्गगत भेदभाव, 8. शिक्षागत भेदभाव,

9. अर्थगत भेदभाव, 10. सांस्कृतिक भेदभाव

इस प्रकार इन भेदभावों ने मनुष्य–मनुष्य के मध्य एक दीवार खड़ी कर दी थी जिसे तोड़ने की आवश्यकता महसूस होने लगी और इन भेदभावों के दूरगामी परिणाम आज हमें दिखने प्रारम्भ हो गये थे। अतः सम्पूर्ण विश्व और प्रबुद्ध वर्ग इस ओर से चिन्तित था। ऐसे में मानवाधिकारों की घोषणा के द्वारा इस खाई को पाटने का कार्य किया जाने लगा।

मानव अधिकार पद का प्रयोग सर्वप्रथम अमरीकन राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने जनवरी 16, 1941 में कांग्रेस को सम्बोधित अपने प्रसिद्ध संदेश में किया था जिसमें उन्होंने चार मर्मभूत स्वतंत्रताओं पर आधारित विश्व की घोषणा की थी। इनको उन्होंने इस प्रकार सूचीबद्ध किया था– 1. वाक् स्वातंत्र्य, 2. धर्म स्वातंत्र्य, 3.गरीबी से मुक्ति और 4. भय से स्वातंत्र्य। चार स्वातंत्र्य संदेश के अनुक्रम में राष्ट्रपति ने घोषणा किया "स्वातंत्र्य से हर जगह मानव अधिकारों की सर्वोच्चता अभिप्रेत है तथा हमारा समर्थन उन्हीं को है, जो इन अधिकारों को पाने के लिए या बनाये रखने के लिए संघर्ष करते हैं। 'मानव अधिकारों' पद का प्रयोग फिर अटलांटिक चार्टर में किया गया था। तदनुरूप मानव अधिकारों का लिखित प्रयोग संयुक्त राष्ट्र चार्टर में पाया जाता है, जिसको द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् सैनफ्रांसिस्को में 25 जून, 1945 को अंगीकृत किया गया था, उसी वर्ष के अक्टूबर माह में बहुसंख्या में हस्ताक्षरकर्ताओं ने इसका अनुसमर्थन कर दिया। संयुक्त राष्ट्र चार्टर की उद्देशिका में घोषणा की गयी कि अन्य बातों के साथ–साथ संयुक्त राष्ट्र का उद्देश्य "मूल मानव अधिकारों के प्रति निष्ठा को पुनः अभिपुष्ट करना होगा" तदुपरांत संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुच्छेद 1 में कहा गया है कि "संयुक्त राष्ट्र का 'प्रयोजन' 'मूलवंश, लिंग, भाषा या धर्म के आधार पर विभेद किये बिना मानव अधिकारों और मूल स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान की अभिवृद्धि करने और उसे प्रोत्साहित करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना होगा"।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 3– मानवाधिकार 'पद' का प्रयोग सर्वप्रथम किसने और कब किया?

उत्तर– ....

....

प्रश्न 4– मानवाधिकारों का लिखित प्रयोग सर्वप्रथम किस चार्टर में पाया जाता है?

उत्तर– ....

....

....

1.3.2 मानवाधिकारों का स्वरूप तथा विशेषताएँ (Nature and Characteristics of Human Rights)

मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा पत्र का स्वरूप तथा विशेषताएँ निम्नवत् हैं–

1. सर्वव्यापी
2. व्यक्ति केन्द्रितता
3. विस्तृत तथा व्याख्यात्मक
4. राष्ट्र की नैतिक जिम्मेदारी
5. नियन्त्रित
6. न्यायिक शक्ति नहीं
7. बाध्यता न होना
8. मनुष्य के हितों तथा समानता पर बल

1. **सर्वव्यापी**– मानवाधिकार अपने स्वरूप में सर्वव्यापी तथा सार्वभौमिक है क्योंकि यह बिना किसी भी भेदभाव के सभी को प्राप्त है। यहाँ तक कि अधीनस्थ राज्य के नागरिक भी इन अधिकारों के उपभोग के अधिकारी है।
2. **व्यक्ति केन्द्रितता**– मानवाधिकारों के केन्द्र में व्यक्ति है क्योंकि इस घोषणा पत्र में सम्मिलित अधिकारों के विषय में व्यक्ति संपूर्ण विश्व के है, राज्यों के नहीं और इन अधिकारों का उद्देश्य सभी देशों के प्रत्येक कोने में निवास करने वाले व्यक्तियों की शोषण से रक्षा करना तथा उनके विकास हेतु आवश्यक परिस्थितियों का सृजन करना है।
3. **विस्तृत तथा व्याख्यात्मक**– मानवाधिकार विस्तृत तथा व्याख्यात्मक तथा विशेषता से परिपूर्ण है। इसका प्रारम्भ प्रस्तावना के साथ होता है तथा इसमें 30 धाराएँ है। मानवाधिकारों का महत्व तथा इसकी स्वीकृति के पीछे उत्तरदायी तथ्यों की व्याख्या कर इसे अधिक स्पष्ट किया गया है जिससे व्यक्ति इसके महत्व को समझ सकें।
4. **राष्ट्र की नैतिक जिम्मेदारी**– मानवाधिकार वर्तमान में प्रत्येक राज्य की नैतिक जिम्मेदारी है क्योंकि किसी भी सभ्य राष्ट्र द्वारा अपने नागरिकों के अधिकारों की अनदेखी नहीं की जा सकती है। यद्यपि मानवाधिकारों को मानना या न मानना राज्यों के अधिकार क्षेत्र का विषय है, परन्तु राज्यों द्वारा यह नैतिक उत्तरदायित्व लेने से उनकी जवाबदेही बढ़ जाती है।
5. **नियन्त्रित**– मानवाधिकारों की घोषणा पत्र में जिन अधिकारों की घोषणा की गयी है उनका उपयोग कोई भी व्यक्ति मनमाने ढंग से या स्वच्छन्द रूप से नहीं कर सकता है, अपितु इन अधिकारों का प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होगा कि अन्य व्यक्तियों के अधिकारों का हनन तो नहीं हो रहा है। इस प्रकार मानवाधिकार नियंत्रित है।
6. **न्यायिक शक्ति नहीं**– मानवाधिकारों के पीछे किसी भी प्रकार की न्यायिक शक्ति निहित नहीं है, अपितु इन अधिकारों को दृष्टिगत रखते हुए राज्य नीति निर्धारण का कार्य करते हैं। इस प्रकार न्यायिक शक्ति न होने के पश्चात् भी राज्य इन अधिकारों के लिए सजग रहता है।
7. **बाध्यता न होना**– मानवाधिकारों को संयुक्त राष्ट्र द्वारा राज्यों पर लादा नहीं जा सकता और न ही इसे मानने या अनुपालन के लिए राज्य बाध्य ही है, फिर भी यह कहा जा सकता है कि बाध्यता न होने के पश्चात् भी कोई भी राज्य इनको नजरअंदाज भी नहीं कर सकता है।
8. **मनुष्य के हितों तथा समानता पर बल**– मानवाधिकार मनुष्यों में किसी भी आधार पर भेदभाव न करके उन सभी के प्रति समान व्यवहार पर ही बल देते हैं जिससे सभी आगे बढ़कर उन्नति कर सकें।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 5– मानवाधिकारों की सर्वव्यापी घोषणा पत्र की किन्हीं दो विशेषताओं को बताइये।

उत्तर– ....

प्रश्न 6– क्या मानवाधिकारों को न्यायिक रूप प्राप्त है?

उत्तर– ....

1.3.3 मानवाधिकारों के प्रकार (Types of Human Rights)

संयुक्त राष्ट्र की मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा में सम्मिलित मानवाधिकारों का क्षेत्र अति व्यापक है क्योंकि मनुष्य का समग्र जीवन और क्रियाकलाप ही इन अधिकारों की परिधि में आ जाते हैं। मानवाधिकारों का वर्गीकरण हम दो प्रकार से कर सकते हैं–

1. प्रथम वर्गीकरण– नागरिक एवं राजनैतिक अधिकार।
2. द्वितीय वर्गीकरण– आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकार।

इन दोनों अधिकारों के अन्तर्गत नागरिकों के जीवन सम्बन्धी अधिकारों का वर्णन किया गया है। अब हम इनका अलग–अलग वर्णन करेंगे।

(1) प्रथम वर्गीकरण–नागरिक एवं राजनैतिक अधिकार

मानवाधिकारों में वर्णित नागरिक एवं राजनैतिक अधिकार अग्र प्रकार से हैं–

1. **जीवन सुरक्षा तथा स्वतन्त्रता का अधिकार**– संसार के सभी नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के अपने जीवन की सुरक्षा और स्वतन्त्रता के अधिकार प्रदान किये गये हैं।
2. **गुलामी से मुक्ति का अधिकार**– प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी धर्म, लिंग, भाषा, स्थान का हो, उसे गुलामी एवं अभिशाप से मुक्त होने का अधिकार प्राप्त है। घोषणा पत्र की धारा 4 के अनुसार, "किसी को भी गुलामी या पराधीनता की अवस्था में नहीं रखा जाएगा। किसी भी रूप में गुलामी तथा गुलामों के व्यवहार पर प्रतिबन्ध लगाया जाएगा।"

   "No one shall be held to slavery or servitude slavery and the slave trade shall be prohibited in all their forms."
3. **अमानवीय व्यवहार से मुक्ति का अधिकार**– मानवाधिकारों के अन्दर अमानवीय व्यवहार से मुक्ति प्राप्त करने का अधिकार भी सम्मिलित है। घोषणा पत्र की धारा 5 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अमानवीय व्यवहार तथा उत्पीड़न से मुक्ति प्राप्ति का अधिकार है और इस बात की व्यवस्था की गयी है कि किसी भी व्यक्ति को उत्पीड़न या क्रूर, अमानवीय व्यवहार अथवा दण्ड के अधीन नहीं रखा जायेगा।
4. **कानून के समक्ष समता का अधिकार**– सभी नागरिकों को कानून के समक्ष समानता का अधिकार प्रदान किया गया है। सभी को बिना किसी भी भेदभाव के कानून के समक्ष समान सुरक्षा तथा न्याय पाने का अधिकार घोषणा–पत्र की धारा 7 के द्वारा दिया गया है।
5. **स्वेच्छा से कैद तथा नजरबन्दी के विरुद्ध सुरक्षा का अधिकार**– मानवाधिकार किसी भी व्यक्ति को धारा 9 के अनुसार स्वेच्छा से कैदी बनाये जाने, नजरबन्द करने या देश निकाला के विरुद्ध अधिकार प्रदान करते हैं।

   "Nobody shall be subjected to arbitrary arrest, detention or excile."
6. **न्याय की प्राप्ति का अधिकार**– मानवाधिकार सभी व्यक्तियों को न्याय की शरण में तथा कानूनी सुरक्षा का अधिकार प्रदान करते हैं। चार्टर की धारा 10 तथा 11 के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति को अपने अधिकार तथा कर्तव्यों और अपने ऊपर लगे फौजदारी दोष का निर्धारण करने के लिए एक स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष अदालत द्वारा न्यायसंगत तथा सार्वजनिक सुनवाई करवाने का समान रूप से अधिकार

प्राप्त है।

7. **गोपनीयता की स्वतन्त्रता का अधिकार**– मानवाधिकार के अन्तर्गत व्यक्ति को गोपनीयता की स्वतन्त्रता का अधिकार प्रदान किया गया है। धारा 12 में उल्लिखित है कि किसी भी व्यक्ति की गोपनीयता, परिवार, घर या पत्रव्यवहार के साथ हस्तक्षेप नहीं किया जा सकेगा तथा उसके सम्मान व प्रतिष्ठा को चोट नहीं पहुँचायी जाएगी। प्रत्येक व्यक्ति को उसकी गोपनीयता भंग करने वाले कार्य के विरुद्ध कानूनी सुरक्षा की प्राप्ति का अधिकार है।

8. **मताधिकार का अधिकार**– प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के मताधिकार प्राप्त होगा। धारा 21 के अनुसार ऐसी व्यवस्था की गयी है कि प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से या चुने गये प्रतिनिधियों के द्वारा अपने देश की शासन प्रणाली में भाग लेने का अधिकार है।

9. **घूमने–फिरने की स्वतन्त्रता का अधिकार**– धारा 13 के अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक राज्य की सीमाओं में घूमने–फिरने तथा निवास करने की स्वतन्त्रता प्राप्त होगी। इसके अतिरिक्त व्यक्ति को देश से बाहर आने–जाने का अधिकार भी प्रदान किया गया है।

10. **शरण प्राप्त करने का अधिकार**– चार्टर की धारा 14 के द्वारा यह व्यवस्था की गयी है कि प्रत्येक व्यक्ति को अभियोग से बचने हेतु दूसरे देशों में शरण ढूँढ़ने तथा इसका उपभोग करने का अधिकार भी दिया गया है।

11. **राष्ट्रीयता का अधिकार**– चार्टर की धारा 15 के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति को राष्ट्रीयता का अधिकार प्राप्त है। किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से उसकी राष्ट्रीयता से वंचित नहीं किया जाएगा और न ही उसे अपनी राष्ट्रीयता बदलने से रोका जायेगा।

12. **विवाह तथा पारिवारिक जीवन का अधिकार**– चार्टर की धारा 16 के अनुसार सभी स्त्रियों तथा पुरुषों को जाति, राष्ट्रीयता या धर्म के बन्धन के बिना विवाह करने व पारिवारिक जीवन जीने का अधिकार है। धारा में यह भी कहा गया है कि विवाह स्त्री–पुरुष दोनों की स्वतन्त्र तथा पूर्ण सहमति से ही सम्पन्न होगा। इस बात को भी स्वीकार किया गया है कि परिवार समाज की प्राकृतिक व आधारभूत इकाई है और यह समाज और राज्य द्वारा सुरक्षा की हकदार है।

13. **सम्पत्ति रखने का अधिकार**– चार्टर की धारा 17 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अकेले तथा दूसरों के साथ मिलकर सम्पत्ति रखने का अधिकार प्राप्त है। किसी को भी उसकी सम्पत्ति से वंचित नहीं रखा जायेगा।

14. **अन्तःकरण तथा धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार**– धारा 18 द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को अन्तःकरण तथा धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार प्रदान करती है। इसमें व्यक्ति द्वारा अपना धर्म या विश्वास बदलने की स्वतन्त्रता सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त उसे इस बात की भी स्वतन्त्रता है कि वह अकेले या समुदाय के अन्य लोगों के साथ और निजी अथवा सार्वजनिक रूप, धर्म या विश्वास का प्रचार, पालन, पूजा और अनुसरण द्वारा अभिव्यक्त कर सकता है।

15. **वैचारिक स्वतन्त्रता का अधिकार**– धारा 19 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अभिव्यक्ति व स्वतन्त्रता प्रदान की गयी है। प्रत्येक व्यक्ति बिना हस्तक्षेप के अपनी राय का निर्माण कर सकता है तथा सूचना अथवा विचार किसी भी माध्यम से प्राप्त तथा प्रदान कर सकता है।

16. **शान्तिपूर्ण सभा करने तथा संघ बनाने की स्वतन्त्रता का अधिकार**– चार्टर की धारा 20 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को शान्तिपूर्ण ढंग से सभा का आयोजन करने और संगठन बनाने का अधिकार प्राप्त है। किसी भी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध किसी भी संगठन से जोड़ा नहीं जा सकता है।

17. **न्यायिक सुरक्षा प्राप्ति का अधिकार**– चार्टर की धारा 8 में उल्लिखित है कि प्रत्येक व्यक्ति को संविधान या कानून द्वारा अधिकार प्रदान किये गये हैं। मौलिक अधिकारों की आलोचना करने वाले कार्यों हेतु न्याय की शरण में जाकर अपने अधिकारों की सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है।

(2) द्वितीय वर्गीकरण– आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकार

संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकारों की घोषणा की धारा 22 से लेकर 28 तक में व्यक्तियों के आर्थिक, सामाजिक

तथा सांस्कृतिक अधिकारों का वर्णन किया गया है, जो इस प्रकार हैं–

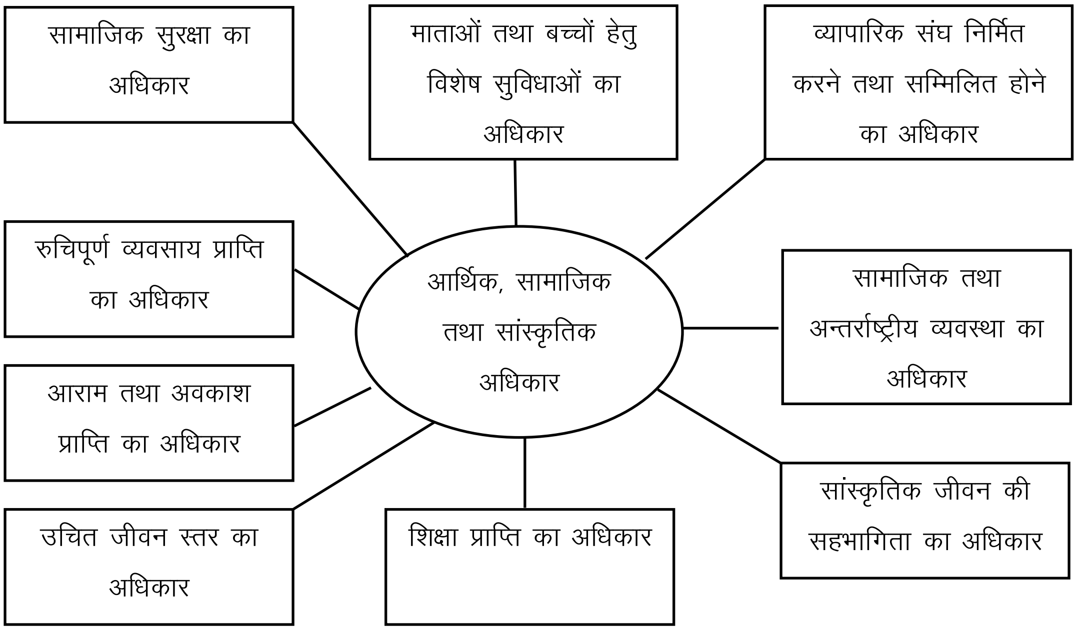

1. **सामाजिक सुरक्षा का अधिकार**– चार्टर की धारा 22 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपनी तथा अपने परिवार की भलाई और अच्छाई हेतु उचित जीवन स्तर प्राप्त करने का अधिकार है। बीमारी, बेरोजगारी, शारीरिक अयोग्यता, वृद्धावस्था तथा विधवापन इत्यादि की चिकित्सकीय देख–रेख रोटी, वस्त्र, आवास इत्यादि हेतु अधिकार प्राप्त हैं।

2. **रुचिपूर्ण व्यवसाय प्राप्ति का अधिकार**– चार्टर की धारा 23 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने मनपसन्द व्यवसाय को चयनित करने का अधिकार प्राप्त है, साथ–ही–साथ संगत और अनुकूल स्थितियाँ प्राप्त करने तथा बेरोजगारी के विरुद्ध सुरक्षा प्राप्ति का अधिकार है।

3. **आराम तथा अवकाश प्राप्ति का अधिकार**– चार्टर की धारा 24 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के काम करने के उचित रूप से निर्धारित घण्टे तथा वेतन सहित समय–समय पर लिए जाने वाले अवकाश भी सम्मिलित हैं।

4. **उचित जीवन स्तर का अधिकार**– धारा 25 के अनुसार प्रत्येक प्रकार का कार्य करने वाले व्यक्ति को न्यायसंगत तथा अनुकूल पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार है जो कि उसके व उसके परिवार के लिए एक प्रतिष्ठाजनक जीवन सुनिश्चित कर सके तथा यदि आवश्यक हो तो इसे सामाजिक सुरक्षा के अन्य साधनों द्वारा परिपूर्ण किया जाये।

5. **शिक्षा प्राप्ति का अधिकार**– चार्टर की धारा 26 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। प्रारम्भिक तथा आधारभूत स्तरों पर शिक्षा निःशुल्क होनी चाहिए। प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य होगी, तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध होगी तथा योग्यता के आधार पर सभी मनुष्य समान रूप से उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। शिक्षा का उद्देश्य मानव का व्यक्तित्वपूर्ण विकास करना और मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान ऊँचा करना होगा। यह सभी राष्ट्रों, जातियों और धार्मिक समूहों के मध्य विवेक, सहनशीलता तथा मित्रता को बढ़ावा देगी और शान्ति बनाये रखने हेतु संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों को आगे बढ़ायेगी।

6. **सांस्कृतिक जीवन की सहभागिता का अधिकार**– चार्टर की धारा 27 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को समुदाय के सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने का, कला का उपभोग करने का तथा वैज्ञानिक प्रगति और इसके लाभों की प्राप्ति का अधिकार है। प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी वैज्ञानिक साहित्यिक या कलात्मक कृति, जिसमें उसका स्वयं का योगदान है, उससे उत्पन्न लाभों को सुनिश्चित करने का अधिकार प्राप्त है।

7. **सामाजिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का अधिकार**— चार्टर की धारा 28 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने अधिकारों का उपभोग करने हेतु सामाजिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का अधिकार है और प्रत्येक व्यक्ति ऐसी सामाजिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का हकदार है जिससे वह घोषणा पत्र में वर्णित अधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं का पूर्ण रूप से उपभोग कर सके।

8. **व्यापारिक संघ निर्मित करने तथा सम्मिलित होने का अधिकार**— प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यावसायिक हितों की सुरक्षा हेतु व्यापारिक संघ का निर्माण करने और उसमें स्वेच्छा से सम्मिलित होने की स्वतन्त्रता है।

9. **माताओं तथा बच्चों हेतु विशेष सुविधाओं का अधिकार**— माताओं तथा शैशवावस्था की विशेष देख–रेख को ध्यान में रखते हुए उन्हें विशेष सुविधाओं की प्राप्ति का अधिकार प्रदान किया गया है और विवाहित तथा माता–पिता दोनों के ही बच्चों तथा माताओं को ये विशेष सुविधाएँ प्राप्त होंगी।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 7– मानवाधिकारों का वर्गीकरण हम किन दो प्रकारों से कर सकते हैं?

उत्तर– ....

प्रश्न 8– संयुक्त राष्ट्र संघ की मानवाधिकारों के घोषणा पत्र में शिक्षा प्राप्ति के अधिकार का उल्लेख किस धारा में हुआ है?

उत्तर– ....

1.4 मानव अधिकार आधारित उपागम का इतिहास (History of Human Right Based Approach)

स्टार्क का मत है कि संयुक्त राष्ट्र चार्टर आबद्धकर लिखित नहीं था और इसमें आदर्श कथन किया गया है, इसे बाद में अभिकरणों और अंगों द्वारा विकसित किया जाना है।

(i) मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा– अनेक मानव अधिकारों का निर्माण करने में पहला ठोस कदम संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दिसम्बर 1948 में 'मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा' को अंगीकृत करके किया। आशय यह था कि इसका अनुसरण 'अंतर्राष्ट्रीय बिल आफ राइट्स' द्वारा होगा, जो कि प्रसंविदा करने वाले पक्षकारों पर वैध रूप से आबद्धकर होगा।

(ii) 1966 की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदाएँ– कुछ भी हो, सार्वभौम घोषणा केवल आदर्शों के कथन के रूप में क्रियाशील रही, जिसका स्वरूप वैध रूप से आबद्धकर प्रसंविदा के रूप में नहीं था और इसके प्रवर्तन के लिए कोई तंत्र नहीं था। इस कमी को दूर करने का प्रयास संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दिसम्बर, 1966 में मानव अधिकारों के पालन के लिए दो प्रसंविदाएं अंगीकृत करके किया–

(क) सिविल और राजनीतिक अधिकारों पर प्रसंविदा,

(ख) आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर प्रसंविदा।

दोनों प्रसंविदाएं दिसम्बर, 1976 में प्रवृत्त हुई, जब अपेक्षित संख्या में 35 सदस्य राज्यों ने उनका अनुसमर्थन कर दिया। 1981 के अंत तक 69 राज्यों ने इसका अनुसमर्थन कर दिया। ये प्रसंविदाएं अनुसमर्थन करने वाले राज्यों पर वैध रूप से आबद्धकर हैं। ऐसे अनुसमर्थन का प्रभाव यह है कि अनुसमर्थन करने वाला राज्य प्रसंविदा को कार्यान्वित करने के लिए विधायी उपाय अपनायें जिससे प्रसंविदा में वर्णित अधिकारों को प्रवर्तित किया जाये।

(iii) यूरोपीय अभिसमय–सार्वभौम घोषणा और 1966 की दोनों अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं के बीच सार्वभौम घोषणा का सामूहिक कार्यान्वयन राज्यों के एक समूह द्वारा जो यूरोप की परिषद के सदस्य थे, भानव अधिकार के संरक्षण के लिए 1950 में मानव अधिकार पर यूरोपीय अभिसमय को अंगीकार करके किया गया तथा यह अभिसमय उन राज्यों पर वैध रूप से आबद्धकर हैं, जिन्होंने इसका अनुसमर्थन किया है। ऐसे अनुसमर्थन के

बाद यह 1953 में प्रवृत्त हुआ।

यद्यपि यूरोप के बाहर के लोग यूरोपीय अभिसमय के कार्यक्रम में प्रत्यक्ष रूप से हितबद्ध नहीं थे। तथापि मानव अधिकार के संवैधानिक संरक्षण में हितबद्ध सम्पूर्ण विश्व के लिए इसकी महत्वपूर्ण भूमिका थी क्योंकि अभिसमय ने 1959 में यूरोपीय न्यायालय की स्थापना किया है। इस न्यायालय का कृत्य अभिसयम के प्रवर्तन में होने वाले विवादों का निस्तारण करना है और इसके विनिश्चय वैध निर्णय के रूप में सुनाए जाते हैं। इन विनिश्चयों में अभिसमय के पाठ का निर्वचन अंतर्ग्रस्त रहता है और इस प्रकार के राष्ट्रीय संविधान के निर्वचन में, जिनमें तदनुरूप मूल अधिकारों की प्रत्याभूति है, महत्वपूर्ण मार्गदर्शन करते हैं।

(iv) मानव अधिकार अमेरिकी अभिसमय, 1969—मानव अधिकारों के प्रवर्तन के लिए सामूहिक तंत्र का निर्माण लैटिन अमेरिका के राज्यों द्वारा किया गया है, जिन्होंने अमेरिकी राज्यों का संगठन बनाया है। संगठन ने 1969 में मानव अधिकार पर अभिसमय अंगीकार किया है. जिसकी बाध्यताएँ अभिसमय के पक्षकारों पर आबद्धकर हैं। संगठन ने अंतर—अमरीकी मानव अधिकार आयोग भी स्थापित किया है, जिसका उद्देश्य मानव अधिकारों के सम्मान की अभिवृद्धि करना है, जिनको मानव अधिकार और कर्तव्य की अमेरिकी घोषणा, 1948 में घोषित किया गया था।

(v) कॉमनवेल्थ के भीतर विकास—अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसंविदाओं के अंगीकरण ने कामनवेल्थ के भीतर भी जो कि एक आभासी अंतर्राष्ट्रीय संगठन है मानव अधिकार के संरक्षण के लिए प्रेरित किया। इस बात का अनुभव किया गया कि कॉमनवेल्थ संगठन के आदर्शों की प्राप्ति तभी हो सकती है जब जातिभेद को सदस्य राष्ट्रों द्वारा पूर्ण रूप से उनके राज्य क्षेत्रों में तथा पारस्परिक सम्बन्धों में अवैध घोषित कर दिया जाए।

सिंगापुर घोषणा—इस उद्देश्य से प्रेरित होकर कॉमनवेल्थ देशों की सरकारों के अध्यक्षों ने सिंगापुर में जनवरी, 1971 में एकत्र होकर एक बैठक में अन्य बातों के साथ घोषणा किया कि—

(i) हम जातीय पक्षपात को मानव जाति के स्वस्थ विकास को जोखिम में डालने वाली भयावह बीमारी मानते हैं, हममें से प्रत्येक अपने राष्ट्र में इस बुराई का प्रबल रूप से विरोध करेगा।

(ii) हम सब प्रकार के औपनिवेशिक प्रभुत्व और जातीय दमन का विरोध करते हैं और मानव गरिमा तथा समानता के सिद्धांत के लिए प्रतिबद्ध हैं।

(iii) हम सर्वत्र मानवीय समानता और गरिमा को प्रोत्साहित करने के लिए अपना पूर्ण प्रयास करेंगे।

लुसाका घोषणा— कामनवेल्थ सरकार के अध्यक्षों ने अगस्त, 1979 में लुसाका की बैठक में दक्षिण अफ्रीका में 'रंगभेद (Apartheid)' व्यवहार की तरफ ध्यान दिया और अन्य बातों के साथ घोषणा किया कि—

"हम रंगभेद (Apartheid) को बनाये रखने की परिकल्पित सभी नीतियों को अमानवीय मानकर स्वीकार करते हैं जो कि इन सिद्धांतों पर आधारित हैं कि जातीय वर्ग अंतर्निहित रूप से वरिष्ठ या निकृष्ट होते हैं या हो सकते हैं। कामनवेल्थ को विशिष्ट रूप से उन अन्य संगठनों से अपने कार्यकलाप में समन्वय बढ़ाना चाहिए, जो उसी प्रकार मानव अधिकारों और मूल स्वतंत्रताओं की अभिवृद्धि और संरक्षण के लिए प्रतिबद्ध हैं।"

इस विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मानव अधिकार प्रसंविदा अनुसमर्थन करने वाले घरेलू विधि का भाग नहीं है, तथापि सुसंगत विधान में समा्तिय अधिकार घरेलू न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय हैं।

बोध प्रश्न—

प्रश्न 9— कॉमनवेल्थ देशों की सरकारों के द्वारा सिंगापुर घोषणा कब किया गया था?

उत्तर— ....

प्रश्न 10—किस घोषणा में 'रंगभेद (Apartheid)' व्यवहार की तरफ ध्यान दिया गया?

उत्तर— ....

1.4.1 संयुक्त राष्ट्र संघ तथा मानवाधिकार (U.N.O. and Human Rights)

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना 15 नवम्बर, 1945 को की गयी तथा इसमें प्रायः सभी गतिविधियों के अन्तर्गत मानवाधिकारों का स्थान प्रमुख था। संयुक्त राष्ट्र के चार्टर की धारा 68 के अन्तर्गत मानवाधिकारों पर आयोग की स्थापना की व्यवस्था की गयी। आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् (संयुक्त राष्ट्र संघ का अंग) के द्वारा मानवाधिकारों की सूची तैयार करने के लिए 18 सदस्यीय आयोग (वर्तमान में इस आयोग में 32 सदस्य हैं) स्थापित करने की सिफारिश की गयी। दिसम्बर, 1948 में आयोग द्वारा मानवाधिकारों का एक विस्तृत घोषणा पत्र तैयार किया गया तथा इसे संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा के समक्ष प्रस्तुत किया गया।

10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा को स्वीकृति प्रदान की गयी, जिसकी 30 धाराएँ है। इसी कारण सम्पूर्ण विश्व में 10 दिसम्बर को 'मानवाधिकार दिवस' के रूप में मनाया जाता है। मानवाधिकारों का मानव जीवन के प्रत्येक पहलू के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। 48 देशों ने इस प्रस्ताव के पक्ष में मत दिया तथा विपक्ष में एक भी देश नहीं था और 8 देशों ने मतदान की प्रक्रिया में हिस्सा ही नहीं लिया। संयुक्त राष्ट्र के चार्टर की प्रस्तावना तथा अन्य धाराओं में मानवाधिकार सम्बन्धी व्यवस्थाएँ तथा इसके प्रति प्रतिबद्धता जतायी गयी है। चार्टर की धारा 1 (3) के अनुसार, मानवाधिकारों के विकास हेतु अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की प्राप्ति को संयुक्त राष्ट्र संघ ने अपना उद्देश्य घोषित किया है तथा संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता की प्राप्ति हेतु यह एक आवश्यक शर्त भी है।

व्यवस्थाएँ

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर तथा इसकी प्रस्तावना द्वारा मानवाधिकार के सम्बन्ध में निम्नांकित व्यवस्थाएँ दी गयी हैं—

1. अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की प्राप्ति,
2. मानवाधिकारों के प्रति सम्मान,
3. मानवाधिकारों के अनुपालन को प्रोत्साहन,
4. मौलिक मानवाधिकारों में विश्वास,
5. मानवाधिकार आयोग की स्थापना।

1. **अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की प्राप्ति**— संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर की धारा 1 (3) के अनुसार, "संयुक्त राष्ट्र का उद्देश्य जाति, लिंग, भाषा या धर्म के भेदभाव के बिना सभी के लिए मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान विकसित करने तथा उसे बढ़ावा देने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना है।"

   "The purpose of the united nations are to achieve international cooperation in promoting and encouraging respect for human rights and for fundamental freedom for all without distinctions as to race language and religion."

   मानवाधिकारों को तभी मूर्त रूप प्रदान किया जा सकता है जब इसके लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग की प्राप्ति हो। विश्व के सभी देश एक साथ मिलकर मानवाधिकारों के लिए कार्य करें।

2. **मानवाधिकारों के प्रति सम्मान**— संयुक्त राष्ट्र, मानवाधिकारों के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करने का उद्देश्य रखता है। अतः चार्टर की धारा 53 में कहा गया है कि संयुक्त राष्ट्र जाति, लिंग, भाषा या धर्म के भेदभाव के बिना सभी के लिए मानवाधिकार और मौलिक स्वतन्त्रताओं के प्रति विश्वव्यापी अनुपालन और सम्मान को बढ़ावा देगा।"

   "United Nations shall promote universal respect for and observance of human rights and fundamental freedom for all without distinctions as to race, sex, language or religion."

   चार्टर की धारा 76 के अनुसार "न्यासिता प्रणाली का मूल उद्देश्य मनुष्य के लिए जाति, लिंग, भाषा या धर्म के भेदभाव के बिना मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान को प्रोत्साहन देगा।"

"The basic objective of the trusteeship system shall to encourage respect for human rights and for fundamental freedoms for all without distinction as to caste, sex, language or religion."

3. **मानवाधिकारों के अनुपालन को प्रोत्साहन**– संयुक्त राष्ट्र चार्टर की धारा 62 में यह वर्णन किया गया है कि ″आर्थिक और सामाजिक परिषद् सबके लिए मानव अधिकार व मौलिक स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान, इनके अनुपालन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सिफारिश करता है।″

"Economic and social council may make recommendations for the purpose promoting respect for and observing of human rights and fundamental freedom for all."

4. **मौलिक मानवाधिकारों में विश्वास**– मौलिक मानवाधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र अपनी प्रतिबद्धता को बार–बार दुहराता है तथा चार्टर की प्रस्तावना में भी इसका समर्थन इन शब्दों के अन्तर्गत किया गया है कि ″संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में वर्णित नियमों के उद्देश्यों के अन्तर्गत संघ के मौलिक मानवाधिकारों में मनुष्यों के गौरव व योग्यता तथा स्त्री–पुरुषों के समान अधिकारों के प्रति अपने विश्वास का पुनः समर्थन किया है।″

5. **मानवाधिकार आयोग की स्थापना**– संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकारों के प्रति अत्यधिक निष्ठावान और प्रतिबद्ध है तथा इसी दिशा में चार्टर की धारा 68 में मानवाधिकार आयोग की स्थापन पर बल दिया गया है। इस धारा के अनुसार आर्थिक और सामाजिक परिषद् मानवाधिकारों को बढ़ावा देने के लिए आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में आयोग की स्थापना करेगा।″

बोध प्रश्न–

प्रश्न 11– संयुक्त राष्ट्र संघ में मानवाधिकारों की सूची तैयार करने वाले आयोग में मूल रूप से सदस्यों की संख्या कितनी थी?

उत्तर– ....

....

....

प्रश्न 12– मानवाधिकार दिवस कब मनाया जाता है?

उत्तर– ....

....

....

1.4.2 मानवाधिकारों का क्रियान्वयन (Implimention of Human Rights)

किसी भी प्रकार का अधिकार केवल नागरिकों को प्रदान कर देना ही नहीं होता है, अपितु उसके समुचित क्रियान्वयन की आवश्यकता भी होती है। मानवाधिकारों की सुनिश्चितता हेतु कुछ आवश्यक कार्य दिये गये हैं, जो निम्नांकित हैं–

1. मानवाधिकारों को संविधान में सम्मिलित कर इनका प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जा सकता है।
2. मानवाधिकारों को संविधान में सम्मिलित कर लेने के पश्चात् संशोधित करना आसान नहीं है। इस प्रकार मानवाधिकारों के अस्तित्व को अक्षुण्ण बनाने का प्रयास किया गया है।
3. यदि नागरिकों से उनके अधिकार वापस ले लिए जायें तो उन्हें अधिकारों की सुरक्षा हेतु न्याय की शरण में जाने का अधिकार भी प्राप्त है। इस प्रकार मानवाधिकार दिखावा मात्र बनकर नहीं रह जाते हैं।
4. मानवाधिकारों के प्रति सुरक्षा प्रदान कराने हेतु न्यायपालिका पूर्णरूपेण स्वतन्त्र है, उस पर कार्यपालिका तथा विधायिका का अंकुश नहीं है।
5. मानवाधिकारों का हनन करने वाले कानूनों का निर्माण नहीं किया जा सकता है, जिससे इनकी सुरक्षा पर

कोई भी आँच नहीं आती है।

6. मानवाधिकारों को प्रभावी रूप से क्रियान्वित करने हेतु लिखित संविधान तथा लोगों में जागरूकता का प्रसार किया जा रहा है।

7. मानवाधिकारों की सुरक्षा तथा क्रियान्वयन के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा किये गये प्रयास निम्नवत् हैं–

   (i) नागरिक तथा राजनैतिक अधिकारों से सम्बन्धित प्रतिज्ञा पत्र को पाँच भागों तथा 45 धाराओं में विभक्त किया गया है, जिसमें लगभग सभी अधिकार सम्मिलित है, जिनको मानवाधिकार की विश्वव्यापी घोषणा पत्र में सम्मिलित किया गया है। इस प्रतिज्ञा पत्र पर कम–से–कम 35 राष्ट्रों को हस्ताक्षर करने थे। 23 मार्च, 1976 को यह तय हुआ तब 37 राष्ट्रों द्वारा इसकी पुष्टि की गयी और सितम्बर 1985 तक इस प्रतिज्ञा पत्र की 76 राष्ट्रों द्वारा पुष्टि की गयी। यह प्रतिज्ञा पत्र 18 सदस्यीय 'मानवाधिकारों की समिति बनाये जाने की व्यवस्था करती है।

   (ii) आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों पर प्रतिज्ञा–पत्र को पाँच भागों में बाँटा गया है। इसकी 31 धाराएँ है। यह प्रतिज्ञा पत्र 3 जनवरी, 1976 को लागू हुआ और 39 राष्ट्रों द्वारा इसकी पुष्टि की गयी तथा सितम्बर 1983 में इस घोषणा–पत्र पर 79 राष्ट्रों द्वारा पुष्टि की प्राप्ति हुई।

8. आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् के सुझाव पर मानवाधिकार आयोग द्वारा भेदभाव रोकथाम तथा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा पर एक उप–आयोग की नियुक्ति की जिसका उद्देश्य प्रत्येक प्रकार के भेदभाव को रोकना तथा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा हेतु उपायों का सुझाव देना था। 1960 में आयोग द्वारा तैयार रिपोर्ट के आधार पर यूनेस्को ने शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्येक प्रकार के भेदभाव की समाप्ति हेतु समझौता पास किया।

9. 20 नवम्बर, 1963 को संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा प्रत्येक प्रकार के जातीय भेदभाव की रोकथाम हेतु एक प्रस्ताव पास किया गया। इस प्रस्ताव द्वारा महासभा ने सदस्य राष्ट्रों को प्रत्येक प्रकार के भेदभाव की रोकथाम हेतु उपयुक्त उपाय करने हेतु निर्देश दिये और यह प्रस्ताव महासभा द्वारा कई बार दुहराया गया।

10. 20 दिसम्बर, 1952 को महासभा ने स्त्रियों के राजनैतिक अधिकारों पर समझौता पास करके 7 जुलाई, 1954 को इसे लागू किया। इस समझौते का उद्देश्य स्त्रियों को समान राजनैतिक अधिकार प्रदान कराना था।

11. 1956 ई. में आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् ने गुलामी, गुलामों के धन्धे एवं संस्थाओं और गुलामी से मिलते–जुलते अपराधों के उन्मूलन के सम्बन्ध में अनुपूरक समझौता पास किया जिसका उद्देश्य सब प्रकार की गुलामी के धन्धों तथा गुलामी की समाप्ति करना था। सभी सदस्य राज्यों का यह कर्तव्य था कि वे इस बात को सुनिश्चित करें कि इस कुप्रथा का अन्त हो जाये।

12. 1959 को महासभा ने बच्चों के अधिकारों से सम्बन्धित एक घोषणा को स्वीकार किया। इसमें कहा गया कि बच्चों को आवश्यक रूप से वे सभी सुविधाएँ दी जानी चाहिए जो कि उनके शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए अनिवार्य हैं।

13. 14 दिसम्बर, 1960 की महासभा ने घोषणा की कि सभी राष्ट्रों को स्वयं निर्णय का अधिकार होना चाहिए। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए जो राज्य अन्य राज्यों के अधीन होते हैं, विकास नहीं कर पाते, उनका निजी लाभ हेतु शोषण किया जाता है। अतः राज्यों के पास स्वयं निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए।

14. 1966 में मानवाधिकार आयोग द्वारा मानवाधिकारों हेतु उच्चायुक्त की नियुक्ति का सुझाव दिया गया। उच्चायुक्त को मानवाधिकारों के अन्तःकरण के प्रवक्ता के रूप में काम करना चाहिए। इसके अतिरिक्त उच्चायुक्त का उद्देश्य मानवाधिकारों के उचित क्रियान्वयन का सुनिश्चितीकरण, संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न अंगों को मानवाधिकारों के सम्बन्ध में परामर्श प्रदान करना था।

15. मई, वर्ष 1968 को तेहरान में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया जिसका उद्देश्य मानवाधिकारों के कार्यान्वयन की रुचि में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर की गयी उन्नति का मूल्यांकन करना था। इस सम्मेलन में 84 राज्यों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया तथा उन्होंने सर्वसम्मति से 29 प्रस्ताव पारित किये जो 'तेहरान

घोषणा पत्र' के नाम से जाने जाते हैं। इन प्रस्तावों के माध्यम से सदस्य राष्ट्रों से कहा गया कि वे मानवाधिकारों के प्रति अपने दायित्वों का पूर्ण रूप से वहन करें तथा जातीय भेदभाव की निन्दा करते हुए उपनिवेशवाद की समाप्ति की अपील की गयी।

16. वर्ष 1968 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानवाधिकारों का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष घोषित किया गया। इसका उद्देश्य मानवाधिकारों के महत्त्व को प्रकाशित करना, इनके प्रति राष्ट्रों का ध्यान आकृष्ट करना इत्यादि था।

17. वर्ष 1975 को 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष' घोषित करते हुए महासभा द्वारा इस बात की माँग की गयी कि विकासकारी कार्यों में स्त्रियों की समानता का, पूर्ण संघटन को बढ़ावा तथा विश्व शान्ति की वृद्धि में स्त्रियों की भूमिका का सम्मान किया जाना चाहिए।

18. 17 दिसम्बर 1974 को संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने भारी बहुमत के साथ एक प्रस्ताव पास किया, जिसमें दक्षिण अफ्रीका की श्वेत जातीय भेदभाव की निन्दा की गयी। तत्पश्चात् भी महासभा ने दक्षिण अफ्रीका की जातीय नीतियों को लेकर कई निन्दा प्रस्ताव पारित किये।

19. महासभा द्वारा वर्ष 1979 को अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष के रूप में घोषित किया गया तथा यह बालकों के अधिकारों की संयुक्त राष्ट्र की घोषणा की 20वीं वर्षगाँठ थी। उसके द्वारा अनुमान लगाया गया कि विकासशील देशों में लगभग 350 मिलियन बच्चे न्यूनतम स्वास्थ्य अशैक्षिक, शैक्षिक तथा सामाजिक सेवाओं से वंचित हैं।

20. महासभा ने मानवता के भविष्य के निर्माण हेतु युवकों की स्पष्ट भागीदारी के प्रबल महत्त्व को स्वीकार करते हुए 1978 में ही, वर्ष 1985 को 'अन्तर्राष्ट्रीय युवक वर्ष' घोषित करने का निर्णय लिया।

21. नवम्बर, 1989 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा बाल अधिकारों पर एक समझौता स्वीकार किया गया। यह बाल अधिकारों को प्रोत्साहन व सुरक्षा प्रदान करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण प्रयास है। इस समझौते का लक्ष्य बच्चों के प्रति राष्ट्रों के राजनैतिक तथा लोकोपकारी कर्तव्यों को ऊँचा उठाना था। बाल अधिकारों की दृष्टि से यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सन्धि है और यह 21 सितम्बर, 1990 से लागू हुआ।

22. 6 अगस्त, 1982 को वियना में संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रायोजित बुढ़ापे पर विश्व सभा के समापन पर एक अन्तर्राष्ट्रीय कार्य योजना स्वीकार की गयी, जिसका उद्देश्य विश्व भर में वृद्ध लोगों की तेजी से बढ़ती जनसंख्या के कारण उत्पन्न समस्याओं से निपटने के लिए राज्यों का मार्गदर्शन करना था। इस कार्य योजना में बड़े–बूढ़ों की सहायता की जरूरत पर जोर दिया, जिससे वे समाज की समस्त गतिविधियों से अपना सम्पर्क तोड़ने की अपेक्षा जहाँ तक सम्भव हो, अपने परिवार और समुदाय में रहकर स्वतन्त्र जीवन व्यतीत कर सकें। इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु सरकार को परिवार में बड़े–बूढ़ों की देख–रेख हेतु परिवारजनों को आवश्यक रूप से सहायता प्रदान करना था।

23. 20 दिसम्बर, 1982 को संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने वर्ष 1987 को बेघर लोगों के लिए आश्रय का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष घोषित किया। इस प्रस्ताव में कहा गया कि इस वर्ष से जुड़ी गतिविधियों का उद्देश्य वर्ष 1987 राष्ट्रीय वरीयता के अनुसार विशेष रूप से विकासशील देशों के गरीबों व प्रतिकूल परिस्थितियों में रहने वाले लोगों के आश्रय और पास–पड़ोस में सुधार लाना होगा। वर्ष 2000 तक इन्हीं कार्यों के साधनों का प्रदर्शन करना होगा।

24. 14 जून, 1993 से 25 जून, 1993 तक वियना में मानवाधिकारों पर विश्व सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में मानवाधिकारों की सर्वव्यापकता तथा अविभाज्यता की पुष्टि की गयी। विशेष रूप से इस सम्मेलन में इस बात का उल्लेख किया गया कि किसी भी मानवाधिकार के उपभोग को केवल इसलिए नकारना नहीं चाहिए कि अन्य अधिकारों के पूर्ण उपभोग की प्राप्ति नहीं हुई तथा राज्यों की राजनैतिक आर्थिक व सांस्कृतिक प्रणालियों का स्वरूप कुछ भी हो इनका (राज्यों का) कर्तव्य अधिकारों एवं मौलिक स्वतन्त्रताओं की सुरक्षा करना है। इसके दूसरे भाग में संयुक्त राष्ट्र के विशिष्ट अभिकरण तथा मानवाधिकारों की सुरक्षा में संलग्न अन्य संस्थानों की भूमिकाओं को निर्धारित किया गया तथा उनके और अधिक सहयोग तथा समन्वय का आह्वान किया गया।

25 वर्ष 1981 को दिव्यांग व्यक्तियों का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष मनाया गया। इस वर्ष के उद्देश्यों में निम्न उद्देश्य सम्मिलित थे–

(i) दिव्यांग व्यक्तियों को शारीरिक व मनोवैज्ञानिक रूप से समाज के अनुकूल बनाने में मदद देना।

(ii) राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रयत्नों में वृद्धि करना जिससे दिव्यांग व्यक्तियों को उचित सहयोग प्रशिक्षण देखभाल और निर्देशन प्राप्त हो सके।

(iii) उपयुक्त कार्य हेतु अवसर जुटाना तथा उनके साथ संगठन का सुनिश्चितीकरण।

(iv) दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों के संवर्धन से जनसाधारण को शिक्षित करना।

(v) दिव्यांगता को हटाने तथा पुनः उसकी स्थापना हेतु प्रभावी रूप से कार्य करना।

26. 29 सितम्बर, 1993 को भारत के राष्ट्रपति ने एक अध्यादेश जारी करके अवकाश प्राप्त भारत के मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में पाँच सदस्यीय राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया। इससे देश में व्यक्ति की स्वतन्त्रता, समानता व सम्मान की बेहतर सुविधा हेतु राज्य स्तर पर भी इसी प्रकार के आयोगों की स्थापना की व्यवस्था की गयी। इन मानवाधिकारों की सुरक्षा को संविधान द्वारा सुरक्षित बनाया जाये या अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञा–पत्रों में सम्मिलित कर भारतीय अदालतों द्वारा लागू करवाया जाये। दिसम्बर 1993 को संसद द्वारा मानवाधिकार सुरक्षा बिल (Human Rights Protection Bill, 1993) को स्वीकृति प्रदान की गयी। राज्य सभा द्वारा इसे एक मत से स्वीकार किया गया।

27. 10 दिसम्बर, 1993 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानवाधिकार दिवस मनाया गया जो कि जून 1993 में वियाना में मानवाधिकारों पर बुलाये गये विश्व सम्मेलन के पश्चात् यह पहला अवसर था तथा इस दिन मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा की 45वीं वर्षगाँठ भी थी। इसमें मानवाधिकारों हेतु निम्नलिखित मूल विषयों को स्थापित किया गया–

(i) सभी राज्यों द्वारा बाल अधिकारों पर समझौते की विश्वव्यापी अभिपुष्टि एवं 1993 तक राष्ट्रीय कार्य योजनाओं में इसका एकीकरण करना।

(ii) वर्ष 2000 तक सभी सदस्य राज्यों द्वारा महिलाओं के विरुद्ध प्रत्येक प्रकार के भेदभाव को मिटाने के समझौते की विश्वव्यापी अभिपुष्टि।

(iii) नागरिक तथा राजनैतिक अधिकारों पर प्रतिज्ञापत्र तथा आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकारों पर प्रतिज्ञा पत्र की विश्वव्यापी अभिपुष्टि।

(iv) नागरिक तथा राजनैतिक अधिकारों से अविभाज्य तथा सम्बद्ध आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकारों का एकीकरण करते हुए मानवाधिकारों का एक सन्तुलित कार्यान्वयन होना चाहिए।

28. मानवाधिकारों तथा मानव अधिकार सन्धियों पर संयुक्त राष्ट्र आयोग तथा विभिन्न प्रतिज्ञा–पत्रों तथा समझौतों को मॉनीटर करने वाली सभाओं एवं गैर–सरकारी संगठनों की भागीदारी द्वारा मानवाधिकारों के कुशल कार्यान्वयन का सुदृढ़ीकरण।

29. महासभा ने मानवाधिकार हेतु संयुक्त राष्ट्र उच्चायुक्त के पद की स्थापना की। इस उच्चायुक्त को संगठन के एक प्रमुख अधिकारी के रूप में काम करना था जो कि तृतीय समिति (सामाजिक, लोकोपकारी, सांस्कृतिक) की रिपोर्ट पर आधारित 21 दिसम्बर, 1991 को अपनाये एक प्रस्ताव की शर्तों के अन्तर्गत संसार भर के मानवाधिकारों के उल्लंघन को समाप्त करने एवं मानवाधिकारों के सम्मान को सुरक्षित बनाने के लिए सभी सरकार के साथ बातचीत करने में एक सक्रिय भूमिका निभाता है। उच्चायुक्त का मार्गदर्शन उस अभिज्ञान द्वारा होगा जिसके अनुसार सभी मानवाधिकार (नागरिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सामाजिक) विश्व व्यापक अविभाज्य, एक–दूसरे पर निर्भर व सम्बन्धित हैं।

30. 4 मार्च, 1994 को संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग (UNICEF) ने जेनेवा में सर्वसम्मति द्वारा एक प्रस्ताव स्वीकार किया, जिसके अन्तर्गत आतंकवाद के सभी रूपों का खण्डन किया गया। **'मानवाधिकार और**

आतंकवाद' के अन्तर्गत आयोग ने 50वें अधिवेशन में प्रस्ताव पारित कर आतंकवादी गुटों द्वारा मानवाधिकारों के हनन पर चिन्ता व्यक्त की।

31. 15 अगस्त, 1995 को नई दिल्ली में जारी मानव विकास की रिपोर्ट में लिंग–भेद (Gender Bias) की समाप्ति की दिशा में कुछ सुझाव निम्नवत् दिये–

(i) स्त्रियों के विरुद्ध भेदभाव की समाप्ति तथा कानूनी समानता की वृद्धि हेतु एक ढाँचा निर्मित करना।

(ii) सर्वव्यापक स्त्री शिक्षा, उन्नत जनन, स्वास्थ्य तथा स्त्रियों हेतु अधिक वित्तीय लाभ हेतु मुख्य कार्यक्रमों का क्रियान्वयन। यह कार्यक्रम स्त्रियों को आर्थिक और राजनैतिक अवसरों तक समान रूप से अपनी पहुँच बनाने के योग्य एक निर्णायक परिवर्तन ला सकता है।

(iii) सभी लोगों में विशेषतः स्त्रियों को आर्थिक तथा राजनैतिक अवसरों तक और अधिक पहुँच प्राप्त करने के योग्य बनाने वाले कार्यों को लक्ष्य बनाने वाले राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रयत्नों को लागू करना।

32. सितम्बर, 1995 को चीन में बीजिंग में स्त्रियों का चौथा विश्व सम्मेलन आयोजित किया गया। यह विश्व भर के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समान अधिकारों के लिए महिला संघटन के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण दशक जाना जाता है। बीजिंग की घोषणा और कार्यवाही के लिए मंच को सर्वसम्मति द्वारा पारित किये जाने के पश्चात् सम्मेलन ने समाज के हित में स्त्रियों की प्रतिष्ठा को बढ़ावा देने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए एक विस्तृत योजना को स्वीकृति दी। इस घोषणा में सरकारें शान्ति आन्दोलन स्त्रियों द्वारा निभाई गयी प्रमुख भूमिका को मान्यता देती हैं, स्त्रियों तथा लड़कियों के विरुद्ध प्रत्येक प्रकार की हिंसा को मिटाने का आह्वान करती हैं तथा बालकों तथा बालिकाओं के समान रूप से मौलिक अधिकारों व मौलिक स्वतन्त्रताओं के उपभोग सुनिश्चित करने के यत्नों को तेज करने की शपथ लेती है।

33. 1995 से प्रारम्भ होने वाली संयुक्त राष्ट्र की मानवाधिकार शिक्षा 2 जून 1993 के मानवाधिकारों के संयुक्त राष्ट्र विश्व सम्मेलन में केन्द्रित थी। इस घोषणा को 171 देशों के प्रतिनिधियों तथा 7,000 भागीदारों ने स्वीकृति प्रदान की। मानवाधिकार विषयी इन घोषणाओं को निम्न प्रकार देखा जा सकता है–

(A) पैरा 78– मानवाधिकार पर विश्व सम्मेलन इस बात को समझता है कि मानवाधिकार प्रशिक्षण तथा सार्वजनिक समूह, समुदायों के मध्य स्थायी तथा मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की प्राप्ति है। इसके अतिरिक्त ये आपसी समझ, सहनशीलता एवं शान्ति में वृद्धि हेतु आवश्यक है।

(B) पैरा 79– राज्यों को चाहिए कि वे निरक्षरता मिटाने के लिए प्रयास करें एवं मानव के पूर्ण विकास तथा मानवाधिकारों एवं मौलिक स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान बढ़ाने के लिए दिशा–निर्देश दें। मानवाधिकारों पर विश्व सम्मेलन सभी राज्यों तथा संस्थाओं से इस बात की अपील करता है कि वे मानवाधिकार, लोकोपकारी कानून, लोकतन्त्र तथा कानून के शासन को औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षण संस्थानों में पाठ्यक्रमों के रूप में सम्मिलित करें।

(C) पैरा 80– अन्तर्राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय मानवाधिकार सम्बन्धी दस्तावेजों में दिखाया गया है कि मानवाधिकारों में शान्ति, लोकतन्त्र, विकास और सामाजिक न्याय को सम्मिलित करना चाहिए। इन अधिकारों के प्रति विश्वव्यापी वचनबद्धता को मजबूत करने की दृष्टि से सामान्य समझ तथा जागरूकता उत्पन्न की जानी चाहिए।

(D) पैरा 81– यूनेस्को (UNESCO) के मानवाधिकार एवं लोकतन्त्र के लिए शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन तथा अन्य मानवाधिकार सम्बन्धी दस्तावेजों द्वारा मार्च, 1993 को पारित अधिकार व लोकतन्त्र के लिए शिक्षा पर विश्व कार्यवाही को ध्यान में रखते हुए मानवाधिकार विश्व सम्मेलन सिफारिश करता है कि स्त्रियों की मानवाधिकार सम्बन्धी आवश्यकताओं का पूरा ध्यान रखते हुए राज्यों में विस्तृत मानवाधिकार शिक्षा तथा सार्वजनिक सूचना के प्रसार को सुनिश्चित करने के लिए विशेष कार्यक्रम तथा व्यूह रचनाओं का विकास किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 13– संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नागरिक तथा राजनैतिक अधिकारों से सम्बन्धित प्रतिज्ञा पत्र को कितने भागों एवं धाराओं में विभाजित किया गया है?

उत्तर– ....

प्रश्न 14– सर्वप्रथम मानवाधिकार दिवस किस वर्ष मनाया गया?

उत्तर– ....

1.4.3 मानवाधिकार तथा शिक्षा से सम्बन्धित संस्तुतियाँ (Human Rights and Education Related Recommendation)

मानवाधिकारों का प्रचार–प्रसार और जागरूकता तभी आयेगी जब शिक्षा उसके पूरक के रूप में उपस्थित होगी। अतः समय–समय पर मानवाधिकारों के लिए शिक्षा के सम्बन्ध में सुझाव तथा सिफारिशें प्रदान की गयीं जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं–

1. यूनेस्को का 18वाँ आम सम्मेलन (1974)
2. मानवाधिकारों एवं लोकतन्त्र की शिक्षा पर कार्यवाही की विश्व योजना (1993)
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीतियाँ
4. मानवाधिकारों की शिक्षा का संयुक्त राष्ट्र दशक (1995–2004)
5. यूनेस्को तथा मानवाधिकार शिक्षा।

1. यूनेस्को का 18वाँ आम सम्मेलन (1974)

पेरिस में 17 अक्टूबर से 23 नवम्बर, 1974 तक सम्पन्न हुए यूनेस्को के आम सम्मेलन के 18वें सत्र में शिक्षा पर की गयी संस्तुतियाँ निम्न प्रकार थीं–

1. **शिक्षा का अर्थ**– शिक्षा शब्द का अभिप्राय सामाजिक जीवन की उस समस्त प्रक्रिया से है जिसके माध्यम से व्यक्ति तथा सामाजिक गुट राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय गुटों के लाभ हेतु अपनी समूची व्यक्तिगत क्षमताओं, आचार–व्यवहारों, अभिव्यक्तियों, रुचियों व ज्ञान को विकसित करना सीखते हैं।
2. **मानवाधिकारों के प्रति सम्मान**– शिक्षा का उद्देश्य मानव व्यक्तित्व के अधिकतम (पूर्ण) विकास और मानवाधिकारों एवं मूल समस्याओं के प्रति सम्मान को पक्का करने की दिशा में रहेगा।
3. **मेल–मिलाप तथा मित्रता में वृद्धि**– शिक्षा सभी राष्ट्रों, जातीय या धार्मिक गुटों में मेल–मिलाप, सहनशीलता एवं मित्रता को बढ़ावा देगी और शान्ति बनाए रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों को आगे बढ़ाएगी।
4. **उद्देश्य**– मानवाधिकारों के लिए शिक्षा के उद्देश्य निम्न प्रकार हैं–

   (i) एक अन्तर्राष्ट्रीय आयाम– शिक्षा के क्षेत्र में सभी स्तरों पर एवं सभी रूपों में एक अन्तर्राष्ट्रीय आयाम तथा एक विश्व परिप्रेक्षण।

   (ii) सद्भावना तथा सम्मान की भावना– सभी लोगों, उनकी संस्कृतियों, सभ्यताओं, मूल्यों और जीवन पद्धतियों के प्रति सद्भावना और सम्मान। इसमें स्वदेशी अल्पसंख्यकों से जुड़ी संस्कृतियाँ और दूसरे राष्ट्रों की संस्कृतियाँ सम्मिलित हैं।

   (iii) जागरूकता– लोगों तथा राष्ट्रों के मध्य विश्व स्तर पर बढ़ती हुई परस्पर निर्भरता के प्रति जागरूकता।

(iv) **सम्प्रेषण सम्बन्धी योग्यताएँ**– दूसरों के साथ सम्प्रेषण की योग्यता का विकास करना।

(v) अन्तर्राष्ट्रीय एकता और सहयोग की आवश्यकता का ज्ञान, अन्तर्राष्ट्रीय एकता तथा सहयोग की आवश्यकता का विस्तार करना।

(vi) **समस्याओं के समाधान में भाग लेने की तत्परता**– व्यक्तियों की ओर से समुदाय, देश तथा विश्व की समस्याओं में भाग लेने की तत्परता का विकास करना।

5. **शान्ति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना बनाये रखना**– शिक्षा को चाहिए कि वह प्रत्येक व्यक्ति को शान्ति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना बनाये रखने तथा अपने दायित्व को समझने योग्य बनाये। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे कोई युद्ध का मार्ग न अपनाये या बल का प्रयोग न करे।

6. **शिक्षा का नैतिक तथा नागरिक पक्ष**– शिक्षा को इस प्रकार होना चाहिए कि–

   i. उन रवैयों तथा व्यवहार सम्बन्धी आदर्शों को विकसित करें जो राष्ट्रों की समानता और परस्पर निर्भरता को मान्यता देते हैं।

   ii. लोगों की वास्तविक रुचियों पर बल दें ताकि शोषण करने वाले एकाधिकार प्राप्त गुटों को पराजित किया जा सके।

   iii. विभिन्न देशों के मध्य आर्थिक तथा राजनैतिक तनाव उत्पन्न करने वाले कारकों का आलोचनात्मक विश्लेषण करें तथा उन पर नियंत्रण के उपाय बताए।

   iv. शिक्षण संस्थाओं में अध्ययन के गठन में विद्यार्थियों की भागीदारी को नागरिक शिक्षा के एक कारक के रूप में विचार करना।

7. **शिक्षा के सांस्कृतिक पक्ष**– अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना के विकास हेतु विभिन्न संस्कृतियों तथा उनके पारस्परिक प्रभावों के अध्ययन को प्रत्येक क्षेत्र तथा स्तर की शिक्षा पर बढ़ावा देना।

8. **मनुष्य जाति की समस्याओं का अध्ययन**– शिक्षा को अन्याय, असमानता, बल प्रयोग इत्यादि प्रमुख समस्याओं के समूल नाश की ओर लगाया जाना चाहिए, क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तथा सहयोग के मार्ग में बाधा उत्पन्न होती है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 15– यूनेस्को का 18 वाँ आम सम्मेलन किस वर्ष आयोजित हुआ था?

उत्तर– ....

प्रश्न 16– मानवाधिकारों की शिक्षा का संयुक्त राष्ट्र दशक कब मनाया गया?

उत्तर– ....

1.4.4 मानवाधिकारों एवं लोकतन्त्र की शिक्षा पर कार्यवाही की विश्व योजना (1993) (World Plan of Action of Human Rights and Democracy)

मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र के लिए शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन 8 से 11 मार्च, 1999 तक कनाडा में मॉंट्रियल में आहूत किया गया। मानवाधिकारों एवं लोकतन्त्र हेतु कार्यवाही की एक विस्तृत योजना पारित की गयी जिसकी विशेषताएँ निम्नवत हैं–

1. शिक्षा पर कार्यवाही।
2. उद्देश्य।
3. क्रियात्मक पक्ष

4. क्रियात्मक स्तर

1. **शिक्षा पर कार्यवाही**– शिक्षा पर कार्यवाही की विश्व योजना से सम्बन्धित मुख्य बिन्दु निम्नवत हैं–

   (i) मानवाधिकारों की शिक्षा के प्रति विशेष बल– मानवाधिकारों तथा स्वतन्त्रता को लागू करने के लिए लोकतांत्रिक मूल्यों की आवश्यकता होती है अतः मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की दिशा में विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

   (ii) मानवाधिकार– मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र हेतु शिक्षा अपने आप में ही एक मानवाधिकार है।

   (iii) मानवाधिकारों की गारण्टी– मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र हेतु शिक्षा मानवाधिकारों की गारण्टी का मजबूत आधार है। यह जागरूकता के साथ–साथ इनके हनन पर भी लगाम कसती है।

   (iv) लोकतांत्रिक शैक्षिक प्रक्रिया– शैक्षिक प्रक्रिया स्वयं में लोकतांत्रिक होनी चाहिए, क्योंकि इससे समानता पर आधारित सभ्य समाज का निर्माण होता है।

   (v) चुनौतियों का सामना करना– शिक्षा तथा मानवाधिकारों के क्षेत्र में तमाम प्रकार की चुनौतियाँ हैं। अतः इन चुनौतियों और त्रुटियों का सफलतापूर्वक सामना करने लिए विशेष प्रकार के प्रयास की आवश्यकता है। अतः मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र से सम्बन्धित शैक्षिक कार्यक्रम तथा गतिविधियों को प्रारम्भ तथा उन्हें प्रोत्साहित करने के कार्य सम्पन्न किये जाने चाहिए।

2. **उद्देश्य**– मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र के लिए शिक्षा पर कार्य की विश्व योजना उद्देश्यों के विषय में निम्नांकित उद्देश्यों का प्रस्तुतीकरण करती है–

   (i) सूचना उद्देश्य– सूचना उपलब्ध कराना, विशेष रूप से नवयुवकों को मानवाधिकारों के मापदण्डों तथा दस्तावेजों के विषय में तथा साथ–ही–साथ राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर अधिकारों के हनन के विरुद्ध सुरक्षा विधि को अपनाना चाहिए।

   (ii) विवेक उद्देश्य– व्यक्तियों को सहायता प्रदान करना जिससे वे अपनी आर्थिक स्थितियों तक अधिकारों की पहुँच से अवगत हो सकें।

   (iii) जागरूकता उद्देश्य–सभी क्षेत्रों में सहयोग के लिए, लोगों के सभी स्तरों पर अध्यापकों की जागरूकता को बढ़ाने तथा उनको मानवाधिकार शिक्षा का जाल स्थापित करने में सहायता प्रदान करना।

   (iv) प्रोत्साहन उद्देश्य– सरकारी तथा अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को उत्साहित करना जिससे मानवाधिकारों पर आधारित संस्कृति का विकास कर सकें।

   (v) गारण्टी उद्देश्य– मानवाधिकारों को गारण्टी प्रदान करने वाले राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेजों को और अधिक उपयोगी बनाना।

3. **क्रियात्मक पक्ष**– मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र के लिए शिक्षा को प्रभावशाली और विस्तृत विश्व स्तर का उद्देश्य बनाने हेतु निम्नांकित आवश्यकताओं पर बल दिया गया–

   (i) पहचान– सर्वाधिक उपयुक्त लक्ष्य समूहों की पहचान करना।

   (ii) ध्यान केन्द्रीकरण– जिन क्षेत्रों में इनकी अधिकतम आवश्यकता है वहाँ शैक्षिक सहायता केन्द्रित करना।

   (iii) प्रोत्साहन– लोगों को प्रेरित करने वाले तथा नवीन परिवर्तनकारी विधियों का उपयोग करने वाले प्रथम प्रयासों को प्रोत्साहन देना एवं विकसित करना।

   (iv) समानता– मानवाधिकार शिक्षा एवं प्रशिक्षण को लोकतन्त्र से जुड़ी एक क्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए और ऐसा समाज के सिद्धान्त के अनुपालन द्वारा ही किया जा सकता है।

(v) अनुसंधान– मानवाधिकारों और लोकतन्त्र के लिए शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान करना तथा विशेष रूप से वर्तमान परिवर्तनों पर बल देना।

(vi) पाठ्य पुस्तकों का संशोधन– पाठ्य पुस्तकों में इस हेतु संशोधन कर अनावश्यक सामग्री को हटाया जाना चाहिए।

(vi) सम्बन्ध स्थापित करना– व्यक्तियों, अध्यापको, गुटों तथा संस्थाओं के मध्य नेटवर्क पर व्यावहारिक सम्बन्धों की स्थापना करना।

(viii) स्रोतों में वृद्धि करना– गैर–सरकारी संगठनों के उपयोगी कारणों को निरुत्साहित किये बिना क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र हेतु संसाधनों की पहचान तथा वृद्धि करना।

(ix) विशेष ध्यान– कम लागत वाले तथा अधिक समय तक स्थित रहने वाले शैक्षिक कार्यक्रमों की रचना पर बल।

(x) वचनबद्धता– मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र हेतु शिक्षा के संसाधनों को बढ़ाने एवं इसी उद्देश्य हेतु विकास प्रोजेक्ट में फण्ड सुरक्षित रखने के लिए विश्वस्तरीय वचनबद्धता।

4. क्रियात्मक स्तर– कार्यवाही हेतु निम्नांकित क्रियात्मक स्तरों पर बल दिया जाना चाहिए–

(i) शिक्षा के सभी स्तरों पर मानवाधिकार तथा लोकतन्त्र की शिक्षा को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाना– एक सम्पूर्ण एवं विद्यालय स्तर का पाठ्यक्रम निर्मित किया जाये। तात्पर्य यह है कि पृथक विद्यालयी विषय के तौर पर मानवाधिकारों को स्थान दिया जाना चाहिए, जिससे मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र की शिक्षा को व्यक्तियों की बेसिक शिक्षा में निरन्तर दोहराया जा सके। अधिकार, दायित्वों तथा लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को भी अध्ययन के लगभग सभी प्रमुख विषयों को अपनाया जाना चाहिए तथा इनको उन मूल्यों में सम्मिलित करना चाहिए जो कि विद्यालयी जीवन तथा सामाजिकता की प्रक्रिया के उद्देश्य हैं। इस हेतु निम्नांकित पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए–

(a) पूर्व प्राथमिक

(b) प्राथमिक

(c) माध्यमिक तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण,

(d) महाविद्यालयी और विश्वविद्यालयी प्रशिक्षण,

(e) अध्यापक प्रशिक्षण,

(f) अध्यापक संगठन,

(g) विद्यालयी बोर्ड तथा शिक्षा प्रबन्ध के अन्य स्तर, तथा

(h) अभिभावक संघ

(ii) अनौपचारिक रूप से मानवाधिकारों की शिक्षा– इसके अन्तर्गत ऐसे वयस्कों के नवयुवकों को सम्मिलित करना जो औपचारिक शिक्षा ग्रहण नहीं कर रहे हैं। अनौपचारिक स्थिति में प्रदान की जाने वाली मानवाधिकारों की शिक्षा निम्नांकित बिन्दुओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करेगी–

(a) कार्य–स्थल।

(b) व्यावसायिक संगठन

(c) धार्मिक तथा सांस्कृतिक संगठन

(d) युवा वर्ग तथा खेल–क्लब

(e) यूनेस्को क्लब केन्द्र तथा संगठन

(f) ऐसे व्यक्ति जो दूरदराज तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं।

(g) ऐसे वर्ग जो विशेष रूप से साक्षरता की वकालत पर कार्य करते हैं और अत्यन्त गरीबी में रहने वालों की सहायता करते हैं।

(h) जन अधिकारी तथा निर्णय निर्माता।

(i) चिकित्सा अधिकारी।

(j) चिकित्सा डॉक्टर, स्वास्थ्य व्यावसायिक तथा वैज्ञानिक, जिनमें जीव विज्ञान विषयी अनुसंधान में लगे व्यक्ति भी सम्मिलित हैं।

(k) न्यायाधीश, वकील तथा न्यायिक कार्य में संलग्न आदि व्यक्ति।

(iii) विशेष सन्दर्भों तथा परिस्थितियों में मानवाधिकार शिक्षा– कुछ परिस्थितियों में जहाँ लोगों के अधिकारों की सुरक्षा की कोई व्यवस्था नहीं है वहाँ मानवाधिकार शिक्षा ऐसे विशेष सन्दर्भ में निम्नांकित उद्देश्यों से परिपूर्ण होगी–

(a) उपयुक्त सूचना प्रदान करना।

(b) उपयुक्त शिक्षा प्रदान करना।

(c) मानवाधिकारों की प्राप्ति हेतु जाग्रत कराना।

ये विशेष सन्दर्भ तथा परिस्थितियाँ निम्नलिखित हो सकती हैं–

(a) दैवीय आपदाएँ।

(b) विदेशी धन्धे ।

(c) आन्तरिक तनाव, बेचैनी तथा संकटावस्था।

(d) अन्तर्राष्ट्रीय या गैर–अन्तर्राष्ट्रीय सशस्त्र संघर्ष।

(e) तानाशाही से लोकतन्त्र का संक्रमण काल।

(f) लोकतन्त्र में बच्चे, स्त्रियाँ तथा अल्पसंख्यक।

(g) प्रवासी।

(h) विकलांग कर्मचारी।

(i) एच. आई. वी. संक्रमित व्यक्ति।

(j) राजनैतिक बन्दी ।

(k) शरणार्थी तथा आन्तरिक रूप से विस्थापित व्यक्ति।

(l) देशी व्यक्ति।

(iv) अनुसंधान सूचना तथा प्रलेखन (Documents)– अनुसंधान, सूचना प्रलेखन कार्यवाही योजना का क्रियान्वयन करने, मानवाधिकारों हेतु संयुक्त राष्ट्र सूचना अभियान की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। सूचनाओं और प्रलेखन के एकत्रीकरण के समय निम्नांकित विषयों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए–

(a) सूचनाओं तक पहुँच सुगम और कम व्यय साध्य हो।

(b) कम्प्यूटरीकरण तथा खोज पद्धतियाँ सरल हो।

(c) क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्रों की मानवाधिकार सूचना हेतु पहचान करना, उत्पन्न करना तथा शक्तिशाली बनाना।

(d) तथ्य की खोज करने वाले शिष्ट–मण्डल तथा मानवाधिकार शिक्षा केन्द्रों इत्यादि के द्वारा एकत्रित सूचना को पर्याप्त संरक्षण तथा सुरक्षा प्रदान करना।

(e) शिक्षाशास्त्रियों, मानवाधिकार दस्तावेजों के निर्माताओं तथा सूचना क्षेत्र में सक्रिय गैर–सरकारी संगठनों में एकत्रित सूचना में भागीदारी को बढ़ावा देना।

(f) मानवाधिकार विकास, लोकतन्त्र तथा पर्यावरण के मध्य पारस्परिक निर्भरता को ध्यान में रखते हुए मानवाधिकारों के विश्व दृष्टिकोण पर आधारित अनुसंधान हेतु समर्थन जुटाना।

(g) मुद्रित सामग्री के अतिरिक्त मानवाधिकार जनसंचार साधनों को पर्याप्त रूप में विकसित करना, जिसमें श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री पारदर्शी चित्र, संगीत, खेल–खिलौनों के अतिरिक्त अन्य ऐसी किस्में भी सम्मिलित होंगी जो कि अशिक्षित लोगों तथा बच्चों पर अनुकूल प्रभाव डालती हो।

बोध प्रश्न

प्रश्न 17– मानवाधिकारों एवं लोकतन्त्र की शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन कब और कहाँ किया गया था?

उत्तर– ....

प्रश्न 18– मानवाधिकारों एवं लोकतन्त्र हेतु कार्यवाही की विस्तृत योजना की कोई दो विशेषताएँ बताइये।

उत्तर– ....

1.4.5 मानवाधिकारों की शिक्षा का संयुक्त राष्ट्र दशक (1995–2004) (United Nations Decade for Education of Human Rights)

संयुक्त राष्ट्र ने 23 दिसम्बर, 1994 के अपने प्रस्ताव संख्या 49184 में दशक 1995–2004 को मानवाधिकारों की शिक्षा का संयुक्त राष्ट्र दशक घोषित किया ताकि मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा (1948) के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के प्रयासों को मजबूत बनाया जा सके। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु संसार भर में सेमीनार, वर्कशॉप अनुसंधान विषयी योजनाओं का आयोजन किया गया। इस दशक के उद्देश्य निम्न प्रकार थे–

1. **आवश्यकताओं तथा आकलन एवं मानवाधिकार शिक्षा को आगे ले जाने हेतु प्रभावी व्यूह रचनाओं का निर्माण**– सभी स्तरों की शिक्षा व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा औपचारिक एवं अनौपचारिक अधिगम में आवश्यकताओं का आकलन किया जायेगा एवं मानवाधिकारों सम्बन्धी शिक्षा को आगे ले जाने की प्रभावी व्यूह रचनाओं का निर्माण किया जाएगा।
2. **विश्व स्तरीय फैलाव**– मानवाधिकारों सम्बन्धी विश्वव्यापी घोषणा–पत्र का विश्वस्तरीय प्रसार अधिकतम भाषाओं तथा साक्षरता के विभिन्न स्तरों पर किया जाना चाहिए।
3. **कार्यक्रम तथा क्षमताओं का निर्माण तथा सुदृढ़ीकरण**– अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय तथा स्थानीय स्तरों पर मानवाधिकार सम्बन्धी विषयी शिक्षा हेतु कार्यक्रमों एवं क्षमताओं का निर्माण तथा सुदृढ़ीकरण किया जायेगा।

1.4.6 यूनेस्को तथा मानवाधिकार शिक्षा

यूनेस्को द्वारा मानवाधिकार की शिक्षा हेतु निम्नांकित गतिविधियों का आयोजन किया गया और किया जा

रहा है–

1. **सहयोगी विद्यालय योजना**– 1953 में यूनेस्को (UNESCO) द्वारा सहयोगी विद्यालय का आरम्भ किया गया जिसको 100 से भी अधिक देशों में कई विद्यालयों में लागू किया गया है।
2. **पुरस्कार**– यूनेस्को द्वारा मानवाधिकार सम्बन्धी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए पुरस्कार प्रदान करने की योजना प्रारम्भ की गयी और मानवाधिकारों की शिक्षा के लिए यह पुरस्कार मानवाधिकार आयोग को दिया गया।
3. **मानवाधिकार शिक्षा हेतु यूनेस्को पद (1992)**–26 अक्टूबर, 1992 को ब्राटिसलावा की विश्वविद्यालय में यूनेस्को ने अनौपचारिक मानवाधिकार शिक्षा के लिए एक पद की संस्तुति की। विश्वविद्यालय में पढ़ाये जाने वाले पाठ्यक्रम दो सेमेस्टर में विभाजित हैं– मानवाधिकारों की उत्पत्ति और महत्व।
4. **अन्तः सांस्कृतिक शिक्षण कार्यक्रम**– यूनेस्को द्वारा अन्त सांस्कृतिक शिक्षा को बढ़ावा प्रदान किया जा रहा है। इसके द्वारा अध्यापकों के प्रशिक्षण हेतु उपयोगी सामग्री का प्रकाशन भी किया जा रहा है।

इस प्रकार मानवाधिकार शिक्षा का विकास भारत में भूमण्डलीकरण और उदारीकरण की नीति के परिणामस्वरूप तीव्र गति से हो रहा है। संविधान की धारा 14, 15 (1), 15 (2), 15 (3), 16 (2), 16 (3), 39, 42, 44, 51, 51(म) के द्वारा महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के साथ–साथ समानता हेतु प्रावधान किये गये है। स्त्रियों की सुरक्षा और अस्तित्व की रक्षा हेतु कुछ पूर्ण एक्ट निम्न प्रकार हैं–

1. प्रोटेक्शन अण्डर द इमोरल ट्रैफिक (प्रीवेंशन) एक्ट, 1956 (Protection under the Immoral Traffic (Prevention) Act, 1956)
2. द डावरी प्रोहिबिसन एक्ट, 1961 (The Dowry Prohibition Act, 1961)
3. मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेग्नेंसी एक्ट, 1971 (Medical Termination of Pregnency Act, 1971)
4. द इन्सीडेंट रीप्रेजेंटेशन ऑफ वूमेन एक्ट, 1986 (The Incident Representation of Women Act, 1986)
5. कमीशन ऑफ सती (प्रीवेंशन) एक्ट, 1987 Commission of Satti (Prevention) Act, 1987)
6. नेशनल कमीशन फॉर वूमेन एक्ट, 1990 (National Commission for Women Act, 1990)
7. प्रोटेक्शन ऑफ ह्यूमन राइट्स एक्ट, 1993 (Protection of Human Rights Act, 1993)
8. द प्रोटेक्शन ऑफ वूमेन फ्रॉम डोमेस्टिक वायलेंस एक्ट, 2005 (The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005)
9. प्रोटेक्शन अगेन्स्ट सेक्सुअल हेरेसमेंट ऑफ वूमेन बिल, 2009 (Protection Against Sexual Harassment of Women Bill, 2009)

मानवाधिकार आयोग निरन्तर गरीबों, अशिक्षित, असमानता के शिकार चाहे वह जाति, लिंग इत्यादि पर आधारित हो, का हित कर रहा है। प्रोटेक्शन ऑफ ह्यूमन राइट्स एक्ट, 1993 के द्वारा स्वतन्त्रता, समानता, अस्तित्व की रक्षा हेतु नियम बनाए गये हैं। इनको प्रभावी रूप से लागू किया जाना चाहिए। मानवाधिकारों के ही समान आज कार्य हेतु समान वेतन, सबकी सार्वभौमिक शिक्षा बिना किसी भेदभाव के सबको समान अधिकार तथा अवसरों की समानता प्रदान की गयी है। भारत ने मानवाधिकारों हेतु स्वतन्त्रता के लिए लम्बा संघर्ष किया और दासता का दंश झेलते हुए मानवाधिकारों के महत्व के विषय में भली प्रकार समझा कि इसका क्या महत्त्व है? स्वतन्त्रता के पश्चात् संविधान निर्माताओं ने देश में व्याप्त असमानता, चाहे वह आर्थिक, सामाजिक क्षेत्रीय भाषायी, लिंगीय, सांस्कृतिक तथा धार्मिक रही हो, उसे समाप्त कर सबको आगे बढ़ने, गरिमामयी जीवन व्यतीत करने के लिए संवैधानिक अधिकार प्रदान किए जाने के कारण आज अमीर–गरीब के बीच खाई पट रही है। शिक्षा का प्रसार हो रहा है, स्त्रियाँ पर्दे की ओट से बाहर निकलकर अपने अधिकार और अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही हैं। जाति का दुष्चक्र धीरे–धीरे कम हो रहा है। भारत की लम्बे समय तक गुलामी का एक कारण विविध स्तरों पर व्याप्त असमानता और

शोषण भी था, जिसने भारतीय समाज में असन्तोष भर दिया। ऐसे में मानवाधिकारों के द्वारा लम्बे समय से असमानता और शोषण के शिकार वंचित वर्गों को आगे आने के लिए अवसर प्रदान किये जा रहे हैं और स्वतन्त्रता के पश्चात् किये गये भागीरथ प्रयासों के परिणाम आज हम देख सकते हैं। गरीबी, अशिक्षा, जाति तथा लिंगीय भेदभाव समाप्त तो नहीं किये जा सके हैं, परन्तु आज जो स्थिति है उसे देखकर हम निश्चित ही स्वर्णिम भविष्य का अनुमान लगा सकते हैं।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 19– यूनेस्को द्वारा मानवाधिकार की शिक्षा के अन्तर्गत सहयोगी विद्यालय योजना कब शुरू की गई?

उत्तर– ....

....

प्रश्न 20– नेशनल कमीशन फॉर वुमेन एक्ट किस वर्ष आया?

उत्तर– ....

....

1.5 मानव अधिकार आधारित उपागम के सिद्धान्त (Principles of Human Right Based Approach)

मानवाधिकार सार्वभौमिक, अविभाज्य, अन्योन्याश्रित तथा अविच्छेद है। ये सार्वभौमिक है, क्योंकि हर कोई एक ही अधिकार के साथ पैदा हुआ है। यह अधिकार हमेशा उस व्यक्ति के पास रहता है, चाहे वह जहाँ भी रहे, चाहे वह किसी भी जाति, लिंग, नस्ल का हो अथवा वो किसी भी धार्मिक या सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का हो। यह अविच्छेद है क्योंकि किसी व्यक्ति के अधिकारों को कभी भी छीना नहीं जा सकता है। यह अविभाज्य एवं अन्योन्याश्रित है क्योंकि सभी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा नागरिक अधिकार समान महत्व के हैं और सभी एक दूसरे के बिना पूर्ण नहीं हैं। वे सभी पर समान रूप से लागू होते हैं। सभी व्यक्तियों को अपने जीवन को प्रभावित करने वाले निर्णयों में भाग लेने का अधिकार है। इन्हें कानूनी नियमों द्वारा बरकरार रखा गया है और कर्तव्य–निर्धारकों के लिये वैध दावों के माध्यम से मजबूत करके अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के प्रति जवाबदेह बनाया जा रहा है। मानवाधिकार के सिद्धान्त निम्नलिखित हैं–

सार्वभौमिकता तथा असंक्राम्यता :–मानव अधिकार सार्वभौमिक और अविभेदीय हैं। विश्व में हर स्थान के सभी लोग इसके हकदार हैं। मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनुच्छेद 1 के शब्दों में मानव अधिकारों की सार्वभौमिकता को इस प्रकार समाहित किया गया है : ''सभी मनुष्य सम्मान और अधिकारों में स्वतंत्र और समान पैदा होते हैं।''

अविभाज्यता :– मानव अधिकार अविभाज्य है, चाहे वे नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक अथवा सांस्कृतिक मुद्दों से सम्बन्धित क्यों न हों। मानव अधिकार प्रत्येक मानव की गरिमा में अन्तर्निहित हैं। जिसके कारण सभी मानव अधिकारों को समान दर्जा प्राप्त है। इन्हें एक पदानुक्रमित क्रम में व्यवस्थित नहीं किया जा सकता है। किसी एक अधिकार से वंचित करना, अन्य अधिकारों के भोग को अनिवार्य रूप से बाधित करता है। इस प्रकार पर्याप्त जीवन स्तर के लिए हर किसी के अधिकारों को अन्य अधिकारों की कीमत पर समझौता नहीं किया जा सकता है, जैसे स्वास्थ्य का अधिकार अथवा शिक्षा का अधिकार।

अन्योन्याश्रितता तथा पारस्परिक सम्बन्ध :– मानवाधिकार अन्योन्याश्रित तथा परस्पर सम्बन्धित होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी विकासात्मक, भौतिक, मनोवैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति सन्तुष्टि के माध्यम से किसी व्यक्ति की मानवीय गरिमा की प्राप्ति में योगदान देता है। एक अधिकार की पूर्ति प्रायः दूसरों की पूर्ति पर, पूर्ण या आंशिक रूप से निर्भर करती है। उदाहरण के लिए स्वास्थ्य के अधिकार की पूर्ति कुछ परिस्थितियों में विकास के अधिकार की पूर्ति पर, शिक्षा के अधिकार की पूर्ति पर अथवा सूचना के अधिकार की पूर्ति पर निर्भर हो सकती है।

समानता तथा गैर–भेद–भाव :– प्रत्येक व्यक्ति एक मनुष्य तथा मनुष्य में अन्तर्निहित गरिमा के आधार पर एक समान है। अतः किसी के साथ भी रंग, रूप, आयु, भाषा, यौन अभिविन्यास अथवा लिंग, धर्म, नस्ल या जातीयता के आधार पर या फिर राजनीतिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा भौगोलिक उत्पत्ति के आधार पर और न ही विकलांगता, संपत्ति, जन्म या किसी अन्य स्थिति के आधार पर भेदभाव नहीं करना चाहिये।

भागीदारी और समावेशन :– सभी व्यक्तियों को निर्णय लेने की प्रक्रियाओं से सम्बन्धित जानकारी तक पहुँचने का अधिकार है, जो उनके जीवन को प्रभावित करते हैं। अधिकारों पर आधारित समुदायों को, नागरिक समाज, अल्पसंख्यको, महिलाओं, युवाओं, स्वदेशी लोगों और अन्य समूहों द्वारा भागीदारी की अधिकतम आवश्यकता होती है।

जवाबदेही और कानून के नियम :– सभी राज्य तथा अन्य कर्तव्य–अधिकारी मानवाधिकारों के पालन के लिये जवाबदेह हैं। इस सम्बन्ध में उन्हें अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरणों में निहित कानूनी मानदंडों और मानकों का पालन करना होगा। यदि वे ऐसा करने में असफल होते हैं, तो वहाँ के अधिकार–धारक या कानून द्वारा प्रदत्त नियमों तथा प्रक्रियाओं के अनुसार उपयुक्त न्यायालय के समक्ष समुचित निवारण के लिए अधिकार–धारक संस्थान की उचित कार्यवाही के हकदार होंगे। व्यक्तियों, मीडिया, नागरिक समाज तथा अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने मानवाधिकारों को बनाए रखने के अपने दायित्व के लिये सरकारों को जिम्मेदार ठहराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

1.6 मानव अधिकार आधारित उपागम के लाभ (Advantages of Human Right Based Approach)

मानवाधिकारों की आवश्यकता तथा महत्त्व क्या–क्या है, यह जानना अत्यावश्यक है, क्योंकि इन्हीं के द्वारा सभी व्यक्तियों के अधिकार और विकल्पों को सुनिश्चित किया जा सकता है। मानवाधिकारों का महत्त्व तथा आवश्यकता निम्नांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत वर्णित है–

1. मानवता के उत्थान हेतु,
2. प्रजातांत्रिक स्थापना हेतु,
3. सर्वांगीण विकास हेतु,
4. विश्व–शान्ति हेतु,
5. समानता हेतु,
6. आर्थिक उन्नति हेतु,
7. शोषण से मुक्ति हेतु,
8. गरीबी, अशिक्षा, जाति तथा लिंगादि भेदभावों में कमी हेतु

1. **मानवता के उत्थान हेतु**– मानवता के उत्थान के लिए मानवाधिकारों का महत्त्व अत्यधिक है क्योंकि यदि सभी मनुष्यों को समान अधिकार नहीं प्राप्त होंगे तब वे एक–दूसरे के प्रति समान व्यवहार क्यों करेंगे। इस प्रकार असमानता तथा भेदभाव का उदय होगा जिससे सहयोग, प्रेम, सहानुभूति व भ्रातृत्व इत्यादि मानवीय मूल्यों का ह्रास होगा। अतः मानवाधिकारों की आवश्यकता मानवता के उत्थान की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।
2. **प्रजातांत्रिक स्थापना हेतु**– प्रजातंत्र में सभी को समान महत्त्व व आत्म–विकास के अवसर दिये जाते हैं। प्रजातंत्र की स्थापना तभी हो सकती है जब सभी व्यक्तियों को समान अधिकार दिये जायें। अतः प्रजातांत्रिक की स्थापना के लिए मानवाधिकारों का महत्त्व अत्यधिक है।
3. **सर्वांगीण विकास हेतु**– किसी भी व्यक्ति का सर्वांगीण विकास तभी हो सकता है जब उसे अभिव्यक्ति, विचार इत्यादि प्रकट करने की स्वतन्त्रता हो और यह अवसर व्यक्ति को मानवाधिकार द्वारा ही प्राप्त होता है। अतः हम कह सकते हैं कि किसी भी व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आर्थिक तथा आध्यात्मिक विकास हेतु मानवाधिकार अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

4. **विश्व–शान्ति हेतु**– विश्व शान्ति की स्थापना में मानवाधिकारों की भूमिका अत्यधिक उल्लेखनीय है क्योंकि विश्व–शान्ति को खतरा इसलिए है कि मनुष्यों के मध्य तमाम प्रकार की असमानताएँ विद्यमान हैं और इन असमानताओं और अपनी श्रेष्ठता के कारण एक व्यक्ति दूसरे पर या एक राष्ट्र, दूसरे राष्ट्र पर अधिकार जमाना चाहता है और आज तो परमाणु हथियारों की नोंक पर परस्पर राष्ट्र है। अतः ऐसी परिस्थितियों में विश्व शान्ति की स्थापना हेतु मानवाधिकारों की आवश्यकता तथा महत्त्व में और भी वृद्धि हो जाती है।

5. **समानता हेतु**– मानवाधिकार मनुष्य को मनुष्य ही समझते हैं, न कि स्त्री या पुरुष, न कि अमीर या गरीब, न कि अगड़ा या पिछड़ा अपितु जो हाशिये पर रखे हुए समूह हैं, मानवाधिकार उनके लिए और भी अधिक तत्पर दिखते हैं जिससे उन्हें भी सबकी समानता के समकक्ष खड़ा किया जा सके। मानवाधिकारों की आवश्यकता तथा महत्त्व समतामूलक विश्व की स्थापना हेतु अत्यधिक है।

6. **आर्थिक उन्नति हेतु**– आर्थिक उन्नति के लिए मानवाधिकार अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि यदि सभी व्यक्तियों को आर्थिक क्रियाकलापों और गतिविधियों में संचालन की छूट होगी तो उनका व्यक्तिगत, आर्थिक विकास तो होगा ही, साथ ही देश की राष्ट्रीय तथा विश्व स्तर पर आर्थिक उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त होगा। अतः आर्थिक उन्नति के मार्ग के प्रशस्तीकरण हेतु मानवाधिकार महत्त्वपूर्ण हैं।

7. **शोषण से मुक्ति हेतु**– समाज में राजशाही, सामन्तशाही इत्यादि के कारण एक वर्ग शोषित और एक वर्ग शोषण करने वाला रहा है। शोषित वर्ग को अधिकार नहीं प्रदान किये जाते थे उनको जिस प्रकार चाहे शोषणकर्ता अपने हितों के लिए उपयोग करता था, परन्तु मानवाधिकारों की दृष्टि में न कोई शोषित है और न शोषणकर्ता होगा। अतः वर्षों से चली आ रही शोषण की प्रवृत्ति की समाप्ति की दृष्टि से मानवाधिकार अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

8. **गरीबी, अशिक्षा, जाति तथा लिंगादि भेदभावों की कमी हेतु**– अमीर–गरीब, शिक्षित–अशिक्षित, जाति के आधार पर किया जाने वाला ऊँच–नीच का भाव, स्त्री–पुरुष में भेदभाव, ये आज से नहीं अपितु वर्षों से चला आ रहा है, परन्तु मानवाधिकार इस प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने के लिए आवाज बुलन्द कर रहे हैं, जिससे लोगों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता आ रही है। इस प्रकार गरीबी, अशिक्षा, जाति तथा लिंगीय भेदभावों के समापन की दृष्टि से मानवाधिकार अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 21– मानवाधिकार आधारित उपागमों के दो लाभ बताइये।

उत्तर– ....

प्रश्न 22– क्या गरीबी, अशिक्षा, जाति तथा लिंगात्मक नेदभावों की कमी हेतु मानवाधिकार आधारित उपागम उपयोगी हैं?

उत्तर– ....

1.7 इकाई सारांश

मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण सभी संयुक्त राष्ट्र एजेंसियों के मानवाधिकार जनादेश के अनुरूप है। मौलिक मानवाधिकारों तथा स्वतंत्रताओं की प्राप्ति की प्रक्रिया के रूप में विकास के विचारों पर आधारित होता है। यह गरीबी को वस्तुओं और सेवाओं की कमी के बजाय शक्तिहीनता के सवाल के रूप में समझता है तथा इसके परिणामस्वरूप गरीबी के विश्लेषण में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक आयाम की आवश्यकता को पहचानता है। इस दृष्टिकोण में कार्यक्रमों के प्रभाव और प्रक्रिया का आँकलन करना भी शामिल है; जिसके द्वारा वे विकसित तथा क्रियान्वित किए जाते हैं। मानवाधिकार के सिद्धान्त सार्वभौमिक, असंक्राम्य, अविभाज्य, अन्योन्याश्रित व पारस्परिक से सम्बन्धित है। मानवाधिकार समानता, गैर भेद–भाव, भागीदारी, समावेशन, जवाबदेही तथा कानून के नियमों के सिद्धान्तों पर भी आधारित है। इन्हें कानूनी नियमों द्वारा बरकरार रखते हुए, वैध दावों के माध्यम से मजबूत करके अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के प्रति जवाबदेह बनाया जा रहा है। मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण अपनाने से मानवता का उत्थान होगा, प्रजातन्त्र की स्थापना होगी। इससे सर्वागीण विकास होगा। समाज को शोषण, गरीबी

अशिक्षा से मुक्ति मिलेगी। समाज में भेद–भाव में कमी के साथ ही समानता की भावना का विकास होगा, जिससे विश्व शान्ति का प्रसार होगा।

1.8 बोध प्रश्न के उत्तर

1. 'मानव अधिकार' पद की उत्पत्ति द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय चार्टरों और अभिसमयों से हुई।
2. मानवाधिकार एवं सतत विकास दोनों ही मानव अधिकार विकास की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
3. मानव अधिकार पद का प्रयोग सर्वप्रथम अमरीकन राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने जनवरी 16, 1941 में कांग्रेस को सम्बोधित अपने प्रसिद्ध संदेश में किया था।
4. मानव अधिकारों का लिखित प्रयोग संयुक्त राष्ट्र चार्टर में पाया जाता है।
5. मानवाधिकारों की सर्वव्यापी घोषणा पत्र की दो विशेषताएँ निम्नवत् हैं–
   (a) सर्वव्यापी
   (a) व्यक्ति केन्द्रितता
6. नहीं, मानवाधिकारों को न्यायिक रूप प्राप्त नहीं है।
7. मानवाधिकारों का वर्गीकरण हम निम्नलिखित दो प्रकार से कर सकते हैं–
   (a) प्रथम वर्गीकरण– नागरिक एवं राजनैतिक अधिकार।
   (b) द्वितीय वर्गीकरण– आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकार।
8. चार्टर की धारा 26 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।
9. कॉमनवेल्थ देशों की सरकारों के द्वारा सिंगापुर घोषणा जनवरी, 1971 किया गया था।
10. लुसाका की बैठक में दक्षिण अफ्रीका में 'रंगभेद (Apartheid)' व्यवहार की तरफ ध्यान दिया।
11. संयुक्त राष्ट्र संघ में मानवाधिकारों की सूची तैयार करने वाले आयोग में मूल रूप से सदस्यों की संख्या 18 थी।
12. मानवाधिकार दिवस 10 दिसम्बर मनाया जाता है।
13. नागरिक तथा राजनैतिक अधिकारों से सम्बन्धित प्रतिज्ञा पत्र को पाँच भागों तथा 45 धाराओं में विभक्त किया गया है।
14. 10 दिसम्बर, 1993 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानवाधिकार दिवस सर्वप्रथम मनाया गया।
15. यूनेस्को का 18 वाँ आम सम्मेलन 1974 वर्ष आयोजित हुआ था।
16. मानवाधिकारों की शिक्षा का संयुक्त राष्ट्र दशक 1995–2004 तक मनाया गया।
17. मानवाधिकारों तथा लोकतन्त्र के लिए शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन 8 से 11 मार्च, 1999 तक कनाडा में मॉन्ट्रियल नामक स्थान पर आहूत किया गया।
18. मानवाधिकारों एवं लोकतन्त्र हेतु कार्यवाही की एक विस्तृत योजना पारित की गयी जिसकी दो विशेषताएँ निम्नवत हैं–
   (a) शिक्षा पर कार्यवाही
   (b) उद्देश्य

19. 1953 में यूनेस्को (UNESCO) द्वारा सहयोगी विद्यालय का आरम्भ किया गया।

20. नेशनल कमीशन फॉर वुमेन एक्ट 1990 में आया।

21. मानवाधिकार आधारित उपागमों के दो लाभ निम्नवत हैं–

    (a) मानवता के उत्थान हेतु

    (b) प्रजातांत्रिक स्थापना हेतु

22. हाँ, गरीबी, अशिक्षा, जाति तथा लिंगात्मक नेदभावों की कमी हेतु मानवाधिकार आधारित उपागम उपयोगी हैं।

1.9 अभ्यास कार्य

प्र”न 01–मानव अधिकार आधारित दृष्टिकोण का अर्थ स्पष्ट कीजिए ।

प्र”न 02–मानवाधिकार के सिद्धान्तों की सूची बनाइये।

प्र”न 03–आपके अनुसार मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण अपनाने से क्या लाभ होंगे?

प्र”न 04–मानवाधिकार के इतिहास के मुख्य बिन्दुओं को बताइये।

1.10 चर्चा के बिन्दु

प्र”न 01–भारत में मानवाधिकारों की स्थिति तथा मानवाधिकार आयोग के सामने मौजूदा चुनौतियों पर चर्चा कीजिये।

1.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- उपाध्याय, जे. जे. आर. (2019). मानव अधिकार. सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
- Anand, S. (2016). Book review: Asha Hans, Disability, Gender and the Trajectories of Power. *Indian Journal of Gender Studies*, *23*(3), 485–488. https://doi.org/10.1177/0971521516656084
- Bonnie, G., S., & Hutchison, B. (2004). *Gendering Disability*. New Brunswick, New Jersey, and London: Rutgers University Press. https://dsq-sds.org/index.php/dsq/article/view/561/738
- Fantasies of Identification: Disability, gender, race on JSTOR. (2014). *www.jstor.org*. https://www.jstor.org/stable/j.ctt9qfj7x
- SAMUELES, E. (2014). *Fantasies of Identification: Disability, Gender, Race*. NYU Press. https://nyupress.org/9781479859498/fantasies-of-identification

इकाई–2

मानवाधिकार प्रणाली के तत्व : विधिक संरचना, संस्थाएँ, विकासात्मक नीतियाँ तथा कार्यक्रम, जन जागरुकता, नागरिक समाज

(Elements of Human Rights System : Legal Framework, Institutions, Development Policies & Programmes, Public Awareness, Civil society)

इकाई संरचना

2.1 परिचय

2.2 इकाई के उद्देश्य

2.3 क्या मानव अधिकार एक विधिक अधिकार है?

2.4 मानव अधिकार की विधिक संरचना

2.5 मानवाधिकार संरक्षण के लिए मानवाधिकार संस्थाएँ

2.6 मानवाधिकार के विकास के लिये नीतियाँ तथा कार्यक्रम

2.7 मानवाधिकार के प्रति जन जागरूकता

2.8 नागरिक समाज

2.9 इकाई सारांश

2.10 बोध प्रश्न के उत्तर

2.11 अभ्यास कार्य

2.12 चर्चा के बिन्दु

2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 परिचय

मानवाधिकार के दायित्व वे हैं, जो राज्यों ने सन्धियों पर हस्ताक्षर करके किए हैं, जो तब राष्ट्रीय सांसदों द्वारा पुष्टि की जाती है और राज्य के अभ्यास को बदलने के माध्यम से लागू होती हैं। सन् 1948 में मानव अधिकारों पर सार्वभौमिक घोषणा मानव अधिकारों की सबसे व्यापक रूप से स्वीकृत परिभाषा है, जिसमें नागरिक और राजनीतिक और साथ ही आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार शामिल हैं। ये सभी सार्वभौमिकता और अविभाज्यता के सिद्धान्तों को मानते हैं। इनके सिद्धान्तों को बाद में अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरणों की एक श्रेणी में विकसित किया गया है, जिनमें से कुछ को अधिकांश राज्यों द्वारा स्वीकार किया गया है। ये उपकरण महिलाओं, बच्चों, दिव्यांग व्यक्तियों, प्रवासी श्रमिकों तथा अन्य कमजोर समूहों के साथ–साथ अल्पसंख्यको तथा स्वदेशी समूहों के लिए सामूहिक अधिकारों के लिए विशिष्ट मानकों को परिभाषित करते हैं।

2.2 इकाई के उद्द्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त अधिगमकर्ता/विद्यार्थी–

- मानव अधिकार की विधिक संरचना को समझ सकेंगे।
- मानवाधिकार संरक्षण हेतु विभिन्न मानवाधिकार संस्थाओं के विषय में जान सकेंगे।
- मानवाधिकार के विकास के लिए नीतियों तथा कार्यक्रमों को जान सकेंगे।

- मानवाधिकार के प्रति जन जागरुकता के महत्व को समझ सकेंगे।
- नागरिक समाज की संकल्पना को जान सकेंगे।

2.3 क्या मानव अधिकार एक विधिक अधिकार है?

एक प्रश्न उठता है कि क्या मानव अधिकार विधिक अधिकार है, जिनको विधिक प्रणाली द्वारा मान्यता एवं संरक्षण प्रदान किया जाता है? विधिक अधिकार के दो आवश्यक तत्व होते हैं– प्रथम, अधिकार का धारक तथा दूसरा, कर्तव्य द्वारा आबद्ध किया गया व्यक्ति। विधिक व्यक्तियों को ही केवल कर्तव्यों द्वारा आबद्ध किया जा सकता है या वे विधिक अधिकारों के धारक हो सकते हैं। अतएव प्रत्येक अधिकार दो या उससे अधिक विधिक व्यक्तियों के बीच सम्बन्ध को अन्तर्ग्रस्त करते हैं। अधिकार एवं कर्तव्य परस्पर सम्बन्ध रखने वाले होते हैं; अर्थात् एक व्यक्ति का अधिकार बिना दूसरे व्यक्ति के कर्तव्य के नहीं हो सकते। मानव अधिकार व्यक्तियों के होते हैं और राज्य का तत्समान कर्तव्य व्यक्तियों के अधिकारों को संरक्षण प्रदान करना होता है। महासभा द्वारा 9 दिसम्बर, 1998 को अंगीकार किया गया मानव अधिकार प्रतिरक्षा की घोषणा (Declaration on the Human Rights Defenders) ने अनुच्छेद 2, पैरा 1 के अधीन अधिलिखित किया है कि प्रत्येक राज्य का प्राथमिक दायित्व एवं कर्तव्य आवश्यक उपायों को अंगीकार करके सभी मानव अधिकारों को संरक्षण प्रदान करना, प्रोन्नत करना तथा क्रियान्वित करना होता है। अनुच्छेद का पैरा 2 कथन करता है कि प्रत्येक राज्य इस बात को सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक विधान, प्रशासनिक एवं अन्य कदमों को अंगीकार करे जिससे मानव अधिकारों की सुरक्षा करने के अधिकार को प्रभावी तौर पर अंगीकार किया जा सके। उपर्युक्त से यह प्रतीत होता है कि मानव अधिकार एक विधिक अधिकार है। व्यक्तियों के अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करने का राज्य का तत्समान कर्तव्य होता है।

2.4 मानव अधिकार की विधिक संरचना (Legal Framework of Human Rights)

2.4.1 अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार विधि (International Human Rights Law)

अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार विधि ऐसी विधि को कहा जाता है जो मानव अधिकार को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर अभिवृद्धि तथा संरक्षण प्रदान करती है। मानव अधिकार सभी व्यक्तियों के लिए अधिकारिता के अन्दर माध्यताओं को निर्दिष्ट करती है किन्तु जब राज्य अपनी अधिकारिता के अन्दर मानव अधिकारों के अनुपालन करने का आश्वासन देने में असफल रहते हैं तब अन्तर्राष्ट्रीय बाध्यता उत्पन्न होती है। इस प्रकार से, वैयक्तिक मानव अधिकारों को उपलब्ध कराने की बाध्यता मुख्य रूप से अन्तःदेशीय (Intranational) एवं कुछ मामलों में अन्तर्राष्ट्रीय (International) है।

मानव अधिकार विधि को निर्मित करने का मुख्य उद्देश्य यह है कि जो व्यक्तियों को राज्यों और उनके सरकारों के मनमाने तरीकों से किये जाने वाले व्यवहार से संरक्षित किया जा सके। यह विचार कि मानव अधिकारों को राष्ट्रीय विधि के अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय विधि द्वारा संरक्षित किया जा सकता है, धीरे–धीरे विकसित हुआ क्योंकि राज्य प्रभुत्व सम्पन्नता जो सत्रहवीं शताब्दी में अपने प्रादुर्भाव से अन्तर्राष्ट्रीय विधि के मूलभूत सिद्धान्त के रूप में विद्यमान थी, व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करने हेतु राज्यों पर अन्तर्राष्ट्रीय विधिक बाध्यता अधिरोपित करने के प्रयासों में अवरोधक सिद्ध हुआ। राज्य प्रभुता का सिद्धान्त उन्नीसवीं शताब्दी में भी रहा तथा बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अभिभावी रहा जिसमें मानव अधिकार के मामलों के मुद्दों को प्रत्येक राज्य अपने आन्तरिक क्षेत्राधिकार के भीतर आने वाले मामले ही माना गया तथा वे अन्तर्राष्ट्रीय विधि द्वारा विनियमन हेतु पूर्णतः असमुचित थे। निःसन्देह उपरोक्त नियम के अपवाद भी थे जिसमें वर्ष 1926 के दासत्व अभिसमय का ग्रहण किया जाना एवं वर्ष 1919 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना तथा उसके पश्चात्वर्ती क्रियाकलाप सम्मिलित थे।

प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् राष्ट्र संघ की स्थापना की गयी किन्तु उसकी प्रसंविदा में मानव अधिकारों की अभिवृद्धि तथा संरक्षण के लिये कोई प्रावधान नहीं बनाया गया। प्रसंविदा के अनुच्छेद 22 में आत्म–निर्णय के अधिकार के लिये मैनडेट (Mandate) व्यवस्था बनायी गयी थी जिसके अनुसार उपनिवेश रहने वाली जनसंख्या को सामूहिक अधिकार प्रदान किया गया था किन्तु इस अधिकार को किसी व्यक्ति का अधिकार कहा जा सकता है क्योंकि जनसंख्या के आत्मनिर्णय का अभिप्राय राज्य के आत्मनिर्णय से होता है। भाषा में आत्मनिर्णय का सम्बन्ध स्वतन्त्र राज्य से है।

मानव व्यक्तित्व के मूल्यों की प्राप्ति की अनुभूति का मार्ग 1929 में राज्य के विरुद्ध मानव के अधिकारों की घोषणा जारी कर अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान (Institute of International Law) ने मानव अधिकारों की गणना करने के स्थान पर इसके द्वारा राज्य के छः कर्तव्यों का अभिकथन किया गया, जो इस प्रकार है–

(1) प्रत्येक व्यक्ति के प्राण, स्वतन्त्रता एवं सम्पत्ति के अधिकार को मान्यता दिया जाना और अपने राज्यक्षेत्र के भीतर सभी को राष्ट्रीयता, लिंग, मूल वंश, भाषा अथवा धर्म के किसी भेदभाव के बिना उनके अधिकारों को एक पूर्ण संरक्षण प्रदान करना;

(2) प्रत्येक व्यक्ति को उसकी आस्था, धर्म अथवा विश्वास के अधिकार को व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक रूप से मान्यता देना;

(3) प्रत्येक व्यक्ति को उसकी अपनी भाषा के स्वतन्त्र प्रयोग और उस भाषा के शिक्षण के अधिकार को मान्यता देना;

(4) यह मान्यता देना कि लिंग, मूल वंश, भाषा अथवा धर्म के भेदभाव पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कोई भी कार्य न करे, जो राज्य के अपने किसी भी व्यक्तिगत अथवा सार्वजनिक अधिकारों को अस्वीकार करता हो;

(5) यह मान्यता देना कि समानता नाममात्र की न होकर प्रभावी हो;

(6) यह मान्यता देना कि इसके सामान्य विधायन पर आधारित हेतुओं के सिवाय किसी भी राज्य को यह अधिकार नहीं होगा कि वह उनसे उनकी राष्ट्रीयता, लिंग, मूलवंश, भाषा अथवा धर्म के कारणों को वापस कर ले, उसे इस घोषणा में अनुध्यात् प्रत्याभूति से वंचित नहीं करना चाहिये। घोषणा एक प्रकार से संस्थान के सदस्यों की इच्छा थी और इसी कारण राज्यों पर किसी भी प्रकार की बाध्यता का अधिरोपण नहीं करती। फिर भी इसके द्वारा सभी राष्ट्रों के लिये, अपने स्वयं के राष्ट्रिकों सहित सभी व्यक्तियों के आवरण को मानक का अधिकथन किया गया है। इस घोषणा को मानव अधिकारों के सार्वभौमीकरण के प्रति प्रथम प्रयास माना जा सकता है।

2.4.2 संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अधीन मानव अधिकार (Human Rights under the U.N. Charter)

सैनफ्रांसिस्को सम्मेलन में कई राष्ट्रों के प्रतिनिधियों द्वारा यह अभिव्यक्त किया गया था कि संयुक्त राष्ट्र अधिकारों का अन्तर्राष्ट्रीय बिल (International Bill of Rights) प्रस्तुत करना चाहिये। चार्टर उद्देशिका और अनुच्छेद 1, 13 (1) (ख), 55, 56, 62 (2), 68 और 76 (ग) में मानव अधिकारों और मूल स्वतन्त्रताओं की अभिवृद्धि के लिये प्रावधान शामिल किया गया जो निम्न प्रकार का है–

1. चार्टर की उद्देशिका अपने प्रथम परिच्छेद में यह अधिकथित करती है कि "संयुक्त राष्ट्र के लोग मूल अधिकारों के प्रति, मानव की गरिमा और महत्व के प्रति, पुरुषों और स्त्रियों तथा बड़े और छोटे राष्ट्रों के समान अधिकारों के प्रति निष्ठा की पुनः अभिपुष्ट करने के लिये यह निश्चित है.....।"

2. चार्टर के अनुच्छेद 1 के परिच्छेद 3 में वर्णित उद्देश्यों में से एक मूलवंश, लिंग, भाषा या धर्म के आधार पर विभेद किये बिना सभी के लिये मानव अधिकारों और मूल स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान की अभिवृद्धि करने और उसे प्रोत्साहित करने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना है। इस प्रकार मानव अधिकारों के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र का प्राथमिक उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति द्वारा अधिकतम स्वतन्त्रता तथा गरिमा प्राप्त करना है। उक्त प्रावधान दर्शित करता है कि मूलवंश, लिंग, भाषा या धर्म के आधार पर विभेद किये बिना मानव अधिकारों और मूल स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान की अभिवृद्धि करने और उसे प्रोत्साहित करने के लिये मान्यता दी गयी।

3. संयुक्त राष्ट्र के दो अंग– महासभा (General Assembly) तथा आर्थिक और सामाजिक परिषद् (Economic and Social Council) को मानव अधिकार और मूल स्वतन्त्रताओं को प्राप्त करने में सहायता करने के

प्रयोजन के लिये अध्ययन करने तथा सिफारिश करने के लिये सशक्त किया गया। मानव अधिकारों से सम्बन्धित अधिकतर मामलों पर महासभा को तृतीय समिति (सामाजिक, मानवीय और सांस्कृतिक समिति) द्वारा विचार किया जाता है। कुछ मामले छठी समिति (विधिक समिति या प्रथम समिति) निःशस्त्रीकरण तथा अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा समिति द्वारा विचार किये जाते हैं। महासभा ने मानव अधिकारों से सम्बन्धित कुछ मामलों पर विशेष समितियों का भी गठन किया है जो महासभा के सहायक अंग कहे जाते हैं। ये विशेष समितियाँ मानव अधिकारों पर विचार करती हैं जिनके लिये उनको निर्मित किया जाता है। उदाहरण के लिये, रंगभेद पर विशेष समिति रंगभेद के मामले में विचार करती हैं।

4. अनुच्छेद 55 यह प्रावधान करता है कि संयुक्त राष्ट्र (अ) उच्चतर जीवन स्तर पूर्ण नियोजन और आर्थिक तथा सामाजिक, स्वास्थ्य विषयक और सम्बद्ध समस्याओं के हल तथा अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक और शैक्षणिक सहयोग की अभिवृद्धि करेगा, (ब) अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक, स्वास्थ्य विषयक और सम्बद्ध समस्याओं के हल तथा अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक और शैक्षणिक सहयोग की अभिवृद्धि करेगा, (स) मूलवंश, लिंग, भाषा या धर्म के आधार पर विभेद किये बिना सभी के लिये मानव अधिकारों और मूल स्वतन्त्रताओं के प्रति विश्वव्यापी आदर और उनके पालन की अभिवृद्धि करेगा।

5. अनुच्छेद 56 द्वारा संयुक्त राष्ट्र के सदस्य अनुच्छेद 55 में उपवर्णित प्रयोजनों की पूर्ति के लिये संगठन के सहयोग से संयुक्त या पृथक् रूप से कार्यवाही करने की प्रतिज्ञा करते हैं। संयुक्त राष्ट्र चार्टर ने आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् को मानव अधिकारों को प्रोत्साहन करने के विषय में अधिकार प्रदान किया।

6. चार्टर का अनुच्छेद 62 आर्थिक और सामाजिक परिषद को मानव अधिकारों और मूल स्वतन्त्रताओं के प्रति आदर बढ़ाने के प्रयोजन के लिये सशक्त करता है।

7. अनुच्छेद 68, आर्थिक और सामाजिक परिषद को आर्थिक सामाजिक क्षेत्र में मानव अधिकारों की अभिवृद्धि के लिये आयोग तथा ऐसे अन्य आयोगों को स्थापित करने का निर्देश देता है, जिसको वह अपने कार्यों का पालन करने के लिये आवश्यक समझता हो।

8. अनुच्छेद 76 का परिच्छेद (ग) यह प्रावधान करता है कि मूल उद्देश्यों में से एक मूलवंश, लिंग, भाषा और धर्म के आधार पर बिना भेदभाव के सभी के लिये मानव अधिकारों के प्रति और मूल स्वतन्त्रताओं के प्रति आदर को प्रोत्साहन देना और विश्व के लोगों को एक दूसरे पर आश्रित होने की मान्यता के लिये प्रोत्साहन देना है।

2.4.3 संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानव अधिकारों की अभिवृद्धि एवं संरक्षण (Promotion and Protection of Human Rights by the United Nations)

मानव अधिकारों को अभिवृद्धि शब्द का अर्थ मानव अधिकारों, शिक्षा एवं प्रसारण के अन्तर्राष्ट्रीय मानक को तय करना हो सकता है। संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अधीन मानव अधिकारों की अभिवृद्धि का प्रधान उत्तरदायित्व महासभा, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् एवं उसके सहायक मानव अधिकार आयोग पर है। महासभा ने सन्धियों को अंगीकार करके मानक तय किया है और उन मानकों का सामाजीकरण कर रही है। इन अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेजों में निष्कर्षित मानव अधिकार मूल्यों के सारे विश्व में प्रचार प्रसार करने के लिये सम्मेलनों एवं सेमिनारों का आयोजन किया जाना भी मानव अधिकारों की अभिवृद्धि में शामिल है।

'मानव अधिकारों का संरक्षण' शब्द को, जिसका अर्थ क्रियान्वयन एवं प्रवर्तन कार्य हो सकता है, संयुक्त राष्ट्र चार्टर में स्थान नहीं मिला है। संयुक्त शब्द अभिकरणों के मध्य केवल सुरक्षा परिषद् एवं अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय प्रवर्तन का कार्य कर सकते हैं। केवल ये ही बाध्यकारी प्रस्ताव पारित करने अथवा बाध्यकारी निर्णय जारी करने में सक्षम हैं। सुरक्षा परिषद् अपने स्वयं के पूर्व कार्यों अथवा न्यायालय के कार्यों के सम्बन्ध में स्वीकृति दे सकता है अथवा मना कर सकती है। इस प्रकार से प्रवर्तन मानव अधिकारों का प्रामाणिक प्रयोग है। अभिवृद्धि से परे किन्तु एक प्रकार के प्रवर्तन के सभी अन्य कार्य को क्रियान्वयन का प्रयास माना जा सकता है। इस प्रकार से क्रियान्वयन

में विनिर्दिष्ट समस्याओं अथवा राज्यों के विषय में अबाध्यकारी प्रस्तावों का पारित किया जाना भी शामिल है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1– संयुक्त राष्ट्र के दो अंग कौन से हैं?

उत्तर– ....

प्रश्न 2– संयुक्त राष्ट्र चार्टर का अनुच्छेद 62 क्या कहता है?

उत्तर– ....

2.5 मानवाधिकार संरक्षण के लिए मानवाधिकार संस्थाएँ (Human Rights Institutions for the Protection of Human Rights)

2.5.1 मानव अधिकार आयोग (Commission on Human Rights)

संयुक्त राष्ट्र का प्रमुख अंग आर्थिक और सामाजिक परिषद् मानव अधिकारों के प्रश्न से सीधे सम्बन्धित है। परिषद को संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुच्छेद 68 के अधीन मानव अधिकारों की अभिवृद्धि के लिये आयोगों और ऐसे अन्य आयोग को स्थापित करने के लिये सशक्त किया गया है, जिनको परिषद् के कार्यों के पालन करने के लिये आवश्यकता हो। तद्नुसार, उसने मानव अधिकार आयोग की स्थापना किया, जिसे महासभा द्वारा 12 फरवरी, 1946 को अनुमोदित किया गया। आयोग के कार्य एवं गठन के सम्बन्ध में आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् के द्वारा फरवरी 12, 1946 को पारित एक संकल्प में उल्लेख किया गया था। आयोग की स्थापना आर्थिक और सामाजिक परिषद् के एक सहायक अंग के रूप में की गयी थी।

2.5.2 मानवाधिकार परिषद् (Human Rights Council)

संयुक्त राष्ट्र संघ के मुख्यालय न्यूयार्क में विश्व के नेता, राज्यों के प्रमुख तथा सरकारों से 14 सितम्बर से 16 सितम्बर, 2005 तक मिले तथा बैठक के अन्त में उन्होंने 2005 के विश्व बैठक के परिणामों (2005 World Summit Outcome) के रूप में एक दस्तावेज को स्वीकार किया। परिणामी दस्तावेज (Outcome Document) में बहुत से वैश्विक मुद्दे थे जिस पर विश्व के नेतागण कार्यवाही करने के लिये सहमत हुये। एक संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद् स्थापित करने पर सहमत हुये जो कि सभी प्रकार के मानव अधिकारों को समान एवं उचित तरीके से बिना किसी प्रकार के भेदभाव के मौलिक स्वतन्त्रताओं के संरक्षण की उत्तरदायी होगी।

2.5.3 महिलाओं की प्रस्थिति पर आयोग (Commission on the Status of Women)

महिलाओं की प्रस्थिति पर आयोग की स्थापना 1946 में की गयी थी। आयोग की सदस्यता प्रारम्भ में 15 थी जिसको 1961 में बढ़ाकर 21 कर दी गयी। आयोग में 1991 से 45 सदस्य हो गये हैं। आयोग वर्ष में दो बार वियना में सम्पूर्ण विश्व में महिलाओं की समानता के प्रति उन्नति का परीक्षण करने के लिये बैठक करता है। इसका प्राथमिक कार्य महिलाओं के राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक क्षेत्र में अधिकारों की अभिवृद्धि के लिये आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् को सिफारिश करना तथा रिपोर्ट तैयार करना है। यह महिलाओं के अधिकारों के क्षेत्र में ध्यान देने की समस्याओं के विषय में सिफारिश करता है। यह विधि एवं व्यवहार में महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार करने के उद्देश्य से अनुशंसा को प्रभावी बनाने के लिये सन्धियों के प्रारूप तैयार करता है।

2.5.4 मानव अधिकार केन्द्र (Centre for Human Rights)

जेनेवा में स्थित केन्द्र मानव अधिकारों के क्रियाकलापों में समन्वय स्थापित करता है। यह आयोग, उप आयोग, मानव अधिकार समिति, मूल वंश विभेदीकरण उन्मूलन समिति (Committee on the Elimination of Racial Discrimination) और अन्य नीति निर्मात्री या अन्वेषक निकायों के लिये कर्मचारी (Staff) प्रदान करता है। यह अध्ययन रिपोर्ट और प्रकाशन (Publication) तैयार करता है तथा सरकारों को सलाहकारी सेवा तथा तकनीकी सहायता प्रदान करता है। जब महासभा मानव अधिकारों से सम्बन्धित कोई योजना बनाती है तब केन्द्र उसके क्रियान्वयन का अनुवीक्षण करती है। जैसे, 1983 में जातिवाद और जातीय विभेदीकरण का विरोध करने के लिये

कार्यवाही द्वितीय दशक के लिये कार्य योजना (Programme for the Second Decade of Action to Combat Racism and Racial Discrimination) को अंगीकार करना।

1. साधारण दिग्दर्शन

मानव अधिकारों का क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय है किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में कोई ऐसी संस्था नहीं है जो मानव अधिकारों को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रभावी ढंग से लागू कर सके। यह अन्तर्राष्ट्रीय विधि के पक्ष पर बहुत बड़ी कमजोरी है। अनेक मूर्धन्य विधिवेत्ताओं ने इस विषय पर दीर्घकाल से विचार किया अन्तर्राष्ट्रीय विधि के संस्थात्मक पक्ष को समर्थ नहीं बना पाए क्योंकि प्रभुतासम्पन्न राज्यों पर शासन करने लिए कोई अन्तर्राष्ट्रीय संस्था उभर कर नहीं आ पाई। इस परिप्रेक्ष्य में यही समझा गया कि राष्ट्रीय संस्था को स्थापना द्वारा मानव अधिकारों को प्रभावी रूप से प्रवर्तनीय बनाया जा सकता है। राष्ट्रीय संस्था प्रशिक्षण, अनुसंधान और मानव अधिकार के बारे में अभिकथित उल्लंघनों में निष्पक्ष अन्वेषण द्वारा अधिकार के बारे में जानकारी बढ़ाएगी। यह सम्बन्धित सरकार से समझौते के माध्यम से प्रभावी उपाय सुनिश्चित कर सकती है या न्यायालय से मानव अधिकार के शिकार को उपचार उपलब्ध करवा सकती है। इस प्रकार घरेलू मानव अधिकार संस्था मानव अधिकारों के संरक्षण के बारे में प्रभावी भूमिका अदा कर सकती है।

मानव अधिकारों के दमन की आलोचना के परिणामस्वरूप 26 दिसम्बर, 1993 को 'मानव अधिकारों के अधिक अच्छे संरक्षण के लिए तथा उससे सम्बद्ध या उसके आनुषंगिक मामलों के लिए राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राज्य मानव अधिकार आयोग एवं मानव अधिकार न्यायालयों के हेतु प्रावधान करने के लिए भारत के राष्ट्रपति ने एक अध्यादेश जारी किया। बाद में इस अध्यादेश को संसद ने मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के रूप में पारित किया।

2. मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम

राष्ट्रीय मानव अधिकार की स्थापना भारत में 27 दिसम्बर, 1993 को की गई जब राष्ट्रपति ने अध्यादेश जारी किया था। बाद में लोकसभा ने राष्ट्रपति के अध्यादेश के स्थान पर मानव अधिकार संरक्षण विधेयक 18 दिसम्बर 1993 को पारित किया। यह विधेयक अधिनियम हो गया जब 8 जनवरी, 1994 को इसे राष्ट्रपति की अनुमति मिल गई। इसको मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 कहा जाता है। अधिनियम का उद्देश्य मानव अधिकारों के अधिक अच्छे संरक्षण के लिए तथा उसके सम्बद्ध या उसके आनुषंगिक मामलों के लिए मानव अधिकार आयोग, राज्य मानव अधिकार आयोग एवं मानव अधिकार न्यायालयों के गठन हेतु प्रावधान करना है जैसा कि अध्यादेश में कहा गया था।

अधिनियम की धारा 2 (घ) में मानव अधिकार की परिभाषा यह कहते हुए की गई है कि "मानव अधिकार" से अभिप्राय संविधान द्वारा प्रत्याभूत तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं में सम्मिलित एवं भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय व्यक्तियों के जीवन स्वतंत्रता, समानता एवं गरिमा से है।" अधिनियम द्वारा राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राज्य मानव अधिकार आयोग और मानव अधिकार न्यायालयों की स्थापना की गई है।

3. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम के II से IV अध्याय राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग से सरोकार रखते हैं। इन अध्यायों में आयोग के विभिन्न पहलुओं के बारे में उपबंध किया गया है।

आयोग निम्नलिखित कृत्यों का निर्वहन करेगा–

(क) स्वप्रेरणा से या किसी पीड़ित या उसकी ओर से किसी व्यक्ति द्वारा उसे प्रस्तुत याचिका पर,

  (i) मानव अधिकारों के उल्लंघन या उसके अपशमन की या

  (ii) किसी लोक सेवक द्वारा उस उल्लंघन को रोकने में उपेक्षा की शिकायत की जाँच करेगा;

(ख) किसी न्यायालय के समक्ष लम्बित मानव अधिकारों के उल्लंघन के किसी अभिकथन वाली किसी कार्रवाई में उस न्यायालय की अनुमति से हस्तक्षेप करेगा;

(ग) राज्य सरकार की सूचना देने के अध्यधीन, राज्य सरकार के नियंत्रणाधीन किसी जेल या किसी अन्य संस्था का, जहाँ पर उपचार सुधार या संरक्षण के प्रयोजनार्थ व्यक्तियों को निरुद्ध किया जाता है या रखा जाता है, निवास करने वालों को जीवन की दशाओं का अध्ययन करने पर सिफारिशें करने के लिए निरीक्षण करेगाः

(घ) मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए संविधान या तत्समय प्रवृत्त किसी कानून द्वारा तथा उसके अधीन प्रावधानिक सुरक्षाओं का पुनर्विलोकन करेगा तथा उनके प्रभावी क्रियान्वयन करने लिए सिफारिश करेगा;

(ङ) उन कारकों का, जिसमें उग्रवाद के कृत्य भी है, मानव अधिकारों के उपभोग में बाधा डालते है पुनर्विलोकन करेगा एवं उपयुक्त उपचारात्मक उपायों की सिफारिश करेगा;

(च) मानव अधिकारों पर संधियों एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय लेखों का अध्ययन करेगा तथा उनके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए सिफारिश करेगा;

(छ) मानव अधिकारों के क्षेत्र में अनुसंधान एवं उसे प्रोन्नत करेगा;

(ज) समाज के विभिन्न खण्डों में मानव अधिकार साक्षरता का प्रसार करेगा तथा प्रकाशकों, मीडिया, सेमिनारों एवं अन्य उपलब्ध साधनों के माध्यम से इन अधिकारों के संरक्षण के लिए उपलब्ध सुरक्षाओं के प्रति जागरूकता को विकसित करेगा;

(झ) मानव अधिकारों के क्षेत्र में कार्य करने वाले गैर–सरकारी संगठनों एवं संस्थाओं के प्रयत्नों को प्रोत्साहन देगा;

(ञ) ऐसे अन्य कृत्य करेगा जिन्हें वह मानव अधिकारों के संवर्धन के लिए आवश्यक समझेगा। इस प्रकार राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की परिधि में ऐसे सभी कार्य आ जाते हैं जो किसी न किसी रूप में मानव अधिकारों से जुड़े हुए हैं। वस्तुतः आयोग का कार्य केवल मानव अधिकारों का संरक्षण करना ही नहीं है बल्कि मानव अधिकारों के प्रति जन साधारण में चेतना जागृत करना तथा इस क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं को प्रोत्साहित करना भी है। आयोग भारत सरकार एवं सम्बन्धित राज्य सरकार को एक वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा तथा किसी भी समय किसी भी मामले पर, जो उसकी राय में इतनी आवश्यकता एवं महत्व का है कि वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने तक उसे स्थगित नहीं रखा जाना चाहिए, विशेष रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

4. राज्य मानवाधिकार आयोग

राज्य मानव अधिकार के कृत्य एवं शक्तियाँ वे ही होंगी जो राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की है। राज्य आयोग राज्य सरकार को एक वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा तथा किसी भी समय किसी भी मामले पर, जो उसकी राय में इतनी आवश्यक एवं महत्व का है कि वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने तक उसे स्थगित नहीं रखा जाना चाहिए, विशेष रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

राज्य सरकार, राज्य आयोग की वार्षिक एवं विशेष रिपोर्टों को, आयोग की सिफारिश पर की गई कार्रवाई के ज्ञापन एवं उन सिफारिशों को स्वीकार नहीं किए जाने के कारणों, यदि कोई हो, के साथ राज्य विधानमंडल में जहां दो सदन हों, या जहाँ विधानमण्डल में केवल एक सदन हो, उस सदन के समक्ष प्रस्तुत कराएगी।

5. मानवाधिकार न्यायालय

प्रत्येक जिले में एक मानव अधिकार न्यायालय होगा। यह न्यायालय युगल स्वरूप का है–

(क) ऐसा न्यायालय पृथक से विशेष न्यायालय हो सकता है, अथवा

(ख) सेशन न्यायालय को ही मानव अधिकार न्यायालय के रूप में विनिर्दिष्ट किया जा सकता है।

मानव अधिकार न्यायालयों में राज्य की ओर से मामलों की पैरवी करने के लिए विशेष अभियोजकों की नियुक्ति के

लिए धारा 31 में उपबन्ध किया गया है। इसके अनुसार राज्य सरकार अधिसूचना जारी करके प्रत्येक मानव अधिकार न्यायालय के लिए–

(क) किसी लोक अभियोजक को विशेष लोक अभियोजक के रूप में विनिर्दिष्ट कर सकता है या

(ख) किसी अधिवक्ता को जिसे सात वर्ष की वकालत का अनुभव है, विशेष लोक रूप में नियुक्त कर सकती है।

मानव अधिकार न्यायालयों के बारे में आन्ध्र प्रदेश, असम, सिक्किम, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश में अधिसूचना जारी की जा चुकी है और मद्रास तथा गौहाटी में इनकी स्थापना कर दी गई है।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 3– संयुक्त राष्ट्र संघ का मुख्यालय कहाँ है?

उत्तर– ....

....

....

प्रश्न 4– राष्ट्रीय मानव अधिकार की स्थापना भारत में कब की गई?

उत्तर– ....

....

....

2.6 मानवाधिकार के विकास के लिए नीतियाँ तथा कार्यक्रम (Programs and Policies for the Development of Human Rights)

1993 वियना में आयोजित मानवाधिकार पर विश्व सम्मेलन में विकास के अधिकार को एक मौलिक मानव अधिकार के रूप में मान्यता दी गई थी। मानवाधिकार पूरे विश्व में हर संस्कृति धर्म तथा परम्परा में निहित मानवीय गरिमा और पहचान के मानक है। अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानवीय गरिमा की कानूनी नींव को परिभाषित करने का एक चरण है। उनका उद्देश्य मानव अधिकारों को अन्तर्राष्ट्रीय कानूनी ढांचे में लाना और उन्हें सभी से अवगत कराना है। यह व्यक्तियों के घरेलू संरक्षण को प्रतिस्थापित करने के लिए नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय प्रणालियों के भीतर मानव अधिकारों की सुरक्षा को अधिक प्रभावी बनाने के लिए है। संयुक्त राष्ट्र चार्टर में मानवाधिकारों के समावेश और वियना घोषणा और कार्यक्रम की कार्यवाही के स्पष्ट बयानों का अर्थ है कि मानवाधिकार अब विशेष रूप से राज्यों के घरेलू अधिकार क्षेत्र के भीतर नहीं है। वे अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की एक वैध चिन्ता हैं।

दो प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरण हैं; मानवाधिकार सन्धियाँ तथा संयुक्त राष्ट्र मानक। पहला कानूनी रूप से बाध्यकारी है, दूसरा अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के प्रति राजनीतिक प्रतिबद्धता व्यक्त करता है। संयुक्त राष्ट्र संधि निकायों द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार संधियों के कार्यान्वयन की निगरानी की जाती है। एक और पर्यवेक्षी तन्त्र स्पेशल रिपोर्टर्स का है।ये संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा संधियों में विशिष्ट अधिकारों के लिये या संयुक्त राष्ट्र के मानकों के लिये नियुक्त स्वतंत्र विशेषज्ञ हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सात मौलिक मानवाधिकार सन्धियाँ हैं:

1. सिविल और राजनीतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय (ICCPR)
2. आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक भेदभाव पर अन्तर्राष्ट्रीय पर अभिसमय (ICESCR)
3. नस्लीय भेदभाव के सभी रूपों के उन्मूलन पर अभिसमय (CERD)
4. महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के सभी रूपों के उन्मूलन पर अभिसमय (CEDAW)

5. बाल अधिकार पर अभिसमय (CRC)

6. प्रवासी श्रमिकों और उनके परिवारों के अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन

7. यातना एवं अन्य क्रूरतापूर्ण, अमानवीय, अपमानजनक व्यवहार या दण्ड पर अभिसमय राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून के सूत्र भी संविधान में पाए जाते हैं। यह राष्ट्रीय स्तर पर है जहाँ कानून के शासन के लिए प्रभावी रूप से सुनिश्चित किया जा सकता है। निम्नलिखित कुछ कानून भारत सरकार द्वारा विकास के अधिकार–आधारित दृष्टिकोण के अनुरूप कार्यान्वित किए जा रहे हैं तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं और मानकों को मानने/लागू करने के तरीके के रूप में हैं।

   भारत में महिलाओं, बच्चों तथा दिव्यांगों से सम्बन्धित कानूनों की एक सूची निम्नलिखित हैं–

   - महिलाओं का अधिकार, सती का आयोग (रोकथाम) अधिनियम 1987
   - दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961
   - महिलाओं के अनुचित प्रतिनिधित्व (रोकथाम) अधिनियम,1986
   - महिलाओं के लिए राष्ट्रीय आयोग अधिनियम, 1990
   - घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम, 2005
   - यौन उत्पीड़न के विरुद्ध महिलाओं का संरक्षण बिल, 2007
   - अनैतिक अवैध व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956

बाल अधिकार

- (श्रम की प्रतिज्ञा) बाल अधिनियम, 1933
- बाल श्रम निषेध और विनियमन अधिनियम, 1986
- बाल अधिनियम, 1960
- किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2000
- बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006

दिव्यांगों के अधिनियम

- भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992
- दिव्यांगजन अधिनियम, 1995
- दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 USAID नीति

United States Agency for International Development (USAID) नीति

USAID नीतियों के दायरे, इरादे तथा इसकी संरचना, विषय वस्तु तथा मुद्दे क्षेत्र के अनुसार भिन्न होते हैं। उनका उद्देश्य एजेंसी के नेतृत्व की सोच को व्यक्त करना है और मामलों में प्रमुख हितधारकों के लिए एजेंसी प्रतिबद्धताएं बनाती है। जैसे वे USAID के विकास कार्यक्रमों की प्रभावशीलता में सुधार करना चाहते हैं। वे एक निश्चित विषय के भीतर चुनौतियों की प्रकृति और इस क्षेत्र में एजेंसी के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए सर्वोत्तम तरीकों के बारे में USAID की समझ को चित्रित करते हैं। जहाँ आवश्यक हो USAID आन्तरिक नियमों के माध्यम से विशिष्ट नीतियों या रणनीतियों को लागू करने पर मार्गदर्शन प्रदान करता है।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 5– अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मौलिक मानवाधिकार सन्धियाँ कितनी हैं?

उत्तर– ....

प्रश्न 6– भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम कब बना?

उत्तर– ....

2.7 मानवाधिकार के प्रति जन जागरूकता (Public Awareness towards Human Rights)

"अन्याय और झूठ तथा लालच के खिलाफ ईमानदारी, सच्चाई और करुणा के लिए अपनी आवाज उठाने से कभी न डरें। अगर पूरी दुनिया के लोग ऐसा करेंगे तो यह पृथ्वी बदल जायेगी।"

विलियम फॉल्कनर, *नोबेल पुरस्कार विजेता, अमेरिकी उपन्यासकार और लघु कथाकार।*

अब आप मानवाधिकार क्या है? यह जान गये हैं; वे क्यों महत्वपूर्ण होते हैं? तथा कैसे उन्हें बढ़ावा देने के लिये विभिन्न अधिनियम बनाये गये हैं। तो अगला कदम मानवाधिकारों के लिये जागरुकता बढ़ाने का है। मानवाधिकार कार्यकर्ता होना कुछ ऐसा नहीं है जो केवल विशेषज्ञ ही कर सकते हैं। कोई भी अपने आस–पास के लोगों के अधिकारों की वकालत कर सकता है, जिसमें आप भी शामिल हैं। आपके अपने समुदाय में मानवाधिकारों को बढ़ावा देने के कई तरीके हैं। जो कुछ भी आवश्यक है वह आपके आस–पास के लोगों के लिये न्याय, करुणा और सहानुभूति की इच्छा है और एक कारण के लिये काम करने की इच्छा है। यदि आप इस बात के बारे में निश्चित नहीं हैं कि कहाँ से शुरू करें, तो आपको यह शुरुआत करने में मदद करने के लिए कुछ संसाधन हैं : युवा लोगों, युवाओं और विभिन्न संगठनों के साथ युवा भागीदारों के अधिवक्ताओं को युवा लोगों के यौन स्वास्थ्य अधिकारों की वकालत करने के लिए/एमनेस्टी इंटरनेशनल एक वैश्विक संगठन है, जो दुनिया भर के विभिन्न मानवाधिकार मुद्दों पर प्रकाश डालता है। इसके अतिरिक्त यूथ फॉर ह्यूमन राइट्स एक ऐसा संगठन है, जिसका उद्देश्य युवाओं को मानवाधिकारों के बारे में पढ़ाना है और उन्हें अधिवक्ता बनने के लिए प्रेरित करना है।

अपने आस–पास के लोगों के लिए उपलब्ध रहना तथा उन्हें समझना मानव अधिकारों के लिए एक कार्यकर्ता बनने के लिए महत्वपूर्ण कदम है। ऐसा करने का सबसे अच्छा तरीका है कि अपने आस–पास के व्यक्तियों की जरूरतों को सुनना तथा सकारात्मक बदलाव लाने के लिए कार्य करना। इस प्रकार हम मानवाधिकार के प्रति व्यक्तियों की जागरूकता को बढ़ा सकते हैं।

2.8 नागरिक समाज (Civil Society)

नागरिक समाज को समाज के "तीसरे क्षेत्र" के रूप में समझा जा सकता है; सरकार और व्यवसाय से अलग और परिवार तथा निजी क्षेत्र सहित। अन्य लेखकों द्वारा नागरिक समाज का उपयोग–

1. गैर सरकारी संगठनों और संस्थानों के समुच्चय में किया जाता है।
2. व्यक्तियों और संगठनों के हितों और इच्छा को प्रकट करते हैं, जो सरकार से स्वतंत्र है।

कभी–कभी नागरिक समाज शब्द का प्रयोग "बोलने की स्वतंत्रता, एक स्वतंत्र न्यायपालिका आदि जैसे तत्वों, जो एक लोकतांत्रिक समाज बनाते हैं" के सामान्य अर्थ में भी किया जाता है। विशेष रूप से पूर्वी और मध्य यूरोप के विचारकों के बीच चर्चा में, नागरिक समाज को नागरिक मूल्यों की एक आदर्श अवधारणा के रूप में भी देखा जाता है।

नागरिक समाज, विकास और राष्ट्रीय सामंजस्य का एक आवश्यक निर्माण खंड है। शान्ति और स्थिरता से समृद्ध देश में, नागरिक समाज सरकारी और निजी क्षेत्र से अछूता स्थान को भरता है। एक नाजुक और संघर्ष–ग्रस्त देश में, यह सामान्य रूप से राज्य और व्यवसाय की जिम्मेदारी प्रदान करने के लिए और भी अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और सुलह की नींव रख सकता है। सिविल सोसाइटी (नागरिक समाज) में वे संगठन शामिल होते हैं जो सरकार से जुड़े नहीं होते हैं, जिनमें विद्यालय तथा विश्वविद्यालय, वकालत समूह, पेशेवर संघ चर्च और

सांस्कृतिक संस्थान शामिल हैं (व्यवसाय कभी–कभी सिविल सोसायटी द्वारा कवर किया जाता है और कभी–कभी नहीं)। नागरिक समाज संगठन कई भूमिकाएँ निभाते हैं। वे नागरिकों और सरकार दोनों के लिए जानकारी का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। वे सरकार की नीतियों तथा कार्यों की निगरानी करते हैं और सरकार को जवाबदेह ठहराते हैं। वे वकालत में संलग्न है तथा सरकार, निजी क्षेत्र तथा अन्य संस्थानों के लिए वैकल्पिक नीतियों की पेशकश करते हैं। वे सेवाओं को वितरित करते हैं; विशेष रूप से गरीबों व अयोग्य लोगों को। वे नागरिक अधिकारों की रक्षा करते हैं और सामाजिक मानदंडों तथा व्यवहारों को बदलने तथा उसे बनाये रखने के लिए कार्य करते हैं।

यू एस ए आईडी पॉलिसियाँ (अमेरिकी एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट) USAID के पास अपने साथी देशों में नागरिक समाज को उलझाने और समर्थन करने का एक समृद्ध और गौरवपूर्ण इतिहास है। सिविल सोसाइटी संगठन USAID कार्यक्रमों के लिए साझेदारों को लागू करने और लक्षित दर्शकों के रूप में एक बड़ी भूमिका निभाते हैं।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 7– नागरिक समाज को समाज के किस क्षेत्र के रूप में समझा जा सकता है?

उत्तर– ....

प्रश्न 8– यूथ फॉर ह्यूमन राइट्स का उद्देश्य क्या है?

उत्तर– ....

2.9 इकाई सारांश

मानवों के अधिकार जो उनके व्यक्तित्व विकास अभिव्यक्ति सफल जीवन व्यतीत करने लिए आवश्यक है। हमारा संविधान हमें गरिमामयी जीवन व्यतीत करने के लिए, वृत–मुकल्प दिखता है। गरिमामयी जीवन से तात्पर्य धन–सम्पत्ति के अभाव होने से नहीं है और न ही रोटी कपड़ा और मकान जैसी मूलभूत आवश्यकताओं तक ही सीमित है। गरिमामयी जीवन के लिए मनुष्य के अस्तित्व का विकास इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे वह मानवीय संसाधन के रूप में विकसित हो सके, जिसके पास शिक्षा ग्रहण करने, कार्य करने, अपनी रुचियों तथा भावनाओं के प्रकटीकरण के अवसर हो, तभी गरिमामयी जीवन बन सकता है। भेदभावों और असमानता के मध्य किसी भी व्यक्ति का जीवन गरिमामयी नहीं हो सकता। अतः मानवाधिकारों के द्वारा वैश्विक पक्ष लिया जा सकता है जिससे वह अपने और विश्व के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके। विश्वयुद्ध जैसी घातक परिस्थितियाँ कहीं–न–कहीं असमानता और अपनी श्रेष्ठता का डंका बजाने का दुष्परिणाम थीं। आज सम्पूर्ण विश्व के देश परमाणु बमों के निशाने पर है और सम्पूर्ण मनुष्यता की समाप्ति में कुछ मिनट ही लगेंगे, ऐसे में मानवाधिकारों के द्वारा सबके अस्तित्व, व्यक्तित्व और समानता का आदर कर सबको आगे बढ़ने हेतु जो प्रतिबद्धता है, वह अत्यावश्यक है। मानवाधिकार की शिक्षा के द्वारा युद्ध आतंकवाद, असहिष्णुता जैसी परिस्थितियों से निपटा जा सकता है। एक मनुष्य में अपने अस्तित्व की भांति अन्य मनुष्य के अस्तित्व के प्रति आदर करना, साथ–साथ जीवन व्यतीत करना, उन्नति करना ही इसका उद्देश्य है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में मानवाधिकारों का महत्व और भी बढ़ जाता है जिससे सभी को समान अधिकार प्रदान किये जा सके और देश की प्रगति की नई गाथा लिखी जा सके।

2.10 बोध प्रश्न के उत्तर

1. संयुक्त राष्ट्र के दो अंग– महासभा तथा आर्थिक और सामाजिक परिषद् हैं।
2. चार्टर का अनुच्छेद 62 आर्थिक और सामाजिक परिषद को मानव अधिकारों और मूल स्वतन्त्रताओं के प्रति आदर बढ़ाने के प्रयोजन के लिये सशक्त करता है।
3. संयुक्त राष्ट्र संघ का मुख्यालय न्यूयार्क में है।
4. राष्ट्रीय मानव अधिकार की स्थापना भारत में 27 दिसम्बर, 1993 को की गई।
5. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मौलिक मानवाधिकार सन्धियाँ सात हैं।

6. भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम 1992 में बना।
7. नागरिक समाज को समाज के "तीसरे क्षेत्र" के रूप में समझा जा सकता है।
8. यूथ फॉर ह्यूमन राइट्स का उद्देश्य युवाओं को मानवाधिकारों के बारे में पढ़ाना है और उन्हें अधिवक्ता बनने के लिए प्रेरित करना है।

2.11 अभ्यास कार्य

प्र"न 01–मानवाधिकार की आवश्यकता क्यों है?

प्र"न 02–मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात कीजिये।

प्र"न 03–मानवाधिकार के प्रति लोगों को जागरूक करने की आवश्यकता क्यों है?

2.12 चर्चा के बिन्दु

प्र"न 01–मानवाधिकार के विकास के लिए बनाई गई नीतियों तथा कार्यक्रमों की सार्थकता पर चर्चा कीजिए।

2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकं

- अग्रवाल, एच. ओ. (2021). मानव अधिकार. सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
- उपाध्याय, जे. जे. आर. (2019). मानव अधिकार. सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
- कपूर, एस. के. (2022). मानव अधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय विधि. सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
- Sharma, P. & Singh, H. (n.d.). *Gender Issues and Human Rights Education.* R. Lall Book Depot. Meerut

इकाई–3

अक्षमता के लिए निहितार्थ : (i) सशक्तिकरण (ii) प्रवर्तनीयता (iii) अविभाज्यता (iv) सहभागिता

(Implications for Disability: (i) Empowerment (ii) Enforceability (iii) Indivisibility (iv) Participation)

इकाई संरचना

3.1 परिचय

3.2 इकाई के उद्देश्य

3.3 बाधिता, अक्षमता एवं दिव्यांगता

3.4 मानवाधिकार आधारित उपागम का अक्षमता के लिए निहितार्थ

3.5 अक्षमता तथा क्षेत्रीयता की समानता की आवश्यकता एवं महत्व

3.6 अक्षमता तथा क्षेत्रीयता की समता तथा समानता का औचित्य

3.7 अक्षमता के लिए निहितार्थ

 3.7.1 सशक्तिकरण

 3.7.2 प्रवर्तनीयता

 3.7.3 अविभाज्यता

 3.7.4 सहभागिता

3.8 अक्षमों हेतु शैक्षिक कार्यक्रम

3.9 इकाई सारांश

3.10 बोध प्रश्न के उत्तर

3.11 अभ्यास कार्य

3.12 चर्चा के बिन्दु

3.13 कुछ उपयोगी पुस्तके

3.1 परिचय

अक्षम व्यक्तियों के अधिकार पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन 3 मई 2008 को लागू हुआ, जो उस युग का अनुकरण करती है जहाँ मानवाधिकार ने अक्षमता और विकास के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण अवधारणा के रूप में प्रवेश किया। मानवाधिकार आधारित उपागम (HRBA) विभिन्न क्षेत्रों में मौजूद असमानता से निपटने में महत्वपूर्ण हो गया है। इसके कारण समाज का दिव्यांगों के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ है। पहले लोग दिव्यांग व्यक्तियों को दया का पात्र या फिर रोगी के रूप में देखते थे, परन्तु अब इस प्रकार के कन्वेन्शन तथा RPWD Act के आने से दिव्यांगों को एक सशक्त व्यक्ति के रूप में देखा जा रहा है, जिसके अपने अधिकार हैं। इसके कारण समाज में उनकी भागीदारी भी सुनिश्चित हो सकी है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र, मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा, सिविल तथा राजनैतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा एवं आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविधा में उपवर्णित

मानवाधिकार जो सभी के लिए है, उनमें निःशक्त व्यक्ति भी आते हैं। उन अन्तर्राष्ट्रीय लेखों के अतिरिक्त, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानसिक रूप से मंदित व्यक्तियों तथा निःशक्त व्यक्तियों के अधिकारों की घोषणा को अंगीकार किया है। ये दोनों घोषणाएँ मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा में समाविष्ट सिद्धान्तों की विशिष्ट रूप से अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। सामाजिक प्रगति तथा विकास की घोषणा में भी मानसिक और शारीरिक रूप से दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार को सुरक्षित करने की उद्घोषणा की गयी है। दिव्यांगों के अधिकार अधिनियम 2016 में 21 प्रकार की अक्षमता का वर्णन करते हुए उनके कल्याण तथा पुनर्वास की बात की गयी है।

3.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त अधिगमकर्ता/विद्यार्थी–

- मानवाधिकार आधारित उपागम का अक्षमता के लिये निहितार्थ को बता सकेंगे।
- सशक्तिकरण को परिभाषित कर सकेंगे।
- दिव्यांगों के सशक्तिकरण को समझ सकेंगे।
- दिव्यांगों की प्रवर्तनीयता को जान सकेंगे।
- दिव्यांग व्यक्तियों की सहभागिता को समझ सकेंगे।
- दिव्यांगों की अविभाज्यता की क्षमता को जान सकेंगे।

3.3 क्षति, अक्षमता एवं दिव्यांगता (Impairment, Disability and Handicap)

बाधिता (Impairment)

व्यक्ति की शारीरिक स्थिति में किसी भी प्रकार का दुराव बाधिता को दर्शाता है। स्वास्थ्य सम्बन्धी अनुभवों के सन्दर्भ में भौतिक–शारीरिक रचना या मनोवैज्ञानिक ढाँचे व तत्सम्बन्धी क्रियात्मकता में कमी या असामान्यता को बाधिता कहा जा सकता है। व्यक्ति के किसी भी अंग, प्रत्यंग में त्रुटि असामान्यता या अंग–प्रत्यंग का न रहना, उसकी क्रियाओं में कमी या मानसिक प्रक्रियाओं की कार्य कुशलता में कमी आदि लक्षण क्षति को स्पष्ट करता हैं, जैसे– दृष्टि बाधिता देखने की त्रुटि बताती है। बाधिता का तात्पर्य व्यक्ति की बीमारी से नहीं वरन् एक कारक से है जो व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक क्रिया–कलापों पर अपना प्रभाव डालने लगते हैं।

इंटरनेशनल क्लासीफिकेशन ऑफ इम्पेयरमेंट, डिसेबिलिटीस एंड हैंडीकैप्ड के अनुसार– "किसी भी प्रकार की मानसिक, शारीरिक या मनोशारीरिक असामान्यता अथवा कमी जो अंगीय कारणों से होती है, उसे क्षति कहते है।" इसके अन्तर्गत ऊतकों का नुकसान होता है, जैसे रेटिना की खराबी के कारण शारीरिक ढाँचा या अंग में कोई कमी आ जाने को भी बाधित कहा जाएगा।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार– "बाधिता शारीरिक संरचना, मनोशारीरिक अथवा शारीरिक क्रियाओं की कमी या असमान्यता होती है।"

अक्षमता (Disability)

मानव शरीर एवं मस्तिष्क जितनी क्षमता अन्य किसी भी प्राणी में नहीं है। अतः अक्षमता जानने के लिए क्षमता की जानकारी होना आवश्यक है। मानव शरीर के किसी भी अंग, तंत्रिका तंत्र अथवा मस्तिष्कीय भाग के क्षतिग्रस्त होने से उससे सम्बन्धित क्रियाओं में अक्षमता आ जाती है तथा सामाजिक परिप्रेक्ष्य में शारीरिक या मानसिक सीमितता आ जाती है। ये जन्मजात नहीं होती वरन् इससे व्यक्तिगत एवं क्रियात्मक ज़िम्मेदारी को निभाने में असमर्थता आ जाती है अर्थात अक्षमता व्यक्ति के पूरे शरीर की कार्यक्षमता की कमी से सम्बन्धित होती है।

इंटरनेशनल क्लासीफिकेशन ऑफ इम्पेयरमेंट, डिसेबिलिटीस एंड हैंडीकैप्ड के अनुसार– "जब किसी कार्य को करने के तरीके में सामान्य व्यक्ति जैसी क्रिया नहीं दिखती अर्थात कार्य करने में बाधा या क्षति पहुँचती है। अक्षमता को विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इस प्रकार परिभाषित किया है– "अक्षमता मनोवैज्ञानिक, संवेगात्मक या शरीर

के किसी अंग की क्षति होती है।"

यदि कार्यों में बाधा होती है तो उसे अक्षमता कहते हैं अर्थात अक्षमता के कारण कार्य करने के तरीके में आ रही समस्या को अक्षमता कहते हैं, जैसे– रेटिना की कमी के कारण व्यक्ति के देखने की क्षमता में जो बाधा उत्पन्न हुई, उसे अक्षमता कहते हैं। इसमें व्यक्ति की व्यक्तिगत क्रिया बाधित हो जाती है।

अक्षमता के सन्दर्भ में 1950 में कई परिभाषाएँ दी गई थी जो समयानुसार सही नहीं साबित हुई। इसका मुख्य कारण उन परिभाषाओं की अस्पष्टता थी।

ए. एम. कमेटी द्वारा 1958 में क्षति को स्थायी अक्षमता के मापदण्ड का आधार मानकर निम्नलिखित मॉडल पेश किया गया–

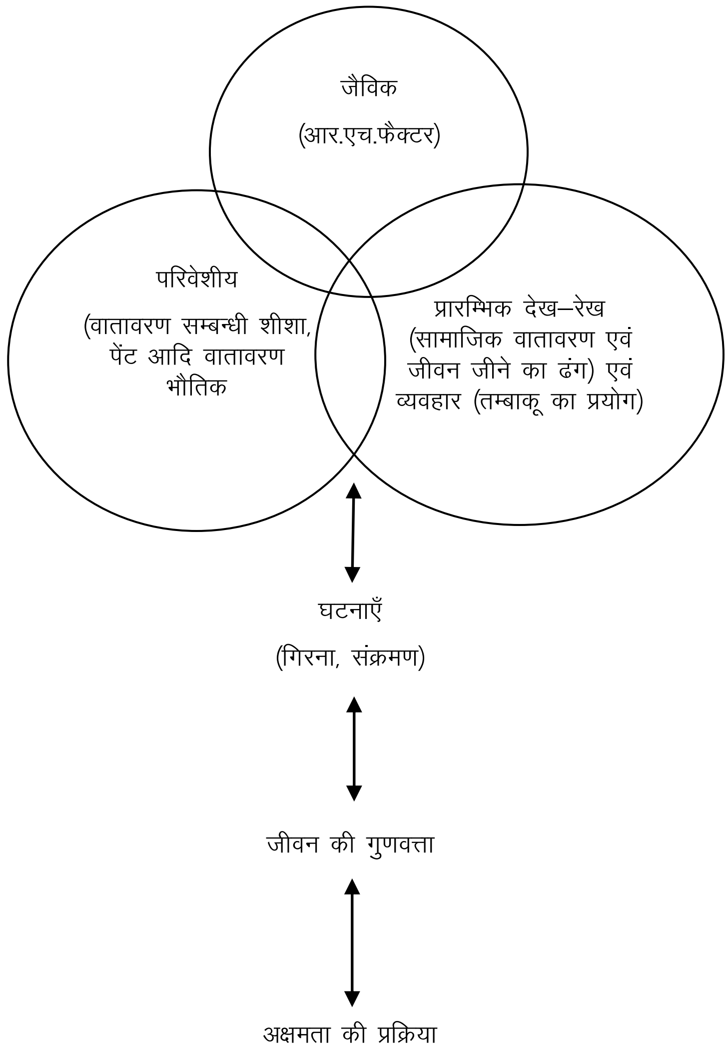

रोग चिकित्सा विज्ञान सामान्य शारीरिक संरचना प्रक्रिया में अवरोध से है।	➢ क्षति	➢ कार्य–कलाप सम्बन्धी सीमितता	➢ अक्षमता
जिसमें शरीर में असामान्य कारकों के कारण व्यक्ति में संरचनात्मक एवं क्रियाकलापों में परिवर्तन आ जाता है।	➢ हानि या असामान्यताएँ एवं मानसिक, भावात्मक, शारीरिक, मनोवैज्ञानिक या शारीरिक संरचना अथवा क्रिया–कलाप सम्बन्धी क्षति होती है।	➢ क्षति के कारण क्रियाओं को करने में अवरोध जो सामान्यतः अपेक्षित है।	➢ अक्षमता के कारण सामाजिक एवं भौतिक पर्यावरण में व्यक्ति की अपेक्षित क्रियाओं एवं कार्य में सीमितता या असमर्थता जो कि अपेक्षित है।

दिव्यांगता (Handicapped)— दिव्यांग व्यक्ति की भौतिक, शारीरिक और मानसिक स्थितियों के साथ—साथ उससे सम्बन्धित क्रिया—कलापों से उत्पन्न एक प्रकार का सामाजिक स्वरूपता है जिसका आकलन व्यक्ति के मनोसामाजिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। जो स्थान, समय, परिस्थिति तथा सामाजिक भूमिका से भी सम्बन्धित हो सकती है। अर्थात दिव्यांगता, व्यक्ति की वह दशा है जो क्षति एवं अक्षमता के कारण उत्पन्न शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं सम्बन्धी भूमिकाओं को सामान्य व्यक्तियों की तुलना में निर्वाह करने में बाधक होती है। दिव्यांगता का यह सामाजिक स्वरूप, वातावरण को परिलक्षित करता है।

इंटरनेशनल क्लासीफिकेशन ऑफ इम्पेयरमेंट, डिसेबिलिटीस एंड हैंडीकैप्ड के अनुसार "व्यक्ति में उम्र, लिंग, सामाजिक, सांस्कृतिक कारकों में क्षति एवं अक्षमता के कारण जो नुकसान या पिछड़ापन हो जाता है, उसे दिव्यांगता कहते हैं। इसमें व्यक्ति की स्थिति एवं सामाजिक क्रियाएँ बाधित हो जाती हैं, जैसे— एक व्हील चेयर के योग्य व्यक्ति सीढ़ी नहीं चढ़ पाता है, दिव्याङ्ग कहलाता है। कभी—कभी बिना अक्षमता के भी क्षति दिव्यांगता में बदल सकती है। आरपीडबल्यूडी 2016 के अनुसार ''दिव्यांगजन'' से ऐसे दीर्घकालिक शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदी हानि वाला व्यक्ति अभिप्रेत है जिससे बाधाओं का सामना करने में अन्य व्यक्तियों के साथ समान रूप से समाज में पूर्ण और प्रभावी भागीदारी में रूकावट उत्पन्न होती है।

धारणाओं की एकरूपता—

यदि धारणाओं की एकरूपता को संक्षिप्त में देखें तो अन्तःस्तर में किसी प्रकार की कमी, क्षति या क्षति के फलस्वरूप कार्य करने में जो बाधा उत्पन्न होती है, उसे अक्षमता कहते हैं। क्षति एवं अक्षमता के कारण जब व्यक्ति सामाजिक मापदण्डों को पूरा नहीं कर पाता है तो उसे दिव्यांगता कहते हैं। अतः इसे इस प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है—

बीमारी (रोग) ⟶ क्षति ⟶ अक्षमता ⟶ दिव्यांगता

इसी सन्दर्भ में सन् 1964, 1965 एवं 1969 में नेगी द्वारा आपस में सम्बन्धित अवधारणाओं को इस प्रकार से चार भागों में बाँटा गया है—

सक्रिय रोग चिकित्सा	क्षति की अवधारणा	क्रिया कलाप सम्बन्धी	अक्षमता
⟶ किसी भी संक्रमण, आघात उपापचय सम्बन्धी असन्तुलन, क्षति या ह्रास सम्बन्धित बीमारियाँ या अन्य रोग निदान कारकों के परिणाम अन्य रोग निदान कारकों के परिणाम है। स्वरूप होता है।	⟶ शारीरिक संरचना मानसिक, भावात्मक हानि या असमान्यता को बताती है।	⟶ सीमितता एवं क्षति शारीरिक प्राणी की क्षमता को प्रभावित किए बिना उसकी संरचनात्मक कार्य प्रणाली प्रभावित होता है।	⟶ व्यक्ति की कार्य प्रणाली को कम बल्कि व्यक्ति का सामाजिक तत्व अधिक बताती है।

इसी सन्दर्भ में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने दिव्यांगता को परिभाषित करते हुये अक्षमता एवं असमर्थता में भिन्नता भी बतलाई है।

अक्षमता उस समय तक होगी जब तक चश्मा लगाने से ठीक दिखाई देता है। अक्षमता सदैव अंग स्तर की होती है। अक्षमता के कारण यदि व्यक्ति का कार्य या शिक्षा प्रभावित होती है, तो दिव्यांगता कहलाती है। अतएव

असमर्थता के कारण अपनी आयु, लिंग व सामाजिक भागीदारी के सापेक्ष एक या एक से अधिक क्रियाओं को न कर पाने में कठिनाई को दिव्यांगता कहते हैं। कुछ दशक पहले तक अक्षम व्यक्ति को असमर्थ भी कहा जाता था। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार अक्षमता के कारण सामाजिक या आर्थिक हानि असमर्थता कहलाती है। उदाहरण के लिए बिना पैर का व्यक्ति जब अपना कार्य या अन्य कार्य ठीक से करता है तो उसे दिव्याङ्ग नहीं कहा जा सकता। परन्तु जब उसका नियोक्ता उसे अन्य से विभेद करता है तो उसे असमर्थता कहेंगे। इसी प्रकार एक कृत्रिम पैर होते हुये भी प्रसिद्ध नर्तकी सुधा चन्द्रन की अक्षमता को असमर्थता नहीं कहा जा सकता है।

दुर्भाग्यवश सभी प्रकार की दिव्यांगता के बारे में लोग पूर्वाग्रह से ग्रस्त हैं। प्रायः यह समझा जाता है कि किसी एक संवेदी अंग या शरीर के भाग की अक्षमता व्यक्ति की शैक्षिक या उत्पादक क्रियाएँ करने की योग्यता को घटाती है। यह बात अब भी समझ से परे है जबकि विश्व के अनेक नेता तथा शिक्षाविद् दिव्यांगता से ग्रस्त रहे हैं। अनेकों दिव्याङ्ग व्यक्तियों ने विज्ञान, साहित्य व ललित कला के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

3.4 मानवाधिकार आधारित उपागम का अक्षमता के लिए निहितार्थ (Implications of Human Right Based Approach for Disability)

मानवाधिकार आधारित उपागम अपनाने का सर्वप्रथम निहितार्थ यह है कि इसके द्वारा दिव्यांग व्यक्ति भी मुख्य धारा में सम्मिलित हो गये हैं। दूसरा महत्व यह है कि इसके द्वारा लोगों का दिव्यांगों के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तित हो गया है। जो पहले दया आधारित था वह अब अधिकार आधारित हो गया है। उसका तीसरा महत्व यह है कि दिव्यांगों के अधिकारों को सुरक्षित करने के लिये राज्यों को दायित्व का निर्धारण करना होता है। चौथा यह कि यह दृष्टिकोण पारगमन सम्बन्धी दायित्वों की मांग करता है। ये चारों महत्व दिव्यांगों के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। हालांकि इसके क्रियान्वयन में कई कठिनाइयाँ भी हैं। मानवाधिकार आधारित उपागम का अक्षमता हेतु निम्नलिखित निहितार्थ है–

- इसके कारण हम उस असमान शक्ति सम्बन्धों की पहचान कर पाते हैं जो दिव्यांगों को उनके मानवाधिकारों से वंचित रखता है। इससे भेदभाव तथा सामाजिक बहिष्कार आदि से उन्हें मुक्त किया जा सकता है।
- एक प्राकृतिक विविधता के तत्व के रूप में एक दिव्यांग व्यक्ति को सम्मान मिलता है। यह पूर्वाग्रहों तथा अन्य बाधाओं को दूर करते हुए उसकी विशिष्टता को सम्बोधित करता है।
- इसके द्वारा दिव्यांग व्यक्तियों को अन्य व्यक्तियों के साथ समान आधार पर अधिकारधारक के रूप में मान्यता मिलती है।
- यह दिव्यांग व्यक्तियों को सशक्त बनाता है, जिससे वे समाज के सभी क्षेत्रों में भाग ले रहे हैं।
- समाज में दिव्यांग व्यक्तियों के समावेश के लिए सरकार की जिम्मेदारी को तय किया गया है ताकि एक बाधा मुक्त वातावरण तैयार किया जा सके।
- दिव्यांग व्यक्तियों की सहभागिता को बढ़ाते हुए यह व्यक्तियों के बीच संवाद को बढ़ावा देता है।

इस प्रकार मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण को अपनाने से दिव्यांग व्यक्तियों की सहभागिता में वृद्धि होती है तथा वे सशक्त होते हैं।

3.5 अक्षमता तथा क्षेत्रीयता की समानता की आवश्यकता एवं महत्व (Need and Importance of Equality of Disability and Regionalism)

अक्षमता तथा क्षेत्रीयता की समानता की शिक्षा का औचित्य वर्तमान में अत्यधिक है, क्योंकि किसी भी राष्ट्र के ये विभेदक तत्त्व हैं जिससे अराजकता और अलगाव फैलता है। इनकी शिक्षा की आवश्यकता समानता हेतु अत्यधिक है, जिसका विवरण निम्न प्रकार है–

1. लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना हेतु

2. अनिवार्य तथा सार्वभौमिक शिक्षा हेतु
3. आत्मनिर्भरता हेतु
4. राष्ट्रीय एकता हेतु
5. राष्ट्र से व्यक्ति की ओर विकेन्द्रित विकास हेतु
6. संवैधानिक प्रावधानों की सफलता हेतु
7. अराजकता तथा अलगाव से बचने हेतु

1. **लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना हेतु**– लोकतन्त्र सभी को समान मानता है और अपने सभी नागरिकों की सहभागिता चाहता है। लोकतांत्रिक मूल्यों अर्थात् प्रेम, सहानुभूति, भ्रातृत्व इत्यादि के भाव का विकास इन मूल्यों की स्थापना अक्षमों की उपेक्षा करके कदापि पूर्ण नहीं हो सकता। अतः लोकतांत्रिक मूल्यों और इसकी सुदृढ़ता के लिए शारीरिक रूप से अक्षम और सभी क्षेत्र के लोगों की सहभागिता पर बल दिया जाना चाहिए।

2. **अनिवार्य तथा सार्वभौमिक शिक्षा हेतु**– कोई भी राष्ट्र शिक्षा की उन्नति के बिना अपनी उन्नति का स्वप्न भी नहीं देख सकता है, अतः सभी की अनिवार्य और सार्वभौमिक शिक्षा का स्वप्न तब तक अपूर्ण रह जायेगा जब तक अक्षमों और सभी क्षेत्रों के निवासियों की शिक्षा में समुचित भागीदारी सुनिश्चित नहीं की जायेगी। इस प्रकार अक्षमों और क्षेत्रीय आधार पर शिक्षा की आवश्यकता तथा महत्व देश की उन्नति के लिए अत्यधिक है।

3. **आत्मनिर्भरता हेतु**– अक्षमों के विषय में यह धारणा प्रचलित है कि वे दूसरों के सहारे और दया के पात्र हैं, परन्तु शिक्षा के द्वारा उन्हें आत्मनिर्भर बनाकर जीविकोपार्जन योग्य और देश की उन्नति के कार्यों में संलग्न किया जा सकता है। इसी प्रकार जो क्षेत्रीय असमानतायें व्याप्त हैं उनका निराकरण करने के लिए क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप पाठ्यक्रम तैयार कर, उसका समुचित क्रियान्वयन करके आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है। आत्मनिर्भर व्यक्ति देश की उन्नति में भी मदद करता है।

4. **राष्ट्रीय एकता हेतु**– राष्ट्रीय एकता के विकास में क्षेत्रीयता अत्यधिक घातक है। अतः क्षेत्रीयता की सकारात्मक भूमिका के लिए सभी व्यक्तियों को समानता और शिक्षा की आवश्यकता होती है, जिससे उन्हें सकारात्मक दिशा की ओर ले जाया जा सके। अक्षम व्यक्तियों को यदि समुचित शिक्षा और स्थान नहीं मिलता है तो वे भी राष्ट्रीय एकता और अखण्डता में बाधा उत्पन्न कर सकते हैं। अतः राष्ट्रीय एकता के लिए इनकी समानता और शिक्षा का औचित्य अत्यधिक है।

5. **राष्ट्र से व्यक्ति की ओर विकेन्द्रित विकास हेतु**– शिक्षा के बिना व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र के विकास की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है। अक्षमता तथा क्षेत्रीय आधार पर भेदभाव न करके सभी के साथ समानतापूर्ण व्यवहार किया जाना चाहिए क्योंकि उन्नत राष्ट्र में वहाँ के उन्नत नागरिकों का ही योगदान होता है।

6. **संवैधानिक प्रावधानों की सफलता हेतु**– भारतीय संविधान अपनी उद्देशिका में ही यह स्पष्ट कर देता है कि वह अपने सभी नागरिकों को समानता, स्वतंत्रता तथा न्याय प्रदान करेगा। संविधान द्वारा किये गये समानता, स्वतन्त्रता तथा न्याय विषयी प्रावधान तब तक अपूर्ण ही रह जायेंगे जब तक अक्षमता के शिकार और क्षेत्रवाद के आधार पर भेदभाव होता रहेगा। अतः संवैधानिक प्रावधानों की सफलता हेतु इनकी शिक्षा समान रूप से कराये जाने का औचित्य अत्यधिक है।

7. **अराजकता तथा अलगाव से बचने हेतु**– किसी भी प्रकार का भेदभाव और असमानतापूर्ण व्यवहार व्यक्ति को कुण्ठित तथा अवसादग्रस्त बनाता है और ऐसा व्यक्ति अराजकतापूर्ण क्रियायें तथा अलगाव फैलाने वाले कार्यों में संलग्न हो जाता है। अतः क्षेत्रीयता और अक्षमता को भेदभाव का आधार न बनाकर इनको भी समान धारा में लाने हेतु प्रयास करने चाहिए।

3.6 अक्षमता तथा क्षेत्रीयता की समता तथा समानता का औचित्य (Propriety of Equity and Equality of Disability and Regionalism)

उपर्युक्त समस्याओं के अवलोकन के पश्चात् इन्हें दूर करने के प्रयास किये जाने चाहिए। व्यक्तिगत, सामूहिक, निजी और सरकारी स्तर पर अक्षमता और क्षेत्रीयता की समता के औचित्य के निम्न प्रकार हैं–

1. देश की एकता तथा विकास हेतु
2. लोकतन्त्र की सफलता हेतु
3. शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु
4. स्वावलम्बन हेतु
5. जागरूकता हेतु
6. गतिशील समाज की स्थापना हेतु

1. **देश की एकता तथा विकास हेतु**– देश की एकता और विकास के लिए अक्षम और क्षेत्रीय असमानता की समाप्ति करना अत्यावश्यक है। अक्षमों और क्षेत्रीय आधार पर यदि भेदभावपूर्ण व्यवहार किया गया तो यह वंचित वर्ग देश–विरोधी गतिविधियों, नकारात्मक कृत्यों में संलग्न हो जायेगा, जिससे देश की एकता और अखण्डता पर खतरा आ जायेगा। देश के विकास के लिए भी प्रत्येक व्यक्ति का योगदान आवश्यक होता है, क्योंकि सबके भीतर कुछ गुण निहित होते हैं। अतः देश की एकता और विकास कार्य हेतु अक्षमों और क्षेत्रीयता के भेदभावों को हटाकर समानता का अधिकार और स्थान प्रदान करना औचित्यपूर्ण है।

2. **लोकतन्त्र की सफलता हेतु**– लोकतन्त्र की नींव वहाँ के नागरिक होते हैं तथा लोकतन्त्र समता, स्वतन्त्रता और न्याय में आस्था रखता है। अतः लोकतन्त्र की सफलता के लिए अक्षमों और क्षेत्रीय सभी व्यक्तियों की समानता का औचित्य अत्यधिक है।

3. **शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु**– भारतीय संविधान की धारा 45 के अनुसार 14 वर्ष तक सबको अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था का शिक्षा के सार्वभौमीकरण का प्रयास किया गया है जो अक्षमों की समानता और क्षेत्रीयता के आधार पर किये जाने वाले भेदभावों की समाप्ति करके ही हो सकती है।

4. **स्वावलम्बन हेतु**– अक्षमतायुक्त व्यक्ति और क्षेत्रगत आधार पर यदि भेदभाव किया जाता रहा हो तो एक बड़ी जनसंख्या देश पर बोझ स्वरूप हो जायेगी क्योंकि यह अन्यों, जैसे परिवार अपने समूह और समुदाय पर ही आश्रित है। अतः ऐसे में इनकी समानता का औचित्य अत्यधिक है। क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा विशेषतः व्यावसायिक कुशलता और अक्षमों को भी उनकी सामर्थ्य के अनुरूप कार्यों और कौशलों में दक्ष बनाकर स्वावलम्बी बनाना चाहिए जिससे वे स्वस्थ समाज और राष्ट्रों के निर्माण में अपना योगदान दे सकें।

5. **जागरूकता हेतु**– जागरूकता जब तक समाज के प्रत्येक वर्ग, तबके, व्यक्ति और क्षेत्र तक में नहीं जाग्रत की जायेगी, तब तक राजनीति, सामाजिक प्रथाओं, लैंगिक विभेदों, जाति–पाँति, छुआछूत, और भी तमाम असमानताओं तथा बुराइयों को समाप्त नहीं किया जा सकता। इस प्रकार अक्षमों और क्षेत्रीय भेदभाव के शिकार व्यक्तियों को समानता प्रदान कर जागरूक करके ही अच्छे समाज, राष्ट्र तथा विश्व का स्वप्न साकार किया जा सकता है।

6. **गतिशील समाज की स्थापना हेतु**– गतिशील समाज की स्थापना तभी की जा सकती है जब सभी के साथ समानता का व्यवहार किया जाये। इस प्रकार के समाज की स्थापना हेतु अक्षमता और क्षेत्रीयता के आधार पर भेदभाव न करके उनको भी समाज की अग्रणी धारा से जोड़ना चाहिए तभी एक गतिशील तथा विकासोन्मुखी समाज की स्थापना हो सकेगी। गतिशील समाज में रूढ़ियाँ, अन्धविश्वास, जाति, लिंग आदि भेदभाव नहीं होते, ऐसा समाज उदार दृष्टिकोण सम्पन्न होता है।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 1– अक्षमता और क्षेत्रीयता की समता के औचित्य के दो प्रकार बताइये।

उत्तर– ....

प्रश्न 2– आरपीडबल्यूडी 2016 के अनुसार दिव्यांगजन को परिभाषित कीजिये।

उत्तर– ....

3.7 अक्षमता के लिए निहितार्थ (Implications for Disability)

3.7.1 सशक्तिकरण (Empowerment)–

अक्षमता एक मानवाधिकार के रूप में मान्यता प्राप्त करने वाला महत्वपूर्ण विषय है। इसमें हमें अक्षम व्यक्तियों के अधिकारों का सम्मान करना, उन्हें समाज में समरसता का हिस्सा बनाना और समृद्ध और सकारात्मक जीवन जीने के लिए संसाधन प्रदान करना शामिल होता है। अक्षमता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखना हमारे समाज के विकास और समृद्धि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

अक्षमता के लिए सशक्तिकरण का मतलब है कि हम अक्षम व्यक्तियों को उनके शक्तियों और क्षमताओं के आधार पर समर्थ बनाएँ ताकि वे अपने सामर्थ्य को पूरी तरह से विकसित कर सकें और सकारात्मक ढंग से अपने जीवन का प्रबन्धन कर सकें। इसके लिए समाज, सरकार और विभिन्न संगठनों को मिलकर काम करने की आवश्यकता होती है। सशक्तिकरण लोगों व समुदायों में स्वायत्तता तथा आत्मनिर्णयन की भावना है। यह उन्हें अपने स्वयं के अधिकार पर कार्य करते हुए एक जिम्मेदार व स्व–निर्धारित तरीके से अपने हित का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम बनाता है। यह विशेष रूप से अपने जीवन को नियंत्रित करने और अपने अधिकारों का दावा करने में मजबूत और अधिक आत्मविश्वासी बनने की प्रक्रिया है। सशक्तिकरण शक्तिहीनता तथा प्रभाव की कमी की भावना को दूर करने और अपने संसाधनों को पहचानने और उपयोग करने में सक्षम बनाता है।

अक्षम व्यक्तियों को समाज में सम्मान दिलाने, उन्हें समानता और उच्चता के साथ देखने, उन्हें समाज के विभिन्न क्षेत्रों में सक्रिय भागीदार बनाने और उन्हें विभिन्न स्वयंसेवी व स्व–रोजगार अवसरों के लिए प्रोत्साहित करने से अक्षमता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण आता है। साथ ही, अक्षम व्यक्तियों के शिक्षा व प्रशिक्षण को प्रोत्साहित करने से उन्हें अधिक समर्थ बनाया जा सकता है, जिससे वे अपनी आर्थिक स्थिति को सुधार सकते हैं। इसके लिए सरकारी योजनायें और निजी संगठनों के सहयोग की आवश्यकता होती है।

अक्षमता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने से समाज में अक्षम व्यक्तियों को समान अवसर मिलतें हैं और उन्हें अपने सपनों को पूरा करने का सामर्थ्य प्राप्त होता है। इससे न केवल उनके स्वयं का विकास होता है, बल्कि समाज के विकास में भी योगदान मिलता है। इस प्रकार अक्षमता को सशक्तीकरण के माध्यम से देखने से हम समाज में सम्पूर्ण समरसता और समृद्धि की ओर एक प्रगतिशील कदम बढ़ाते हैं। सभी व्यक्तियों के समान अधिकार और अवसरों का सम्मान करके हम समृद्ध और समरस समाज का निर्माण कर सकते हैं।

अक्षमता के प्रति समाज में सकारात्मक दृष्टिकोण रखना हमारे समाज के लिए अगर सकारात्मक परिवर्तन की ओर एक महत्वपूर्ण कदम है, तो यह उन व्यक्तियों के लिए एक महान संघर्ष भी है जो अक्षमता के साथ जीवन यापन कर रहे हैं। इस प्रकार के समारोहों और कार्यक्रमों के माध्यम से हम समझ सकते हैं कि अक्षमता न केवल एक व्यक्ति की व्यक्तिगत समस्या है, बल्कि इसका समाधान समस्त समाज के संघर्ष और समरसता का भाग भी है।

अक्षम व्यक्तियों को समाज में सम्मान देने से न केवल उनका स्वयं सम्मान बढ़ता है, बल्कि यह भी साबित करता है कि समाज एक सजीव संरचना है जिसमें सभी व्यक्तियों को समानता के साथ शामिल किया जाता है। अक्षमता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने के लिए हमें विभिन्न प्रकार के नकारात्मक सिद्धान्तों से दूर रहने की आवश्यकता है और हमें सभी को समान अधिकारों तथा अवसरों का लाभ उठाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। अक्षमता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखना हमारे अन्दर सहानुभूतिपूर्ण भावना का विकास करता है, जिससे हम

समझते हैं कि हम सभी में कुछ अलग हो सकता है, लेकिन हमारी मूल इंसानियत एक है। इससे हम अपने आस–पास के अक्षम समुदाय के साथ एक संवेदनशील, सहयोगी और समरस सम्बन्ध बना सकते हैं।

अक्षमता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने से समाज में अक्षम व्यक्तियों को अपने सामर्थ्य को पूरी तरह से विकसित करने और अपने सपनों को पूरा करने के लिए अधिक अवसर मिलते हैं। समाज में अक्षमता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण बढ़ाने के लिए हमें एक संवेदनशील माहौल बनाने की आवश्यकता होती है, जिससे हम अक्षम व्यक्तियों को समर्थ व सशक्त बनाने के लिए उन्हें आवश्यक समर्थन व संरक्षण प्रदान करते हैं। इसके लिए सरकारी नीतियों के संशोधन, शिक्षा प्रणाली में सुधार और समाज में जागरूकता को बढ़ाने की आवश्यकता होती है। अक्षमता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण हमें समझाता है कि हमारे समाज में सभी व्यक्तियों के योगदान को स्वीकारना महत्वपूर्ण है, चाहे वे किसी भी रूप में हो। इससे हम दिव्याङ्ग समुदाय के साथ एक समरस समाज का निर्माण कर सकते हैं और सभी को अपने सपने को पूरा करने का अधिकार मिलता है।

3.7.2 प्रवर्तनीयता (Enforceability)–

अक्षमता के अधिकारों को प्रवर्तनीयता के साथ प्रयोग करना समावेशी एवं सम्मानित दिव्याङ्ग समुदाय के निर्माण में महत्वपूर्ण है। यह संकल्पना है कि प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकारों और अवसरों के लिए विशेष संरक्षण व समर्थन प्रदान किया जाना चाहिए। अक्षमता के अधिकारों को प्रवर्तनीयता के साथ सुनिश्चित करके समाज उन्हें एक समरसतापूर्ण व समर्थ समाज का हिस्सा बनाता है।

अक्षमता में प्रवर्तनीयता एक महत्वपूर्ण संकेतक है जो अक्षमता के प्रति समाज के दायित्व को दर्शाता है। यह शब्द 'enforceability' अक्षम व्यक्तियों के अधिकारों और सुरक्षा की सुनिश्चितता को समझाता है और समाज द्वारा उन्हें सम्मानित रखने और समर्थन प्रदान करने के प्रति संकल्पित होने का संकेत करता है।

अक्षमता में प्रवर्तनीयता से तात्पर्य है कि अक्षम व्यक्तियों को समाज में समानता के साथ जीवन जीने के अधिकारों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और उन्हें समर्थन प्रदान किया जाना चाहिए जिससे वे अपने पूर्णता को प्राप्त कर सकें और आत्मनिर्भर बन सकें। इससे अक्षम व्यक्तियों को समाज में समान अवसरों और सुविधाओं का लाभ मिलता है और उन्हें अपनी सार्थकता को प्राप्त करने के लिए समर्थता मिलती है। अक्षमता में प्रवर्तनीयता एक सकारात्मक सन्देश देता है कि समाज अक्षम व्यक्तियों के साथ संवेदनशील और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने के लिए तत्पर है और उन्हें सम्मान के साथ जीवन जीने का अधिकार प्रदान करता है। प्रवर्तनीयता के प्रति संवेदनशीलता से सरकार, संगठन और समाज में अक्षम व्यक्तियों के अधिकारों को सम्पादन योग्य बनाने के लिए नीतियों और कानूनों का पालन करते हुए उन्हें सामाजिक समरसता व सम्मान के साथ जीवन जीने की सुनिश्चितता मिलती है। अक्षमता के अधिकारों को प्रवर्तनीयता के साथ पालन करने से समाज में संघर्ष, विचार–विमर्श और नागरिकता के मूल्यों का सम्मान बढ़ता है। इसके लिए, सभी स्तरों पर सशक्त और प्रभावी नीतियों के निर्माण, संशोधन और प्रचार–प्रसार की आवश्यकता होती है। विभिन्न सरकारी योजनाओं, नीतियों और कानूनों को प्रवर्तनीयता से पूर्ण बनाने से अक्षम व्यक्तियों को समाज में एक उच्च स्थान प्राप्त होता है। अक्षमता के अधिकारों की प्रवर्तनीयता से समाज में समरसता की भावना और सम्मान की संकल्पना को बढ़ावा मिलता है। इससे अक्षम व्यक्तियों को स्वतन्त्रता, समानता एवं गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार होता है, जिससे समाज में विभिन्न क्षेत्रों में उनकी भागीदारी एवं योगदान को प्रोत्साहित किया जा सके। अक्षमता के प्रति प्रवर्तनीयता के माध्यम से हम समाज में एक सकारात्मक परिवर्तन ला सकते हैं और अक्षम व्यक्तियों को समाज में सम्मान, समरसता और समावेशिता का महत्वपूर्ण भाग बना सकते हैं। इसके लिए विभिन्न क्षेत्रों में एक समरसता और समावेशी माहौल बनाने की ज़रूरत होती है, जिसमें समाज के सभी सदस्यों को एक साथ मिलकर काम करना होता है।

शिक्षा के क्षेत्र में प्रवर्तनीयता के द्वारा अक्षम विद्यार्थियों के लिए समर्थन प्रदान किया जा सकता है और उन्हें समान शिक्षा के अवसरों तक पहुँचाया जा सकता है। शिक्षा के क्षेत्र में समरसता का विकास होने से, अक्षम विद्यार्थियों को विशेष शिक्षा या सामान्य शिक्षा में भागीदारी का मौका मिलता है जिससे उनका विकास तथा समावेशन हो सकता है।

रोजगार के क्षेत्र में प्रवर्तनीयता के द्वारा अक्षम व्यक्तियों को समर्थ बनाने और रोजगार के अवसरों में उन्हें सहायता प्रदान करते हैं। अक्षमता के प्रति प्रवर्तनीयता से, समाज में उन्हें अपने क्षेत्र में अधिक सक्रियता

दिखाने का मौका मिलता है जिससे वे स्वयं को आर्थिक रूप से सशक्त बना सकते हैं। विभिन्न संगठनों, नेतृत्व के सहयोग और समाज में संवेदनशीलता से समाज में अक्षमता के प्रति प्रवर्तनशीलता को सशक्त बना सकते हैं। समाज में अक्षम व्यक्तियों को समान अधिकारों और सुविधाओं का लाभ मिलने से समाज में समरसता एवं समृद्धि के मार्ग पर एक सकारात्मक परिवर्तन ला सकते हैं। अक्षमता के प्रति प्रवर्तनीयता के द्वारा समाज में सम्मान, समरसता एवं समावेशिता के मूल्यों को बढ़ावा देते हैं और समाज के सभी सदस्यों को एक साथ मिलकर विकसित करने का मौका मिलता है।

इस प्रकार अक्षमता के प्रति प्रवर्तनीयता से हम समाज में समावेशिता, समरसता और समृद्धि के मार्ग पर अग्रसर हो सकते हैं। अक्षमता व्यक्तियों को समान अधिकारों और अवसरों का लाभ मिलने से समाज में एक न्यायसंगत, समावेशी और समरस समाज का निर्माण होता है, जहाँ सभी का सम्मान किया जाता है और सभी को एक साथ मिलकर प्रगति के मार्ग पर आगे बढ़ने का अवसर मिलता है।

3.7.3 अविभाज्यता (Indivisibility)–

अक्षमता में अविभाज्यता एक महत्वपूर्ण सन्देश है जो अक्षम व्यक्तियों के सम्मान, समरसता और समावेशिता को संकेत करता है। यह सिद्धान्त बताता है कि अक्षमता एक व्यक्ति के जीवन में उनके भाग्यविधाता या कर्म के अधीन नहीं होती है, बल्कि यह समाज में सम्पूर्णता और समरसता के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में स्थायी रूप से स्थान पाती है। अक्षमता में अविभाज्यता के अनुसार, हर व्यक्ति का अधिकार होता है अपने पूर्णता को प्राप्त करने का, समाज में सम्मान के साथ जीवन जीने का और समरस समाज में सक्रिय रूप से भागीदारी करने का।

अक्षमता में अविभाज्यता का तात्पर्य है कि हमें अक्षम व्यक्तियों के समाज में समानता के साथ जीवन जीने के अधिकारों को प्रोत्साहित करने और उन्हें समाज में सक्रियता और समानता के साथ शामिल करने की आवश्यकता है। अक्षमता में अविभाज्यता भावना के साथ, समाज को अक्षम व्यक्तियों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा करने और समर्थन प्रदान करने में सक्षम बनाना चाहिए इससे अक्षम व्यक्तियों को समाज में समान अवसरों और सुविधाओं का लाभ मिलता है और उन्हें अपनी सार्थकता को प्राप्त करने के लिए समर्थता मिलती है। अक्षमता में अविभाज्यता एक सकारात्मक सन्देश देता है कि समाज अक्षम व्यक्तियों के साथ संवेदनशील और सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करने के लिए तत्पर है और उन्हें समर्थन और सम्मान के साथ जीवन जीने का अधिकार प्रदान करता है।

अक्षमता की अविभाज्यता की अवधारणा वह सन्देश है जो दर्शाता है कि अक्षमता को व्यक्ति की पहचान और अनुभवों के विभिन्न पहलुओं से अलग नहीं किया जा सकता है। यह बताता है कि अक्षमता केवल एक चिकित्सकीय स्थिति नहीं है, बल्कि व्यक्ति के जीवन का एक अभिन्न अंग है, जो सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणिक कारकों के साथ प्रभावित होता है। यहाँ देखा जाएगा कि अक्षमता की अविभाज्यता को कैसे समझा जा सकता है–

1. **अक्षमता के सामाजिक प्रतिमान**– अक्षमता के सामाजिक प्रतिमान का महत्वपूर्ण योगदान है जो अक्षम व्यक्तियों की अविभाज्यता को समझने में मदद करता है। इस प्रतिमान के अनुसार, अक्षमता किसी व्यक्ति का स्वाभाविक गुण नहीं है, बल्कि यह समाज द्वारा रखी गई बाधाओं का परिणाम है, जो अक्षम व्यक्तियों के समावेशन और सम्मान को रोकती है। इस दृष्टिकोण से, समाज में समावेशी बदलाव और अनुकूलन से अक्षमता के प्रति अविभाज्यता को समर्थन किया जा सकता है।

2. **समग्र दृष्टिकोण**– अक्षमता को समझने में समग्र दृष्टिकोण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिसमें व्यक्ति के जीवन के विभिन्न पहलुओं जैसे शारीरिक, भावनात्मक, मानसिक और सामाजिक पहलुओं को शामिल किया जाता है। यह स्वीकार करता है कि अक्षम व्यक्ति के जीवन के हर पहलू को देखा जाना चाहिए और समर्थन सेवाएँ, पहुँच सम्बन्धी उपाय और सामाजिक परिवर्तन के माध्यम से समस्त पहलुओं का समावेशन किया जाना चाहिए।

3. **एकता सिद्धान्त**– अक्षमता में अविभाज्यता का सिद्धान्त एकता से जुड़ा है। यह सिद्धान्त बताता है कि हमारी सामाजिक संरचना में हमें अक्षम व्यक्तियों को विशेष समानता और समरसता के साथ समावेश

करने की आवश्यकता है। अक्षमता को समाज के मुख्य स्तम्भ से बाहर रखकर हम समाज को समरस और समर्थ बनाने में सक्रिय हो सकते हैं।

4. **समानता**— अक्षमता में अविभाज्यता के अंतर्गत समानता का ध्यान रखना महत्वपूर्ण है। समानता से तात्पर्य है समाज के अलग—अलग सदस्यों को समान अवसर व सुविधायें प्रदान करना चाहे वे अक्षम हों या न हों। समानता की प्रेरणा से हम अक्षम व्यक्तियों को समाज में बिना भेद—भाव के समावेश कर सकते हैं और उन्हें सामान अवसर मिल सकते हैं।

5. **समाज में जागरूकता**— अक्षमता की अविभाज्यता को समझने के लिए समाज में जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता होती है। समाज में जागरूकता बढ़ाने से, हम सभी अक्षम व्यक्तियों के अधिकारों को समझ सकते हैं और उन्हें समाज में सामान अवसर एवं सुविधाएँ प्रदान करने के लिए सक्रिय रूप से काम कर सकते हैं।

6. **शिक्षा एवं प्रशिक्षण**— अक्षमता की अविभाज्यता को समझने के लिए शिक्षा एवं प्रशिक्षण का महत्वपूर्ण योगदान होता है। अक्षम व्यक्तियों को समाज में समावेशी बनाने के लिए उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा और विशेष प्रशिक्षण के माध्यम से उन्हें सामान अवसरों तक पहुँचाया जा सकता है। शिक्षा के माध्यम से अक्षम व्यक्ति अपने सामर्थ्य को विकसित करके समाज में उत्कृष्ट ऊँचाइयों तक पहुँच सकते हैं।

7. **स्वास्थ्य सेवाएँ**— अक्षमता में अविभाज्यता को समझने के लिए समाज में सुविधाजनक स्वास्थ्य सेवाओं का विकास करना भी महत्वपूर्ण है। अक्षम व्यक्तियों को समाज में समान अवसर मिलने के लिए स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्ध व पूरी उपलब्धता होनी चाहिए। इससे उन्हें अपनी सेहत की देखभाल करने में सक्षमता मिलती है और सामाजिक रूप से समानता प्राप्त होती है।

8. **सामाजिक संगठन**— समाज में अक्षमता की अविभाज्यता को समझने के लिए सामाजिक संगठन का बड़ा महत्व होता है। अक्षम व्यक्ति को समाज में समान अवसर प्रदान करने के लिए सामाजिक संगठन उनके अधिकारों की रक्षा करते हैं तथा उन्हें समानता का अधिकार प्रदान कराते हैं। इसके लिए समाज में अक्षमता के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए सामाजिक संस्थानों के सहयोग का उपयोग किया जा सकता है।

9. **समाज में उच्च स्थान**— समाज के सभी सदस्यों को समझना होगा कि अक्षम व्यक्ति भी समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा है और उन्हें समान अधिकार तथा प्रगति का अवसर मिलना चाहिए।

10. **सकारात्मक परिवर्तन**— समाज में अक्षम व्यक्तियों के प्रति भेद—भाव को समाप्त करने, उन्हें समानता के साथ समाज में समावेश करने और उन्हें समरसता से जीवन जीने का मार्ग प्रशस्त करने के लिए सकारात्मक बदलाव की आवश्यकता होती है। समाज के सभी सदस्यों को अक्षम व्यक्तियों के साथ सहानुभूतिपूर्ण एवं प्रेमपूर्वक व्यवहार करने की आवश्यकता है जिससे हम एक समावेशी समाज का निर्माण कर सकें।

3.7.4 सहभागिता (Participation)—

सहभागिता एक महत्वपूर्ण शब्द है जो सामाजिक और सांस्कृतिक सन्दर्भ में अधिकारियों, संगठनों और व्यक्तियों के बीच सहभागिता और सहयोग का माध्यम बनती है। सहभागिता के माध्यम से, व्यक्ति विभिन्न गतिविधियों, कार्यक्रमों, समारोहों और नागरिक समूहों में सक्रिय भूमिका निभाते हैं और समाज में सक्रिय रूप से शामिल होते हैं।

सहभागिता अक्षमता के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण शब्द है जो समाज में अक्षम व्यक्तियों के सहभागिता एवं समरसता का माध्यम बनती है। यह संदेश देता है कि अक्षमता वाले व्यक्ति भी समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और उन्हें समानता के साथ समाज में समावेश किया जाना चाहिए। सहभागिता के माध्यम से अक्षम व्यक्ति समाज में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं और प्रतियोगिताओं में हिस्सा लेते हैं। वे स्वयं को सक्रिय, स्वावलम्बी और समर्थ मानते है जो उन्हें स्वयं के प्रति आत्मविश्वास देता है। सहभागिता के माध्यम से अक्षम व्यक्ति अपने सम्बन्धियों, समाज के लोगों और संगठनों के साथ सहयोग करते हैं और स्वयं के अधिकारों के प्रति भी जागरूक

होते हैं। अक्षम व्यक्तियों की सहभागिता कैसे सम्भव हो सकती है–

1. **जागरूकता बढ़ाना**– पहला और सबसे महत्वपूर्ण कदम है अक्षम व्यक्तियों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करना। समाज में उनके अधिकारों, सुविधाओं और सामंजस्य के बारे में लोगों को शिक्षित करना जरूरी है। जागरूकता के माध्यम से अक्षम व्यक्तियों को समाज में समानता के लिए अधिक आवाज मिलती है और उन्हें अपने अधिकारों की रक्षा करने का साहस मिलता है।
2. **संरचित संवाद का सुसंगत माध्यम**– समाज में अक्षम व्यक्तियों के साथ संरचित संवाद करना बहुत महत्वपूर्ण है। समाज के लोगों को समझना होगा कि अक्षम व्यक्ति अपनी विशेषता के कारण समाज में उत्कृष्टता दिखा सकते हैं। अक्षम व्यक्तियों की समस्याओं और सम्बन्धित सुविधाओं को समझने के लिए उनके साथ संवाद करना आवश्यक होगा।
3. **सुविधाजनक एवं सामंजस्यपूर्ण वातावरण का निर्माण**– अक्षम व्यक्तियों की सहभागिता के लिए सुविधाजनक एवं सामंजस्यपूर्ण वातावरण का निर्माण करना आवश्यक है। समाज में अक्षम व्यक्तियों के लिए सुविधाजनक संरचनाएँ तैयार करना, उन्हें शिक्षा एवं प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करना तथा समाज के सभी क्षेत्रों में समान अधिकार प्रदान करना ज़रूरी है।
4. **विभिन्न क्षेत्रों में समानता के अवसर**– समाज में अक्षम व्यक्तियों को विभिन्न क्षेत्रों जैसे कला, खेल, शिक्षा, रोजगार और अन्य क्षेत्रों में समानता के अवसर प्रदान किये जाने चाहिए ।
5. **सकारात्मक बदलाव का समर्थन**– समाज में अक्षम व्यक्तियों की सहभागिता के लिए सकारात्मक बदलाव का समर्थन करना आवश्यक है। समाज के लोगों को अक्षमता को सकारात्मक दृष्टिकोण से देखने के लिए प्रोत्साहित करना और अक्षम व्यक्तियों के साथ सहयोग करके समाज में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए प्रोत्साहित करना आवश्यक है।
6. **सम्बन्धित नीतियों का पालन**– समाज में अक्षम व्यक्तियों की सहभागिता को सुनिश्चित करने के लिए अक्षम व्यक्तियों से सम्बन्धित नीतियों का पालन करना आवश्यक है।
7. **प्रेरणा के स्रोत**– अक्षम व्यक्तियों के लिए प्रेरणा के स्रोत के विकास पर भी ध्यान देना आवश्यक है। समाज में उन्हें सक्षम एवं सफल अक्षम व्यक्तियों की कहानियाँ, उनके प्रेरक कार्यशैलियों और उनकी उपलब्धियों के बारे में जानकारी प्रदान की जानी चाहिए। इससे अक्षम व्यक्तियों के अन्दर आत्मविश्वास बढ़ता है और उनमें सकारात्मक बदलाव का संचार होता है।
8. **नए एवं नवाचारी विचार**– अक्षम व्यक्तियों की सहभागिता को सुनिश्चित करने के लिए नए एवं नवाचारी विचारों को अपनाने की आवश्यकता है। उन्हें विभिन्न क्षेत्रों में समानता के अवसर प्रदान करने के लिए नई तकनीकों, समाज सेवा योजनाओं और सहयोगी पहलों के विकास पर विचार किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 3– अक्षमता के लिए सशक्तिकरण से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– ....

प्रश्न 4– अक्षम व्यक्तियों की सहभागिता कैसे सम्भव हो सकती है? कोई दो बिन्दु बताइये।

उत्तर– ....

3.8 अक्षम व्यक्तियों हेतु शैक्षिक कार्यक्रम (Educational Program for Individual Disability)

शिक्षा की प्रकृति तथा स्तर निम्न प्रकार के हैं–

1. **पूर्व प्राथमिक शिक्षा**– पूर्व प्राथमिक स्तर पर अभिभावकों की शिक्षा का अधिक महत्व है जो बच्चों की समस्याओं को समझ सकें और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। कुछ बड़े विद्यालय पूर्व प्राथमिक स्तर पर परामर्शदाता नियुक्त करते हैं जो अभिभावकों के घरों पर जाकर परामर्श प्रदान करते हैं।

नर्सरी स्कूल– जहाँ तक सम्भव हो, अभिभावकों को अपने बच्चों को नर्सरी विद्यालय में भेजना चाहिए। नर्सरी विद्यालय अपने कार्यक्रम में थोड़ा संशोधन करके इन बच्चों को स्वीकार कर सकते हैं, इन बच्चों को अपना सकते हैं। चक्षुरोग से पीड़ित बच्चे जिनमें आत्मकेन्द्रित होने की भावना अधिक पायी जाती है, नर्सरी विद्यालय में आने पर अन्य बच्चों के साथ आदान–प्रदान तथा सहयोग करते हुए कार्य करना सीखें तो लाभप्रद सिद्ध होगा।

मानसिक रूप से पिछड़े, शिक्षित करने योग्य बालकों के शैक्षिक कार्यक्रम का गठन करते समय निम्नलिखित पाँच बातों पर ध्यान देना चाहिए–

(i) इनकी कक्षायें धीरे–धीरे करके गठित की जानी चाहिए।

(ii) प्रत्येक बच्चे का पूर्ण रूप से निदान कर लेना चाहिए।

(iii) इन बच्चों को पढ़ाने वाले अध्यापक विशेष रूप से प्रशिक्षित हों।

(iv) इन बच्चों की कक्षायें सामान्य पाठशाला के किसी एक कक्ष में लगानी चाहिए।

(v) इनका वर्गीकरण करते समय एकरूपता होनी चाहिए।

2. **शिक्षण एवं दर्शन**– इनकी शिक्षा की शिक्षण विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जो इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। इनकी शिक्षा के लक्ष्य का निर्धारण, इनकी सम्भाव्य क्षमता को ध्यान में रखते हुए शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक क्षमता के विकास के लिए होना चाहिए। ऐसे बच्चों के शैक्षिक कार्यक्रम के चार लक्ष्य होते हैं–

(i) बच्चे भाषा को विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से समझ सकें एवं उसे ग्रहण कर सकें, जैसे चक्षु, श्रवण, स्पर्श के द्वारा।

(ii) जो कुछ भी सुनने की क्षमता हो, उसका उपयोग कर सकें। लोगों को बोलते देखकर उनके होंठो को पढ़ (Lip reading) कर भाषा समझ सकें, उनकी बात समझ सकें तथा पढ़ सकें।

(iii) स्वयं बोलकर अथवा लिखकर भाषा के माध्यम से अपना विचार व्यक्त कर सकें।

(iv) शैक्षिक विषयों (Academic subjects) को अपनी मातृभाषा की सहायता से पढ़कर ज्ञान प्राप्त कर सकें।

3. **विद्यालय**– अक्षम बच्चों के लिए वर्तमान समय में कई प्रकार की शैक्षिक सुविधायें उपलब्ध हैं, जैसे– आवासीय विद्यालय, व्यक्तिगत तथा राजकीय विद्यालय एवं दिवसीय विद्यालय। दिवसीय तथा खेलने एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण के अतिरिक्त अन्य विषयों में भी शिक्षित करते हैं।

4. **उपयुक्त विद्यालय व्यवस्था**– इन बच्चों के सम्बन्ध में अभिभावकों को परामर्श देने तथा निर्देशित करने वाली संस्थाओं का यह उत्तरदायित्व होता है कि वे इन बच्चों के लिए उपयुक्त विद्यालय के विषय में जानकारी दें। अक्षम बच्चों के लिए उपयुक्त विद्यालय का चयन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

(i) स्कूल में इन बच्चों को पढ़ाने वाले प्रशिक्षित अध्यापक हो।

(ii) विद्यालय का प्रधानाचार्य तथा अन्य निरीक्षण करने वाले अध्यापक भी प्रशिक्षित हों तथा इन बच्चों को पढ़ाने का अनुभव रखते हों।

(iii) ऐसे बच्चों की संख्या इतनी हो कि उनका श्रेणीकरण आयु, क्षमता तथा शैक्षिक उपलब्धि के आधार पर किया जा सके।

(iv) विद्यालय की कक्षा में शिक्षक एवं विद्यार्थियों का अनुपात 1:8 का हो, इससे अधिक न हो।

(v) विद्यालय इन बच्चों के लिए एक विशिष्ट पाठ्यक्रम निर्धारित कर चुका हो।

इन बच्चों की शैक्षिक योजना में भी आधारभूत विषय एवं बातें अन्य बच्चों के समान ही होती हैं। अक्षमता के कारण इनकी कुछ आवश्यकतायें अतिरिक्त होती हैं जिनके कारण इनके लिए विशिष्ट शैक्षिक कार्यक्रमों को प्रदान करने की आवश्यकता होती है।

यदि कोई तीव्र बुद्धि का बालक शारीरिक अक्षमता से ग्रसित हो जाता है तो उसके लिए विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता होती है, ताकि उसमें निहित क्षमताओं का विकास बाधित न होने पाये। इसी प्रकार कभी–कभी मानसिक रूप से पिछड़े, संवेगात्मक रूप से असन्तुलित एवं संवेदिक दोष वाले बच्चे भी शारीरिक रूप से अक्षम हो जाते हैं। ऐसे बच्चों के लिए भी व्यक्तिगत रूप से योजना बनाने की आवश्यकता होती है।

यद्यपि प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा के लिए कई प्रकार के कार्यक्रमों की योजना बनायी जा सकती है, परन्तु अधिकांश के लक्ष्य एक समान होते हैं। चाहे इन प्रतिभाशाली बालकों को विशिष्ट विद्यालयों में रखकर पढ़ायें अथवा दिन के कुछ घण्टों के लिए विशिष्ट कक्षाओं में पढ़ायें, सभी योजनाओं का लक्ष्य निम्नानुसार होता है–

1. सामान्य क्षमता वाले बच्चों के लिए उपयुक्त कार्यों की व्यवस्था की जा सकती है, परन्तु प्रतिभाशाली बच्चों के लिए तीव्रगति से सीखने सम्बन्धी कार्यों की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि उनकी सीखने की गति तेज बनी रहे तथा धीमी न पड़ने पाये।
2. इन बालकों को नियमित पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कुछ अन्य विषयों को भी पढ़ाया जाना चाहिए ताकि इनके ज्ञान का अधिक विस्तार हो सके।
3. इन बालकों में शोध एवं समस्या हल करने की क्षमताओं को विकसित करना चाहिए ताकि ये मौलिक ज्ञान में योगदान दे सकें।

क्षेत्रीयता की शिक्षा के लिए परस्पर संस्कृतियों, भाषाओं इत्यादि का आदान–प्रदान किया जा रहा है। विद्यालयों में सभी संस्कृतियों तथा क्षेत्रों के लोग परस्पर अध्ययन करते हैं जिससे क्षेत्रीयता की संकीर्ण भावना समाप्त हो सके।

3.9 इकाई सारांश

इस प्रकार अक्षमों और क्षेत्रीय असमानता के शिकार व्यक्तियों की समता तथा समानता की स्थापना का औचित्य भारत में लोकतन्त्र की स्थापना के लिए अत्यावश्यक है। अक्षमों और क्षेत्रीय असमानता की खाई पाटने के लिए इनकी समानता आवश्यक है और निरन्तर इस दिशा में प्रयास किये जा रहे हैं। शिक्षा के प्रचार–प्रसार विशिष्ट विद्यालयों की स्थापना नवीन विधियों की खोज तथा नवाचारों का प्रयोग किया जा रहा है। अक्षमता के विभिन्न प्रकारों और व्यापक क्षेत्रों के कारण समता एवं समानता की भावना का प्रसार करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। एक तरफ जहाँ समावेशी शिक्षा का प्रसार तेजी से हो रहा है वहीं विशेष शिक्षा की उपयोगिता को गम्भीर अक्षम बालकों हेतु वरदान माना जाता है। समावेशी शिक्षा की चुनौतियों को क्या मानवाधिकार आधारित दृष्टिकोण द्वारा नष्ट करना सम्भव है? इस प्रश्न पर हमें विचार करने की आवश्यकता है।

3.10 बोध प्रश्न के उत्तर

1. अक्षमता और क्षेत्रीयता की समता के औचित्य के निम्न दो प्रकार हैं–

   (a) मानवता के उत्थान हेतु

   (b) प्रजातांत्रिक स्थापना हेतु

2. आरपीडबल्यूडी 2016 के अनुसार ''दिव्यांगजन'' से ऐसे दीर्घकालिक शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदी हानि वाला व्यक्ति अभिप्रेत है जिससे बाधाओं का सामना करने में अन्य व्यक्तियों के साथ समान रूप से समाज में पूर्ण और प्रभावी भागीदारी में रूकावट उत्पन्न होती है।

3. अक्षमता के लिए सशक्तिकरण का तात्पर्य है कि हम अक्षम व्यक्तियों को उनके शक्तियों और क्षमताओं के आधार पर समर्थ बनाएँ ताकि वे अपने सामर्थ्य को पूरी तरह से विकसित कर सकें और सकारात्मक ढंग से अपने जीवन का प्रबन्धन कर सकें।

4. अक्षम व्यक्तियों के लिए सहभागिता बढ़ाने सम्बन्धी दो बिन्दु निम्नलिखित हैं–

   (a) जागरूकता बढ़ाना

   (b) संरचित संवाद का सुसंगत माध्यम

3.11 अभ्यास कार्य

प्र'न 01–अक्षमता तथा क्षेत्रीयता की समता तथा समानता के औचित्य को अपने शब्दों में बताइये।

प्र'न 02–अक्षमता के प्रति लोगों को जागरूक करने की आवश्यकता क्यों है?

प्र'न 03–अक्षमों के सशक्तिकरण से आप क्या समझते हैं?

3.12 चर्चा के बिन्दु

प्र'न 01–प्रतिभाशाली बच्चों के लिए बनाए गए कार्यक्रमों एवं योजनाओं के वर्तमान स्वरूप पर चर्चा कीजिये।

3.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- उपाध्याय, जे. जे. आर. (2019). *मानव अधिकार.* सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
- De Beco, G. (2018). *The indivisibility of human rights and the convention on the rights of persons with disabilities. International and Comparative Law Quarterly*, *68*(1), 141–160. https://doi.org/10.1017/s0020589318000386.
- De Silva De Alwis, R., Secretariat for the Convention on the Rights of Persons with Disabilities of the Department of Economic and Social Affairs/United Nations, United Nations Population Fund, & Wellesley Centers for Women. (2008). *Disability Rights, Gender, and Development: A Resource ToolforAction*.https://www.un.org/disabilities/documents/Publication/UNWCW%20MANUAL.pdf.
- *Discrimination based on disability in health and human service programs or activities*.(2023,September14).FederalRegister.https://www.federalregister.gov/documents/2023/09/14/2023-19149/discrimination-on-the-basis-of disability -in-health-and-human-service-programs-or-activities
- Sharma, P. & Singh, H. (n.d.). *Gender Issues and Human Rights Education.* R. Lall Book Depot. Meerut.

इकाई–4

निःशक्तता का लिंग सम्बन्धी अनुभव

(Gendered Experience of Disability)

इकाई संरचना

4.1 परिचय

4.2 इकाई के उद्देश्य

4.3 लिंग

4.4 निःशक्तता

4.5 निःशक्तता का लिंग सम्बन्धी अनुभव

4.6 इकाई सारांश

4.7 बोध प्रश्न के उत्तर

4.8 अभ्यास कार्य

4.9 चर्चा के बिन्दु

4.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.1 परिचय

अक्षम महिलाओं को उनकी अक्षमता तथा उनके लिंग के कारण दोगुने हाशिए पर रखा गया है। वे गरीबी तथा सामाजिक बहिष्कार के प्रति अधिक संवेदनशील हो सकती हैं; तथा अक्सर **उन्हें** सीमित सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अवसर और बुनियादी सेवाओं तक पहुँच की कमी होती है। अक्षम महिलाओं को यौन तथा शारीरिक हिंसा व दुरुपयोग का खतरा अधिक हो सकता है। अक्षम लड़कियाँ प्रायः ि"ाक्षा अथवा परिवार के संदर्भ में भेदभाव का अनुभव करती हैं, हालांकि इन मुद्दों को हल करने के लिये महिलाओं तथा पुरुषों के बीच उनकी सामाजिक भूमिकाओं को समझना आवश्यक है। अक्षम महिलाओं तथा लड़कियों द्वारा अनुभव किया जाने वाला बहिष्करण केवल महिलाओं का मुद्दा नहीं है अपितु यह एक सामाजिक मुद्दा है जिसमें महिलाओं, पुरुषों, लड़कियों तथा लड़कों की सक्रिय भागीदारी की आवश्यकता होती है। इसे यदि विकासात्मक दृष्टिकोण से देखा जाय तो यह महिलाओं के बजाय एक लिंग तथा विकास के रूप में वर्णित किया जा सकता है।

अक्षम व्यक्तियों के लिए विशेष रूप से मुख्यधारा की नीतियों तथा कार्यक्रमों में अक्षम महिलाओं तथा लड़कियों के समावेश तथा सशक्तिकरण को सुनिश्चित करने के लिए एक लिंग सम्बन्धी घटक भी होना चाहिये। इसका समर्थन अक्षम व्यक्तियों के अधिकारों के कन्वेन्शन (CRPD) के अनुच्छेद 6 में किया गया है।

4.2 इकाई के उद्‌देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त अधिगमकर्ता / विद्यार्थी–

- महिला मूलक सम्प्रत्यय (अवधारणा) को बता सकेंगे।
- निःशक्तता को परिभाषित कर सकेंगे।
- नारीवाद के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को जान सकेंगे।
- प्रमुख नारीवादी सिद्धान्तों को बता सकेंगे।
- निःशक्तता का लिंग सम्बन्धी अनुभव को समझ सकेंगे।

4.3 लिंग (Sex)

जिससे किसी व्यक्ति के स्त्री अथवा पुरुष होने का बोध होता है, उसे लिंग कहते हैं। लिंग के कारण स्त्री तथा पुरुष की शारीरिक संरचना में ही विभेद नहीं होता अपितु उनकी रुचियों, अभिवृत्तियों तथा क्रियाकलापों में भी भिन्नता पायी जाती है। लिंग को दो तरह से परिभाषित किया जा सकता है, एक तो जैविक रूप से तथा एक सामाजिक रूप से।

जैविक रूप में लिंग को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि जब स्त्री तथा पुरुष के XX गुणसूत्र मिलते है तब बालिका और जब स्त्री पुरुष के XY गुणसूत्र मिलते हैं तो बालक का जन्म होता है। लिंग के निर्धारण में लैंगिक मापदण्डों का प्रयोग किया जाता है, जो निम्न प्रकार हैं

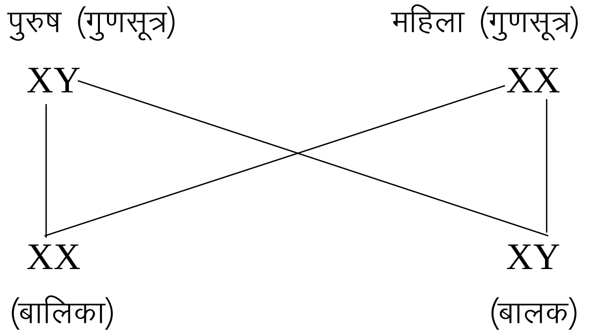

स्पष्ट है कि लिंग के निर्धारण में जैविक सम्प्रत्यय महत्वपूर्ण है। लिंग एक ऐसी धारणा है जिसमें एक संस्कृति, जाति, वर्ग तथा आर्थिक परिस्थितियों और आयु में एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति तथा एक सामाजिक समूह के दूसरे सामाजिक समूह में भी भिन्नताएं होती हैं।

मनुष्य की विशिष्ट स्थिति का निर्धारण करने में सामाजिक संरचना महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। फेमिनिस्ट विद्वानों के अनुसार–''सामाजिक लिंग को स्त्री–पुरुष विभेद के सामाजिक संगठन अथवा स्त्री पुरुष असमान सम्बन्धों की व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"

सुप्रसिद्ध विचारक पेपनेक के अनुसार–"सामाजिक लिंग स्त्री तथा पुरुष से सम्बन्धित है, जो स्त्री–पुरुष की भूमिकाओं को सांस्कृतिक आधार पर परिभाषित करने का प्रयास करता है एवं स्त्री–पुरुष के विशेषाधिकारों से सम्बन्धित है। सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक आधार पर लिंग सामान्यतया शक्ति सम्बन्धों का कार्य तथा असमानता का सामाजिक संगठन है।"

अतः लिंग गुणों का वह विस्तार है जिसके द्वारा हम स्त्रीत्व तथा पुरुषत्व के मध्य अन्तर कर पाते हैं। जैविक रूप से लिंग को 'नर' तथा 'मादा' में विभाजित किया जाता है, परन्तु सामाजिक रूप से लिंग को 'स्त्री' या स्त्रीत्व (Emininity//womanhood/girlishness or womanliness) तथा 'पुरुष' अथवा पुरुषत्व (masculinity/ manhood) में विभाजित किया जाता है।

पुरुषत्व (Masculinity) पुरुष अथवा बालक व्यवहारों, भूमिका तथा गुणों का एक समूह है। स्त्रीत्व (Feminity) स्त्री अथवा बालिका के व्यवहारों, भूमिका तथा गुणों का एक समूह है।

4.3.1 महिला मूलक सम्प्रत्यय (अवधारणा) (Concept of Gender)

पिछले कुछ दशकों में नारी सम्बन्धी अध्ययन व महिला उत्थान विषयक विचारधाराओं ने बौद्धिक जगत में एक केन्द्रीय व महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। इन विचारधाराओं के विकास की प्रक्रिया को सामाजिक स्थितियों व उनमें होने वाले परिवर्तन की गति से सम्बद्ध करके देखा जा सकता है। सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में प्रजाति, जाति, वर्ग व अन्य सामाजिक श्रेणियों में गतिशीलता के आयाम स्पष्टतः दृष्टिगोचर होते हैं। औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् न केवल जीवन–शैली व सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्तन आए, अपितु सामाजिक संरचना में भी व्यापक परिवर्तन उभरकर के प्रस्तुत हुए हैं। व्यवसायों के प्रादुर्भावों से सामाजिक गतिशीलता को एक आधार मिला व आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में व्यक्ति की स्वतन्त्रता व सामाजिक समानता को संस्थात्मक

माध्यमों से क्रियान्वित किया गया। प्रजातांत्रिक व्यवस्था व्यक्ति को समान मताधिकार व भागीदारी के अवसर प्रदान करती है। समानता व स्वतन्त्रता की अवधारणाओं ने समूहों के परस्पर वैमनस्य को हटाकर समान अधिकारों के उपयोग की व्यवस्था प्रस्तुत की।

इसी परिप्रेक्ष्य में नर व नारी के सम्बन्धों व परिस्थितियों की असमानता एक महत्वपूर्ण प्रश्न के रूप में उभरा। महिलाओं पर किए जाने वाले अत्याचार, उत्पीड़न, शोषण, लैंगिक असमानता, महिलाओं की प्रस्थिति, उनकी भूमिका एवं उनके योगदान तथा उनके उत्थान के बारे में विभिन्न विचारधाराओं ने बौद्धिक जगत में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। समाज सुधारकों द्वारा भी नारी की समस्याओं के समाधान हेतु प्रयत्न किए गए। पिछले कुछ वर्षों में नारी से सम्बन्धित पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं में नारी की समस्याओं के बारे में काफी कुछ लिखा गया और व्यावहारिक एवं सैद्धान्तिक पक्षों पर भी विचार किया गया है। नारीवाद पर लेखन करने वाली नारियों में 'केट मिलेट' का नाम विशेष आदर से लिया जाता है।

केट मिलेट के अनुसार *"जब एक समूह लम्बे समय तक दूसरे पर शासन करता है तो दोनों के बीच सम्बन्धों को राजनीतिक माना जाता है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक यही हुआ है कि पुरुष वर्ग ने नारी वर्ग पर शासन किया है। पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था से लेकर आज की पूंजीवादी व्यवस्था तक में नारी को समाज में पुरुष से निम्न दर्जा ही दिया जाता रहा है। नारी को निम्न दर्जा देने का कारण स्वयं नारी की शरीर रचना में ही निहित माना गया। वह प्रजनन की प्रक्रिया से जुड़ी हुई है। बच्चे को जन्म देना, उनका लालन–पालन करना आदि कुछ ऐसे कार्य हैं जो उसके कार्य–क्षेत्र को घर तक ही सीमित करते हैं तथा उसे युद्ध, शासन एवं सार्वजनिक जीवन में भाग लेने से वंचित करते हैं।"*

4.3.2 महिलावादी विचारधारा का उद्भव (Origin of Feminist Thinking)

नारी सम्बन्धित विचारों की व्याख्या के संदर्भ में तीन सम्बोधों की चर्चा करना आवश्यक है। ये तीन सम्बोध हैं–

(1) नारीत्व (Femaleness)– 'नारीत्व', पुरुष व स्त्री के बीच शारीरिक व जैविक अन्तर को स्पष्ट करने वाला शब्द है । शारीरिक विभेद जन्म से प्राप्त होते हैं, जिनका आधार जननिक होता है। पुरुष और स्त्री के शरीर की बनावट में, आवाज में, जनन अंगों में व अन्य कतिपय अंगों में अन्तर, दो विभिन्न लिंगों के मध्य भेद को इंगित करते हैं । शरीर के भेद का अन्तर सभी प्रजातियों में पाया जाता है। यह भेद किसी एक श्रेणी को अधिक क्षमताशील नहीं बनाता और इस बात को स्पष्ट करता है कि विभेद, असमानता नहीं है। प्राणी शास्त्रीय विभेदों को सामाजिक असमानता में परिवर्तित करने की प्रक्रिया पुरुष प्रधान समाज के राजनैतिक जोड़–तोड़ का प्रतिफल हैं।

नारीवाद के सन्दर्भ में एक–दो अपवादों को छोड़कर 1630 के दशक में प्रारम्भिक लेखन का कार्य हुआ जो लगभग 150 वर्षों तक चला। इसके बाद 1780 से वर्तमान समय तक नारीवादी लेखन कार्य एक सामूहिक प्रयास के रूप में रहा जिसमें सहभागिता एवं आलोचना दोनों क्षेत्रों में प्रगति हुई। कोट (Cott), लोगी (Lougee), मार्टिन (Martin), रोसी (Rossi), शोवाल्टर (Showalter) तथा स्पेण्डर (Spender) आदि की कृतियों में प्रारम्भिक नारीवादी लेखन कार्य हुआ। इनकी कृतियों में यह बताया गया कि नारी शक्तिविहीन एवं पुरुष के अधीन रहने वाली है।

1780 से 1790 के दशक में ऐसी रचनाएं प्रकाशित हुई जिसमें नारी उत्थान हेतु संगठित एवं केन्द्रित प्रयास पर बल दिया गया। इस समय की रचनाओं में नारीवाद सम्बन्धी तीन प्रकार के सिद्धान्त सामने आए – (i) जिसमें लिंग भेद (gender differences) की चर्चा की गई, (ii) जो लिंग असमानता (gender inequality) को दर्शाते हैं तथा (iii) जिनमें लिंग शोषण या उत्पीड़न (gender oppression) की चर्चा की गई है। नारीवादी सिद्धान्तों में समाज में प्रचलित व्यवस्थाओं की आलोचना की गई तथा असमानता, सामाजिक परिवर्तन, शक्ति, हित एवं विश्वास तथा परिवार, कानून, राजनीति, कार्य, धर्म व शिक्षा जैसे समाजशास्त्रीय चरों पर ध्यान केन्द्रित किया गया।

(2) नारीयता (Feminity**)**– 'नारीयता', समाज व संस्कृति के द्वारा नारी का निर्माण है, जिसके माध्यम से उसकी प्रस्थिति, भूमिका, पहचान, सोच, मूल्य व अपेक्षाओं को गढ़ा जाता है। नारीयता के निर्माण की

प्रक्रिया समाज की संस्थाओं, सांस्कृतिक मूल्य व व्यवहारों, प्रथा, रीतियों, लिखित व मौखिक ज्ञान परम्पराओं, धार्मिक अनुष्ठान व नारी अपेक्षित विशिष्ट मूल्यों से स्थापित होती है।

विशिष्ट समाज की अनेक संस्थाएँ नारी की प्रस्थिति को निम्न बनाने में सहायक होती है। परिवार व विवाह जैसी संस्थाएं जो कि व्यक्ति को भावनात्मक, सामाजिक सांस्कृतिक आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती हैं, किसी स्तर पर नारी की असमान प्रस्थिति व शोषण की प्रक्रिया के लिए उत्तरदायी हैं। पितृसत्तात्मक परिवारों में विवाह के पश्चात लड़की को पति के घर जाना होता है, उसका पारिवारिक नाम बदल जाता है, अनेक समाजों में उसका सम्पत्ति में अधिकार नहीं होता। विवाह से जुड़े अनेक आयाम, जैसे–दहेज–प्रथा, वैधव्य कौमार्य, अदृश्य हिंसा (Invisible Violence) के आयाम नारी की प्रस्थिति के नकारात्मक पक्ष को प्रस्तुत करते हैं।

(3) **नारीवाद (Feminism)**– 'नारीवाद' एक ऐसी विचारधारा है जिसके अन्तर्गत स्त्री व पुरुष के बीच असमानता को अस्वीकार किया गया है तथा उसके सबलीकरण की प्रक्रिया को बौद्धिक एवं क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह एक विचारधारा के साथ–साथ एक आन्दोलन (Movement) भी है। एक विचारधारा के अन्तर्गत इसमें कई प्रकार के सम्बोधों एवं सिद्धान्तों का समावेश किया गया है। एक सिद्धान्त के रूप में नारीवाद के अन्तर्गत समानता व सबलीकरण के द्वारा स्त्री व पुरुष के बीच पाई जाने बाली सामाजिक असमानता को नकारा गया है।

नारीवाद को एक आन्दोलन के रूप में स्वीकार किया गया है। नारी आन्दोलन में प्रायः पुरुष की भागीदारी को नकारा गया है। नारी आन्दोलन के अन्तर्गत राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नारी सम्मेलनों, गोष्ठियों, प्रदर्शनों का आयोजन किया गया है तथा विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं, लेखों एवं प्रचार के आधुनिक साधनों का सहारा लेकर अपने हितों के प्रति नारी में जागृति लाने के प्रयत्न किए गए हैं।

4.3.3 नारीवादः ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य (Feminism : Historical Perspective)

नारीवाद को सैद्धान्तिक दृष्टि से विवेचित करने से पूर्व उसे उसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखना समीचीन होगा। नारीवाद के बौद्धिक कार्य को समय की दृष्टि से दो भागों में बाँट सकते हैं– पहला, 1600 से 1960 के बीच व दूसरा, 1840 से 1960 तक।

नारीवाद : 1600 से 1960 तक

इस युग में नारीवादी लेखन का जो कार्य हुआ वह पश्चिमी समाज में इस क्षेत्र में रिकार्ड कहा जा सकता है। इसमें लगभग 300 वर्षों की सामाजिक विरोध सम्बन्धी रचनाएं हैं जिन्होंने आधुनिक नारीवादी सिद्धान्तों की नींव रखी।

समाजशास्त्र एवं नारीवाद : 1840 से 1960 तक

नारीवाद के बारे में समाजशास्त्र में बौद्धिक परम्परा का प्रारम्भ 1840 से 1860 के बीच माना जाता है। इस समय में नारीवादी विरोध (Feminist Protest) प्रारम्भ हुआ तथा 1890 से 1920 नारीवाद के बारे में व्यावसायिक कार्य भी किए गए। समाजशास्त्र 1840 से 1960 के बीच एक परिप्रेक्ष्य (Perspective) के रूप में उभरा और उसके बाद एक संगठित एवं व्यावसायिक शैक्षिक विज्ञान के रूप में। इस विज्ञान का निर्माण करने वालों में सभी पुरुष ही थे। अतः नारी सम्बन्धी लेखन या तो बहुत कम हुआ या केवल सतही स्तर पर। स्पेन्सर से लेकर, वेबर, दुर्खीम व पारसन्स तक के समाजशास्त्री जिन्होंने समाजशास्त्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी, नारीवादी विचारों से अछूते ही रहे ।

4.3.4 नारीवादी सिद्धान्त

नारीवाद से सम्बन्धित अनेक सिद्धान्त हैं जिनका वर्गीकरण विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने ढंग से किया है। जीनबी. एलइस्टेन ने नारीवादी सिद्धान्तों को चार भागों में बाँटा है– (i) उग्र उन्मूलनवादी, (ii) उदारवादी, (iii) मार्क्सवादी, (iv) मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त।

डोनोवान ने नारीवादी सिद्धान्तों को पांच भागों में बांटा है– (i) सांस्कृतिक, (ii) फ्रायडवादी, (iii) अस्तित्ववादी, (iv) मार्क्सवादी, एवं (v) उग्रउन्मूलनवादी सिद्धान्त । जॉर्ज रिट्ज़र ने सभी नारीवादी सिद्धान्तों को

मोटे तौर पर तीन भागों में विभक्त किया है– (i) लिंग विभेद सम्बन्धी सिद्धान्त, (ii) लिंग असमानतावादी सिद्धान्त।

नारीवादी सभी सिद्धान्त पश्चिमी विचारधारा के इतिहास के प्रतिबिम्ब हैं। अतः उन पर पश्चिमी विचारों का ही अधिक प्रभाव दिखाई देता है। इनमें पूर्वी देशों एवं संस्कृतियों के ऐतिहासिक एवं समकालीन स्थितियों की झलक दिखाई नहीं देती।

हम यहाँ जॉर्ज रिट्ज़र द्वारा दिए गए नारीवादी सिद्धान्तों की विवेचना करेंगे–

1. **लिंग भेद सम्बन्धी सिद्धान्त (Theories related to Gender Differences)**

   यह सिद्धान्त इस बात पर बल देता है कि एक स्थिति में रहने पर भी स्त्री का स्थान व अनुभव अलग–अलग होता है। इस सिद्धान्त के मानने वालों में **बेकर मिलर, बर्नीकोव, गिलिगन, केसलर व मैककेना, रूडिक** तथा **स्नीटोव** आदि प्रमुख हैं। स्त्री–पुरुष भेद सम्बन्धी कुछ अन्वेषण भी किए गए हैं जिसने समकालीन नारीवादी विचारों को प्रभावित किया है। आज समाजशास्त्र में लिंगभेद एक महत्वपूर्ण चर के रूप में माना जाता है।

   लिंगभेद के सिद्धान्त का मुख्य ध्यान इस बात पर केन्द्रित है कि नारी का आन्तरिक मानसिक जीवन पुरुष से भिन्न हैं। उनके मूल्यों एवं हितों, उनके द्वारा किए जाने वाले मूल्य निर्णयों (value judgments) उनके द्वारा हासिल की जाने वाली उपलब्धियों के उद्देश्यों, उनके द्वारा की जाने वाली साहित्यिक रचना, उनकी चेतना एवं आत्मपन में एक भिन्न प्रकार का दृष्टिकोण और विचार पाया जाता है। इस सिद्धान्त की दूसरी मान्यता यह है कि स्त्रियों के सम्बन्धों एवं जीवन के अनुभवों में भी भिन्नता पाई जाती है। स्त्रियां अपनी सन्तानों से अपने आपको पुरुष की तुलना में भिन्न रूप से जोड़ती हैं। लड़के व लड़कियों के खेल के तरीके भिन्न–भिन्न होते हैं। युवा महिलाएं परस्पर एक–दूसरे को भिन्न प्रकार से जोड़ती हैं तथा नारी सम्बन्धी विषयों का वे भिन्न प्रकार से अध्ययन करती हैं।

2. **लिंग असमानता सम्बन्धी सिद्धान्त (Theories related to Gender Inequality)**

   लिंग असमानता सम्बन्धी सिद्धान्त चार धारणाओं पर आधारित हैं–

   (i) पुरुष की स्थितियां भिन्न–भिन्न ही नहीं होती वरन् असमान भी होती हैं। वर्ग, प्रजाति, व्यवसाय, धर्म, शिक्षा, राष्ट्रीयता और किसी भी अन्य सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कारक के आधार पर समाज में स्त्री को दिए जाने वाले भौतिक लाभ, सामाजिक प्रस्थिति, शक्ति एवं अवसर पुरुषों की तुलना में कम होते हैं।

   (ii) यह असमानता समाज के संगठन का परिणाम हैं न कि स्त्री–पुरुष के प्राणी शास्त्रीय एवं व्यतिव विभेद का।

   (iii) अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की दृष्टि से समाज में पुरुषों की तुलना में स्त्रियाँ कम शक्तिशाली होती हैं।

   (iv) यह सिद्धान्त यह भी मानता है कि यदि समान अवसर दिए जाएं तो स्त्री व पुरुष दोनों ही समान रूप से प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं।

लिंग असमानता की व्याख्या करने वाले प्रमुख नारीवादी सिद्धान्त

(Main Feminist Theories describing Gender Inequality)

लिंग असमानता की व्याख्या करने वाले दो प्रमुख नारीवादी सिद्धान्त हैं–

उदारतावादी सिद्धान्त (Liberal View)

नारीवादी सभी सिद्धान्तों में इस सिद्धान्त के समर्थक कम लोग हैं, फिर भी अमेरिका में हुए नारी स्वतन्त्रता आन्दोलन में इसे स्वीकार किया गया। इसके अन्तर्गत नारियों को जीवन–यापन के लिए क्या–क्या कार्य करने चाहिए, के बारे में लिखे गए लेख, समान मातृत्व एवं पितृत्व तथा स्कूल में सह–शिक्षा प्रदान करने तथा राष्ट्रीय स्तर

के नारीवादी संगठनों की व्यावहारिक भूमिकाओं के निर्धारण में इस विचारधारा की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

जहां लिंगभेद सिद्धान्त समाप्त होते हैं, वहीं उदारतावादी लिंग असमानता की व्याख्या प्रारम्भ होती है। प्रजातिवाद की भांति यौनवाद भी पूर्वाग्रह एवं भेदभाव पर आधारित है। जो यह मानते हैं कि स्त्री व पुरुष में नैसर्गिक अन्तर पाया जाता है, यह अन्तर उनके सामाजिक भाग्य के अनुरूप है। इस सन्दर्भ में जेसी बर्नार्ड द्वारा लिखित पुस्तक 'द फ्यूचर ऑफ मैरिज' महत्वपूर्ण कृति है, जिसमें उन्होंने बताया है कि विवाह विश्वासों एवं आदर्शों की एक सांस्कृतिक व्यवस्था है। यह भूमिकाओं एवं आदर्श–प्रतिमानों की संस्थात्मक व्यवस्था है, यह स्त्री व पुरुष की अन्तःक्रियात्मक अनुभवों की जटिलता भी है। विवाह पुरुष को पति की भूमिकाओं के रूप में शक्ति प्रदान करता है तथा स्त्री को पुरुष पर निर्भर बनाता है और उसे घर के कार्यों तक ही सीमित करता है।

विवाह पुरुष के लिए अच्छा एवं नारी के लिए बुरा है क्योंकि यह दोनों को असमान अधिकारी व शक्ति प्रदान करता है। उदारतावादी नारीवाद अमेरिकन समाज में नारी की स्वतन्त्रता एवं समानता की समर्थक है। यह व्याख्या इस बात पर बल देती हैं कि समकालीन अमेरिकन समाज को अपने आपको बदलना चाहिए एवं यौनवाद को समाप्त करना चाहिए। ये लिंग समानता में विश्वास करते हैं तथा लैंगिक समानता लाने के लिए राजनीतिक एवं वैधानिक साधनों का उपयोग करने की वकालत करते हैं। ये स्त्रियों को पुरुषों के समान ही आर्थिक अवसर उपलब्ध कराने, परिवार में परिवर्तन करने तथा स्कूल व जनसंचार के द्वारा दी जाने वाली सूचनाओं में परिवर्तन करने पर भी बल देते हैं। उदारतावादी नारीवाद के व्याख्याकारों के अनुसार एक आदर्श लिंग व्यवस्था वह है जिसमें व्यक्ति को अपनी जीवन शैली का चयन करने की स्वतन्त्रता होती है। उसे यह स्वतन्त्रता होती है कि वह विवाह करे या न करे, बच्चे पैदा करे या न करे, वह समलैंगिक रहे या विषम लैंगिक इस प्रकार से यह अमेरिकन समाज में व्यक्तिवाद, स्वतन्त्रता तथा अवसर की समानता पर बल देता है।

मार्क्सवादी सिद्धान्त (Marxist View)

मार्क्सवादी नारीवाद मार्क्स के वर्ग विश्लेषण एवं नारीवादी सामाजिक विरोध को निकट लाता है। मार्क्सवादी नारीवाद के प्रतिपादक मार्क्स एवं ऐन्जिल्स हैं। इन्होंने इस सन्दर्भ में अपने विचार अपनी पुस्तक 'The Origins of the Family Private Property and the State' में अभिव्यक्त किए हैं। इस पुस्तक में दी गई प्रमुख दलीलें इस प्रकार हैं–

(1) स्त्रियों की अधीनता प्राणी शास्त्रीय परिणाम नहीं है वरन यह सामाजिक व्यवस्था का प्रतिफल है।

(2) नारी की अधीनता का आधार परिवार है, क्योंकि इसमें भूमिकाओं का स्वामित्व एवं अधीनता का प्रतिमान पाया जाता है। पितृसत्तात्मक परिवारों में वंश एवं उत्तराधिकार का निर्धारण पिता (पुरुष) के पक्ष से होता है, इसमें पिता की सत्ता सर्वोपरि होती है तथा पत्नी से अपेक्षा की जाती है कि वह केवल एक ही पुरुष अर्थात् पति से यौन सम्बन्ध रखे। दोहरा मापदण्ड पुरुष को यौन स्वतन्त्रता प्रदान करता है। इस प्रकार से परिवार संस्था स्त्री को घर से बाहर कार्य करने एवं आर्थिक स्वावलम्बन की स्वीकृति नहीं देती। इस प्रकार से स्त्रियां अपने पतियों की सम्पत्ति होती है।

(3) समाज इस पारिवारिक व्यवस्था को वैधानिक स्वीकृति प्रदान करता है तथा इसे सभी समाजों की मौलिक संस्था मानता है जो कि अनेक मानवशास्त्रीय एवं पुरातात्विक प्रमाणों के आधार पर असत्य बात है। इसके स्थान पर मार्क्स एवं ऐन्जिल्स कहते हैं कि प्रारम्भ में रक्त पर आधारित बड़े नातेदारी समूह थे जिन्हें वह 'वंश' कहता है। इन समूहों के सदस्यों में सम्बन्ध स्त्री पक्ष अर्थात् माता से गिने जाते थे। मातृपक्षीय वंशों में सत्ता मां के पास होती थी। इसमें स्त्री की सत्ता पुरुष से स्वतन्त्र थी तथा समाज भी उसे शक्तिशाली बनाता था। इस प्रकार की वंश व्यवस्था शिकार करने एवं संकलनशील अर्थव्यवस्था में थी ।

(4) किन्तु वंश की यह व्यवस्था तब नष्ट हो गई जब शिकार करने एवं संकलनशील अर्थव्यवस्था का स्थान पशुकरण एवं कृषि व्यवस्था ने ले लिया। इसके साथ ही सम्पत्ति का भी प्रादुर्भाव हुआ तथा स्त्री लिंग की ऐतिहासिक हार हुई। उत्पादन के उपकरणों एवं स्त्रोतों पर पुरुष का स्वामित्व कायम हुआ। उसने श्रम शक्ति के रूप में दास, बच्चों, स्त्रियों से कार्य लिया तथा सम्पत्ति की सुरक्षा एवं हस्तान्तरण के लिए वंश परम्परा व्यवस्था प्रारम्भ की। इस प्रकार से प्रथम परिवार का प्रारम्भ हुआ। इसमें एक पुरुष का परिवार की स्त्रियों पर एकाधिकार था जिसके फलस्वरूप उसकी सम्पत्ति के वारिस की निश्चितता बनी। पुत्रों ने भी इस

व्यवस्था को समर्थन दिया क्योंकि इससे उनके सम्पत्ति सम्बन्धी दावे तय हुए।

(5) तब से ही श्रम का शोषण विकसित हुआ और समाज की जटिलता में वृद्धि और वर्ग सम्बन्धों तथा राजनीतिक व्यवस्था ने भी इस प्रकार पुरुष के प्रभुत्व को सुरक्षित बनाया। आर्थिक एवं सम्पत्ति व्यवस्था में परिवर्तन के साथ–साथ परिवार व्यवस्था भी परिवर्तित हुई और वह एक निर्भर संस्था बन गई जिसने स्त्री की अधीनता को कायम किया। साम्यवादी क्रान्ति से सम्पत्ति अधिकार समाप्त होंगे तभी स्त्री को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता भी प्राप्त होगी।

इस प्रकार से मार्क्स एवं ऐन्जिल्स ने लिंग असमानता का एक शक्तिशाली सिद्धान्त प्रस्तुत किया जो कि पारसन्स के सिद्धान्त के एकदम विपरीत है।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 1– जी.न.बी. एलइस्टेन ने नारीवादी सिद्धान्तों को कितने भागों में बाँटा है?

उत्तर– ....

प्रश्न 2– लिंग असमानता की व्याख्या करने वाले दो प्रमुख नारीवादी सिद्धान्त का नाम बताइये।

उत्तर– ....

4.4 निःशक्तता (Disability)

निःशक्तता, शरीर अथवा मन की एक ऐसी स्थिति है, जो व्यक्ति को कुछ निश्चित गतिविधियों को करने में कठिनाई उत्पन्न करता है। (गतिविधि सीमा) तथा उनके आस–पास की दुनिया के साथ बातचीत करने की स्थिति को अधिक कठिन बना देती है (भागीदारी प्रतिबन्ध)।

यद्यपि 'निःशक्त व्यक्ति' कभी–कभी एकल आबादी को संदर्भित करते हैं; यह वास्तव में विविध प्रकार के लोगों की जरूरतों का एक विविध समूह है। एक ही प्रकार की निःशक्तता वाले दो लोग बहुत अलग तरीकों से प्रभावित हो सकते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) के अनुसार मिशन के तीन आयाम हैं–

1. किसी व्यक्ति के शरीर की संरचना या कार्य या मानसिक कार्य करने की क्षमता में हानि। उदाहरण के तौर पर शरीर के किसी एक अंग की हानि, दृष्टि की हानि अथवा स्मृति में हानि।
2. गतिविधि की सीमा, जैसे देखने, सुनने, चलने या समस्या को हल करने में कठिनाई।
3. सामान्य दैनिक गतिविधियों में भागीदारी प्रतिबन्ध, जैसे कि काम करना, सामाजिक और मनोरंजक गतिविधियों में संलग्न होना और स्वास्थ्य देखभाल तथा निवारक सेवाएं प्राप्त करना।

4.5 निःशक्तता का लिंग सम्बन्धी अनुभव (Gendered Experience of Disability)

जब भी निःशक्त व्यक्तियों की बात आती है तो व्यक्ति उन्हें एक ऐसे मनुष्य के रूप में देखते हैं कि जिनमें कोई कमी है न कि एक स्त्री और पुरुष के। जबकि निःशक्त व्यक्ति भी पहले स्त्री या पुरुष हैं उसके पश्चात् निःशक्त। सभी निःशक्त व्यक्तियों के विकास क्रम में अन्तर नहीं होता है। अधिकतर निःशक्त व्यक्ति लिंग निर्धारण तथा एक लिंग के रूप में सामान्य विकासात्मक क्षमता रखते हैं। परन्तु समाज के इस दृष्टिकोण का असर उनकी शिक्षा, रोजगार, व्यक्तिगत सम्बन्धों तथा रहन–सहन पर पड़ता है। प्रायः निःशक्त महिला/बालिका को एक असहाय के रूप में देखा जाता है। निःशक्तता का लिंग सम्बन्धी अनुभव स्त्री तथा पुरुष के मध्य अन्तर के प्रभावी रूप को प्रकट करता है।

पश्चिमी औद्योगिक राष्ट्रों में किए गए लिंग सम्बन्धी अध्ययन द्वारा निम्नलिखित सार्वजनिक तथा व्यक्तिगत आयाम प्रकट होते हैं–

सार्वजनिक क्षेत्रों में :–

- पुरुषों से ज्यादा महिलाएं निःशक्त पायी गयी, मुख्यतः अधिक उम्र वाले निःशक्त जनों में ज्यादातर महिलाएं।
- निःशक्त व्यक्ति ज्यादा गरीबी में जीवनयापन कर रहे हैं। महिलाएं पुरुषों से ज्यादा गरीब है मुख्यतः विकासशील देशों में जहाँ महिलाएं ही घर की मुखिया है।
- युवा निःशक्त महिलाएं पुरुषों से कम शिक्षित हैं।
- निःशक्त महिलाओं को रोजगार में निःशक्त पुरुषों की अपेक्षा कम वेतन मिलता है।
- निःशक्त महिलाओं की पुनर्वास तक पहुँच की सम्भावनाएँ पुरुषों की तुलना में कम होती है।
- निःशक्त महिलाओं का आयु वितरण निःशक्त पुरुषों से भिन्न है।
- महिलाओं को सार्वजनिक स्थानों पर खतरा पुरुषों की तुलना में अधिक है।

निजी तथा पारिवारिक क्षेत्र में :–

- निःशक्त महिलाएं, निःशक्त पुरुषों की तुलना में अपने पैतृक परिवार में अधिक रहती हैं।
- निःशक्त महिलाएं, निःशक्त पुरुषों की अपेक्षा कम शादी करती हैं तथा उनका तलाक अपेक्षाकृत अधिक होता है।
- निःशक्त महिलाओं को उनकी प्रजनन क्षमता को नियन्त्रित करने के लिए अधिक चिकित्सीय हस्तक्षेप का सामना करना पड़ता है।
- निःशक्त महिलाओं में अपने सम्बन्धियों, रिश्तेदारों तथा संस्थानों में अधिक यौन शोषण तथा यौन हिंसा का सामना करना पड़ता है।
- निःशक्त महिलाओं को सामाजिक वर्गीकरण का पुरुषों की तुलना में अधिक सामना करना पड़ता है।
- विकास के क्रम में किशोरावस्था के दौरान, बालक–बालिकाओं में होने वाले परिवर्तनों को निःशक्तता के आगे परिवार, शिक्षकों तथा परिवार के द्वारा अनदेखा किया जाता है। जिसके कारण प्रायः ऐसा देखा गया है कि यौन शिक्षा की कमी के कारण किशोरावस्था में ही निःशक्त बालिकाएं गर्भवती हो जा रही है।
- पितृसत्तात्मक संरचना के कारण पैतृक सम्पत्ति न मिल पाने के कारण निःशक्त महिलाओं तथा बालिकाओं को अधिक गरीबी का सामना करना पड़ रहा है। हालांकि अब कानूनी तौर पर महिलाएं भी पैतृक सम्पत्ति में बराबर की हकदार हैं, परन्तु जानकारी के अभाव में ज्यादातर महिलाएं इस सुविधा से वंचित हैं।
- जो महिलाएं या बालिकाएं परिस्थिति में कमी के कारण आगे नहीं आ पाती हैं तो सहायक उपकरणों तक भी कम पहुँच पाती हैं।
- निःशक्त महिलाओं को अत्यधिक घरेलू हिंसा का भी सामना करना पड़ता है।
- निःशक्त बालिकाओं की शिक्षा तक पहुंच भी अपेक्षाकृत कम है। कुछ अभिभावक यह सोचते हैं कि निःशक्तता के कारण अब यह कुछ नहीं कर सकते अतः इन्हें पढ़ा लिखा कर क्या करेंगे ।
- युद्ध के कारण निःशक्त हुयी महिलाओं के पास जीवित रहने के लिए बहुत कम संसाधन है।
- निःशक्त महिलाओं के साथ यौन दुर्व्यवहार की सम्भावना अधिक होती है।

(Abu Habib 1997, Meskoska and Dowse 1997, Snyder 1999, Charowa 2002)

मानविकी में लिंग का व्यापक रूप से उपयोग किया गया है। यह सामाजिक मतभेदों को समझाने के लिए एक विश्लेषण अवधारणा के रूप में सामाजिक विज्ञान मतभेदों को वर्गीकृत करने का एक साधन है। मानवता तथा सामाजिक विज्ञान दोनों में नारीवादी निःशक्तता को समझाने के प्रयासों से अध्ययन हुए हैं। (बटलर 1990, बटलर 1993)

बोध प्रश्न–

प्रश्न 3– निःशक्तता से आप क्या समझते हैं?

उत्तर– ....

प्रश्न 4– विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) के अनुसार मिशन के कितने आयाम हैं?

उत्तर– ....

4.6 इकाई सारांश

मनुष्य की विशिष्ट स्थिति का निर्धारण करने में सामाजिक संरचना महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। प्राणी शास्त्रीय स्थिति मनुष्य को 'नर' तथा 'मादा' के रूप में परिभाषित करती हैं, किन्तु उसे पुरुष और स्त्री में विभाजित करने के अन्य कारक भी हैं। जैविक अर्थों में हम नर तथा मादा की तरह पैदा होते हैं, लेकिन हमें सामाजिक लिंग की मान्यता स्त्री और पुरुष के रूप में मिलती है। भारत में पितृसत्तात्मक एवं रूढ़िवादिता प्रचलित होने के कारण महिलाओं के साथ प्रत्येक क्षेत्र में असमानतापूर्ण व्यवहार किया जाता है।

मनुष्य समाज में उत्पन्न होता है और आजीवन वह समाज का सक्रिय सदस्य रहता है। समाज को सुदृढ़ रूप से चलाने के लिए कुछ व्यवस्थाएं तथा नियम है, जिनका पालन उसके सभी सदस्यों द्वारा किया जाता है। सामाजिकता में परिवर्तन होता रहा है, परन्तु ये परिवर्तन अचानक न होकर दीर्घकालिक होते हैं। प्राचीनकाल से ही स्त्री तथा पुरुषों के मध्य कार्य का विभाजन कर दिया गया। परिणामतः ये कार्य रूढ़ हो गए कि पुरुष अमुक कार्य नहीं कर सकता और स्त्री अमुक, बल्कि ये एक व्यवस्था के तहत किये गये थे। पुरुषों को बाहरी कार्यो की जिम्मेदारी इसलिए दी गयी क्योंकि स्त्रियों को सन्तानोत्पत्ति और बच्चों के लालन–पालन का कार्य सम्पन्न करना होता था। परिणामस्वरूप स्त्री के कार्य का अनुत्पादक माना जाने लगा, क्योंकि वह धन का अर्थन नहीं करती और सम्पूर्ण परिवार को कमाकर खिलाने के कारण पुरुषों का महत्व अत्यधिक माना जाने लगा और आर्थिक अधिकारों के विषय में भी उन्हें ही प्रमुखता दी जाने लगी। इस प्रकार पुरुष प्रधान समाज की स्थापना हो गयी जहाँ स्त्रियों के अधिकार और स्वतन्त्रतायें परिमित थीं। निःशक्त महिलाओं के लिए परिस्थितियाँ और भी विषम थीं। समय के साथ बहुत सारे कानून बनें जिससे आज बहुत सारी महिलाएं आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ रही है तथा प्रत्येक क्षेत्र में सफल हो रही है परन्तु कहीं न कहीं जानकारी के अभाव में निःशक्त महिलाएं अभी भी इन सुविधाओं से वंचित है। जिसके कारण वे कम उम्र में गर्भवती हो जाती है, शिक्षा से वंचित होती हैं या फिर यौन शोषण का शिकार हो जाती हैं।

स्वतन्त्र भारत में लिंगीय विभेदों को कम करने की दिशा में कई प्रकार के कार्य किये जा रहे हैं; परन्तु जमीनी कार्यों की आवश्यकता अत्यधिक है जिसमें योजनाओं को यथार्थ के धरातल पर उतारकर उनका समुचित रूप से क्रियान्वयन किया जा सके। दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–2007) में लिंग तथा सामाजिक खाइयों को भरने हेतु सारगर्भित सुझाव दिये गये हैं। आयोगों तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों में भी लैंगिक विभेद को समाप्त करने में शिक्षा को महत्वपूर्ण माना गया है। महिला समाख्या, कस्तूरबा गाँधी विद्यालय, महिलाओं से सम्बन्धित कानून, विवाह की आयु का निर्धारण, कन्याधन योजना, साइकिल वितरण, पढ़ाई हेतु छात्रावास की व्यवस्था, बालिका होने पर प्रोत्साहन राशि, महिला ऋण में ब्याज दर की कमी इत्यादि। उन सभी प्रयासों के साथ–साथ लैंगिक भेदभाव में कमी तभी हो सकती है जब समाज का महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण बदले और सभी क्षेत्रों में वे घर से बाहर निकले

तो बाहर भी सुरक्षात्मक वातावरण का सृजन हो तभी समाज में सुधार हो सकता है।

4.7 बोध प्रश्न के उत्तर

1. जीनबी. एलइस्टेन ने नारीवादी सिद्धान्तों को चार भागों में बाँटा है।
2. लिंग असमानता की व्याख्या करने वाले दो प्रमुख नारीवादी सिद्धान्त उदारतावादी सिद्धान्त तथा मार्क्सवादी सिद्धान्त हैं।
3. निःशक्तता, शरीर अथवा मन की एक ऐसी स्थिति है, जो व्यक्ति को कुछ निश्चित गतिविधियों करने में कठिनाई उत्पन्न करता है।
4. विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) के अनुसार मिशन के तीन आयाम हैं।

4.8 अभ्यास कार्य

1. महिला मूलक सम्प्रत्यय (अवधारणा) को अपने शब्दों में बताइये।
2. नारीवाद के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के मुख्य बिन्दुओं पर दृष्टिपात कीजिये।
3. लिंग असमानता की व्याख्या करने वाले प्रमुख नारीवादी सिद्धान्त को बताइये।

4.9 चर्चा के बिन्दु

1. लिंग तथा सामाजिक खाइयों को भरने हेतु दिये गए सारगर्भित सुझावों की सार्थकता पर चर्चा कीजिये।

4.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- सिंह, अ. (2015). *लिंग एवं समाज.* विवेक प्रकाशन, दिल्ली
- Cooks, E. (2001). N ormalisation and Social Role Valorization:Similar or Different? In International Journal of Special Education. (Vol.30,Issue3,pp.7173). https://files.eric.ed.gov/fulltext/EJ1095018.pdf.
- Connell, R. (2002). *Gender. Polity press Malden .MA, Combride UK*
- *Gender and Disability: Women's experiences in the Middle East* - *Oxfam Policy & Practice*. (2023b, June 22). Oxfam Policy & Practice. https://policy-practice.oxfam.org/resources/gender-and-disability-womens-experiences-in-the-middle-east-121184/

इकाई–5

लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण: तकनीकें और रणनीतियाँ

(Gender and Disability Analysis: Techniques and Strategies)

इकाई संरचना

5.1 परिचय

5.2 इकाई के उद्देश्य

5.3 दिव्यांगता तथा लिंग

5.4 लिंग विश्लेषण

5.5 रणनीतियाँ और तकनीकें

5.5.1 लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी रणनीतियाँ

5.5.2 लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी तकनीकें

5.6 इकाई सारांश

5.7 बोध प्रश्न के उत्तर

5.8 अभ्यास कार्य

5.9 चर्चा के बिन्दु

5.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.1 परिचय

हमारा समाज कुछ इस तरह से बना हुआ है कि इसके दायरे में आने वाला लगभग हर विषय एक–दूसरे से किसी न किसी बिन्दु पर जाकर परस्पर सम्बन्धित है। विषयों के बीच इस सम्बन्ध का कारण विषयों के सन्दर्भ में समाज में मौजूद लम्बे समय से विकसित हुई परम्पराएँ और नियम हो सकते हैं। कोई भी समाज किसी विषय या मुद्दे को अपनी परम्पराओं और नियमों के परिप्रेक्ष्य में देखता, समझता और उसे अर्थ प्रदान करता है, इसलिए जब किसी भी सामाजिक विषय के आधार में समान नियम एवं परम्परा होती है तो उनका आपस में सम्बन्धित होना लाजमी है।

दिव्यांगता और लिंग दोनों ही सामाजिक अवधारणा है, इनको समाज ने ही अर्थ प्रदान किया है। इसलिए इनको समझने के लिए इन दोनों के बीच के सम्बन्ध को समझना महत्वपूर्ण हो जाता है। कई मायनों में दिव्यांगता को लिंग प्रभावित करता है और कई मायनों में लिंग की अवधारणा को दिव्यांगता प्रभावित कर देती है। इन सभी मुद्दों को गहराई से समझने के लिए इन्हें पहले अलग करके बाद में इसके परस्पर सम्बन्धों के सन्दर्भ में समझना आवश्यक है–

यह मान्यता अब पूर्ण रूप से स्वीकृत हो चुकी है कि लिंग पूर्ण रूप से एक सामाजिक अवधारणा है। यह अवधारणा अपने साथ कुछ दायरे, भूमिका और अपेक्षाएँ लिए हुए हैं, जो कई मायनों में अपनी प्रकृति के सन्दर्भ में काफी कठोर एवं जटिलता लिए हुए है। यह अवधारणा पहले स्त्री और पुरुष को विशिष्ट विशेषताओं में बाँधती है, फिर उन विशेषताओं के साथ बहुत सी सीमाएँ निर्धारित करती है तथा अंत में इन पहचानों के सन्दर्भ में बहुत सी अपेक्षाएँ जोड़ दी जाती हैं और पूरी दुनिया को इन दो पहचानों में बाँट देती है।

दिव्यांगता को हम दो रूपों में समझ सकते हैं– एक सामाजिक तथा एक शारीरिक। एक ओर दिव्यांगता एक शारीरिक अपूर्णता या कुछ विशेष प्रकार के कार्यों को न कर पाने की शारीरिक असमर्थता है। वहीं जब हम इसको सामाजिक रूप में समझने की कोशिश करते हैं तो यह समाज द्वारा तय किये गए दायरों और पैमानों पर खरा न

उतर पाने के कारण किये जाने वाला प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सामूहिक बहिष्कार है।

जब हम दिव्यांगता के इन दोनों रूपों या पक्षों का गहनता से विश्लेषण करते हैं, तो हम सरलता से इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि दिव्यांगता की अवधारणा शारीरिक कम, सामाजिक अधिक है।

5.2 इकाई का उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त अधिगमकर्ता/विद्यार्थी–

- लिंग तथा दिव्यांगता को परिभाषित कर सकेंगे।
- लिंग तथा दिव्यांगता की अवधारणा को बता सकेंगे।
- लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण को परिभाषित कर सकेंगे।
- लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी रणनीतियों को समझ सकेंगे।
- लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी तकनीकों को जान समझ सकेंगे।

5.3 दिव्यांगता तथा लिंग (Gender and Disability)

दिव्यांगता को हम दो रूपों में समझ सकते है– एक सामाजिक और एक शारीरिक। हालांकि दिव्यांग व्यक्तियों को लिंग की अवधारणा से बाहर ही समझा जाता है, लेकिन फिर भी दिव्यांगता के सम्बन्ध में लिंग की अवधारणा एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वैसे दिव्यांगता सभी लिंग वर्गों के लिए एक त्रासदी है, लेकिन लिंग की सामाजिक धारणाएँ, अपेक्षाएँ तथा सामाजिक दायरे बहुत अलग–अलग ढंग से कार्य करते हैं। इसलिए दिव्यांगता के सन्दर्भ में विभिन्न लिंग वर्गों के लिए दिव्यांगता का अनुभव भी एक–दूसरे से अलग होना लाजमी है। दिव्यांगता की अवधारणा भी लिंग के सन्दर्भ में समाज में व्याप्त वर्चस्व पर आधारित है। पुरुषों के सन्दर्भ में यह अवधारणा कुछ रियायतें लिए हुए है, जबकि महिलाओं के सन्दर्भ में बहुत अधिक कठोरता। कुछ वर्षों पहले तक तो दिव्यांगता विमर्श में महिलाओं को कोई स्थान ही नहीं दिया गया था। भारत में 2006 में विकलांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति (Policy for Persons with Disability) आया, जिसमें दिव्यांगता के सन्दर्भ में विभिन्न प्रकार के दिशा–निर्देश दिए गए थे, लेकिन उस नीति में दिव्यांग महिलाओं के सन्दर्भ में कोई विशेष निर्देश नहीं था।

5.4 लिंग विश्लेषण (Gender Analysis)

लिंग विश्लेषण एक समाजशास्त्रीय तकनीक है, जिसका उपयोग विभिन्न नीतियों, कार्यक्रमों और परियोजनाओं में विभिन्न स्तरों पर महिलाओं और पुरुषों की विभिन्न भूमिकाओं के बारे में जानकारी प्रदान करता है। इसका मुख्य उद्देश्य लिंग के आधार पर समाज में भेदभाव सम्बन्धी मुद्दों की जाँच करना है। लिंग विश्लेषण का महत्व यह है कि यह हमें यह समझने में मदद करता है कि समाज कैसे लिंग के आधार पर संरचित होता है और इसमें कैसे परिवर्तन लाया जा सकता है। यह सिर्फ महिला या पुरूष के सन्दर्भ में नहीं है, बल्कि यह भी देखता है कि कैसे लिंग रूढ़िवादी संस्कृति और सामाजिक दबाव समाज के प्रत्येक हिस्से में प्रभावित करता है।

विभिन्न अध्ययन स्रोत बताते हैं कि दिव्यांग महिलाओं के लिए किसी भी प्रमुख सामाजिक संस्था में प्रवेश करना एक बहुत बड़ी चुनौती है और अगर बहुत संघर्ष के बाद उन्हें इन संस्थाओं में प्रवेश मिल भी जाता है तो उन्हें गरिमापूर्ण जीवन और आत्म–सम्मान के लिए जीवन भर संघर्ष करना पड़ता है, परन्तु यही सामाजिक संस्थाएँ पुरूषों के प्रवेश के सन्दर्भ में कुछ विनम्रता के साथ पेश आती है। विश्व बैंक रिपोर्ट (2009) के अनुसार शिक्षा दिव्यांग व्यक्तियों की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि उनके पास यही साधन है, जिसके माध्यम से वे प्रचलित मान्यताएँ तोड़ सकते हैं तथा सबके साथ कंधे से कन्धा मिलाकर समाज में समाविष्ट हो सकते हैं। भारत इन दिनों विभिन्न क्षेत्रों में अनगिनत विकास की सीढ़ियाँ चढ़ रहा है, लेकिन दिव्यांग व्यक्तियों के शिक्षा के सन्दर्भ में कोई ख़ास प्रगति देखने को नहीं मिली है। दिव्यांग बच्चों तथा दिव्यांग व्यक्तियों की साक्षरता दर सामान्य व्यक्तियों की साक्षरता दर की तुलना में बहुत कम है तथा विद्यालयी उपस्थिति भी गैर–दिव्यांग लोगों की अपेक्षा बहुत कम है।

दिव्यांग महिलाओं के लिए अवसरों की उपलब्धता, दिव्यांग पुरूषों की तुलना में काफी कम है। वैसे तो

महिला शिक्षा को लेकर समाज में पहले से ही कुछ पूर्वधारणाएँ प्रचलन में हैं, जो दिव्यांगता की स्थिति में और गिरावट लाती है। परिवार में यह मान लिया जाता है कि अब यह कुछ नहीं कर सकती है। विद्यालय की घर से दूरी दिव्यांग बालिकाओं के लिए स्थिति को और अधिक कठिन बना देती है। कौन विद्यालय छोड़ने जाएगा तथा कौन लेने जाएगा आदि सवालों के घेरे में दिव्यांग बालिका के लिए शिक्षा का अवसर दम तोड़ देता है।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 1– दिव्यांगता को हम कितने रूपों में समझ सकते हैं?

उत्तर– ....

प्रश्न 2– National Disability Act भारत में कब आया?

उत्तर– ....

5.5 रणनीतियाँ और तकनीकें (Techniques and Strategies)

5.5.1 लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी रणनीतियाँ (Strategies related to Gender and Disability Analysis)

लैंगिक और दिव्यांगता विश्लेषण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य लैंगिक और दिव्यांग व्यक्तियों के सामाजिक, आर्थिक और मानसिक जीवन की समस्याओं को समझना है। इस विश्लेषण का उद्देश्य यह है कि सभी व्यक्तियों को समान अधिकार और अवसर प्रदान किए जा सकें, विशेष रूप से उन व्यक्तियों के लिए जो लैंगिक और दिव्यांगता के दोनों पहलुओं से प्रभावित होते हैं।

लैंगिक तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी रणनीतियाँ निम्नलिखित हैं–

1. **समाज में समानता का प्रमुख माध्यम**– लैंगिक और दिव्यांग व्यक्तियों के साथ समानता सुनिश्चित करने के लिए सरकार, सामाजिक संगठन और व्यवसायों को विशेष उपायों का सहारा देने की आवश्यकता है। यह उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में बेहतरीन अवसरों की पहुँच प्रदान करता है।
2. **आँकड़ों का संग्रहण एवं विश्लेषण**– लैंगिक एवं दिव्यांगता विश्लेषण के लिए आँकड़ों का संग्रहण और विश्लेषण महत्वपूर्ण होता है। इससे हमें समस्याओं की सटीक जानकारी प्राप्त होती है और उन्हें सुलझाने के लिए ठोस कदम उठाने में मदद मिलती है।
3. **साक्षरता और प्रशासनिक सहयोग**– दिव्यांगता के क्षेत्र में विशेष ध्यान देने के लिए साक्षरता कार्यक्रम एवं प्रशासनिक सहयोग प्रदान किया जाना चाहिए। इससे दिव्याङ्ग व्यक्तियों की रोजगार सम्भावनाओं में सुधार हो सकता है।
4. **सामाजिक जागरूकता और शिक्षा**– लैंगिक और दिव्यांगता समस्याओं को समझने और इस पर विचार करने के लिए सामाजिक जागरूकता को बढ़ावा देना महत्वपूर्ण है तथा शिक्षा के माध्यम से सामाजिक जागरूकता को बढ़ाया जा सकता है।
5. **लैंगिक तथा दिव्यांगता के प्रति सहानुभूति**– समाज को लैंगिक और दिव्यांग व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति और समर्थन प्रदान करना चाहिए।
6. **समाज में भागीदारी**– लैंगिक और दिव्याङ्ग व्यक्तियों को समाज के सभी पहलुओं में भागीदार बनाना महत्वपूर्ण है। उन्हें समाज के निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाने का अवसर प्रदान करना चाहिए।
7. **संरचनात्मक बदलाव**– सरकारों, सामाजिक संगठनों और व्यवसायों को संरचनात्मक बदलाव करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, जिससे दिव्यांग व्यक्तियों को समाज में सही स्थान मिल सके।

5.5.2 लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी तकनीकें (Techniques related to Gender and Disability Analysis)

उपकरण एवं प्रविधियाँ बालक के विकास की दिशा में वांछनीय परिवर्तन लाने के लिए साक्ष्यों के संकलन का साधन होती है। जिस प्रकार किसी भी विषय में बच्चे की उपलब्धि का मूल्यांकन करने के लिए मूल्यांकन के उपकरण एवं प्रविधियों की आवश्यकता होती है उसी प्रकार लिंग तथा दिव्यांगता का विश्लेषण करने के लिए भी विभिन्न प्रकार के उपकरण एवं प्रविधियों की आवश्यकता होती है। लिंग एवं दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी उपकरण एवं तकनीकों के वर्गीकरण को निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है–

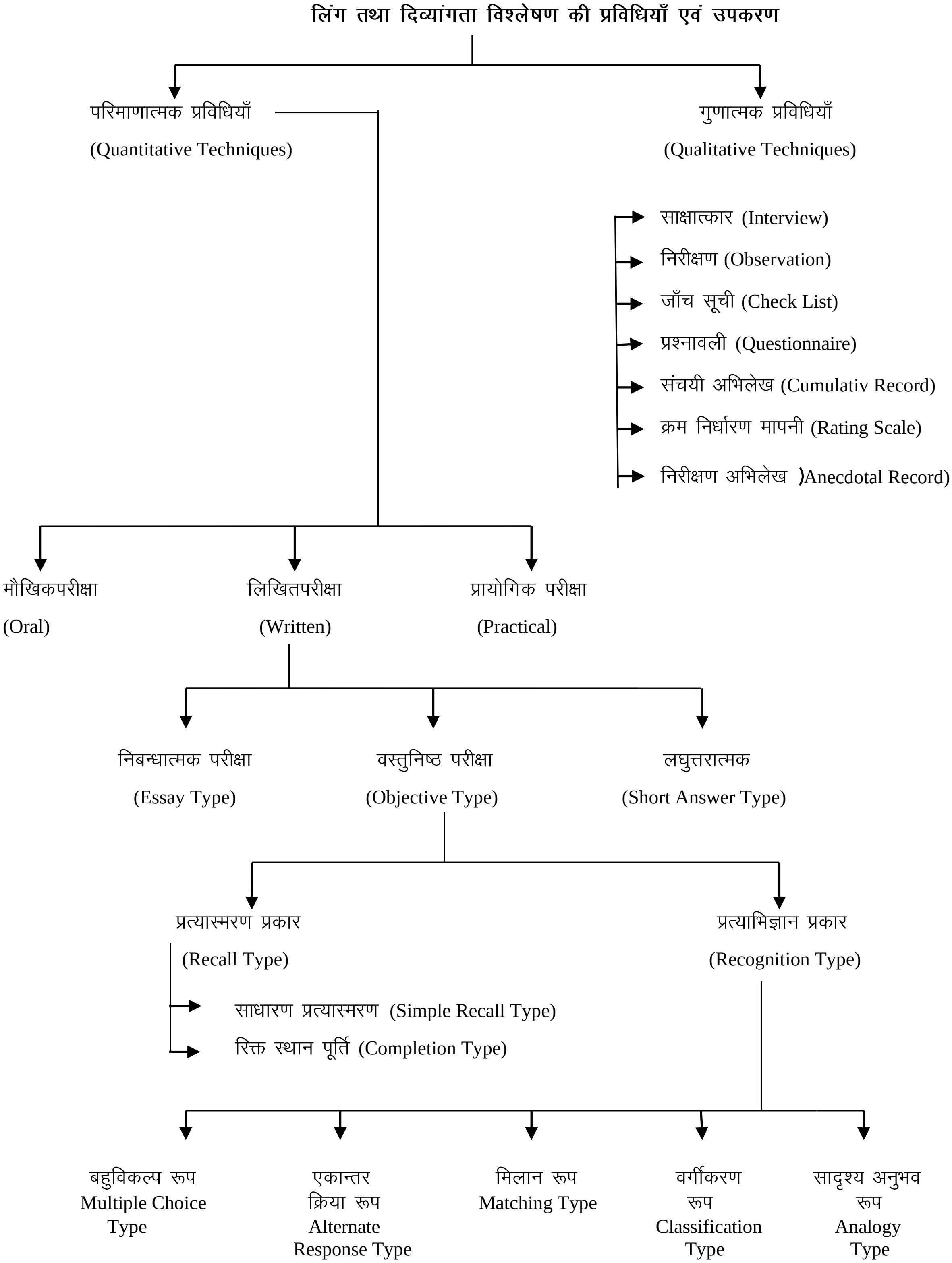

लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी तकनीकें निम्नलिखित हैं–

1. **अवलोकन प्रविधि (Observational Technique)**– अवलोकन प्रविधि का उपयोग बालकों की योग्यता एवं व्यवहारों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है। यह प्रविधि छोटे बच्चों के मूल्यांकन के लिए भी अधिक उपयोगी है, क्योंकि उन्हें कोई अन्य परीक्षा तो दी नहीं जा सकती है। उच्च कक्षाओं के विद्यार्थी स्वयं आत्मनिरीक्षण के लिए भी इसका प्रयोग करते हैं। इस प्रविधि द्वारा मूल्यांकन करने पर सम्बन्धित विषय–वस्तु का सूक्ष्म निरीक्षण करके तथ्यों का वास्तविक रूप में अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार निरीक्षण या अवलोकन द्वारा एकत्र किए गए आँकड़ें एवं सूचनाएँ अधिक विश्वसनीय होते हैं।

   पी. वी. यंग के अनुसार– "अवलोकन आँख के द्वारा विचारपूर्वक किया गया अध्ययन है, जिसको सामूहिक व्यवहार एवं जटिल सामाजिक संस्था के साथ–साथ सम्पूर्ण का निर्माण करने वाली पृथक इकाइयों का सूक्ष्म निरीक्षण करने की एक प्रणाली के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

   अवलोकन को परिभाषित करते हुए **मोजर** ने स्पष्ट किया है कि– अवलोकन का अर्थ, कानों और वाणी की अपेक्षा आँखों का प्रयोग करना है।

2. **आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख (Anecdotal Record)**– आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख के आधार पर विद्यार्थियों के सम्बन्ध में सामान्यीकरण किया जा सकता है और निर्देशन में इसे प्रयुक्त किया जा सकता है। इस आलेख में विद्यार्थियों के व्यवहार से सम्बन्धित महत्वपूर्ण घटनाओं एवं कार्यों का वर्णन किया जाता है। आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख में निरीक्षणकर्त्ता द्वारा बालकों की रूचियों तथा दृष्टिकोण को उत्पन्न करने वाले कारकों या घटकों का भी उल्लेख किया जाता है। इसके द्वारा मानव के सामाजिक गुणों तथा समायोजन का अध्ययन आसानी से किया जा सकता है।

3. **जाँच सूची (Check List)**– जाँच सूची का प्रयोग बालक की अभिरूचियों, अभिवृत्तियों तथा भावात्मक पक्ष की जाँच के लिए किया जाता है। इसकी सहायता से किसी विशिष्ट गुण या विशेषता की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति का पता लगाया जाता है। जाँच सूची में कथन दिये होते हैं, उन कथनों के सम्बन्ध में व्यक्ति को 'हाँ' या 'नहीं' में उत्तर देना होता है। इस सूची का निर्माण करते समय 'उद्देश्यों की स्पष्टता' पर ध्यान रखना चाहिए। प्रत्येक कथन को किसी विशेष उद्देश्य का मापन करना चाहिए। उदाहरण के लिए–

आप दैनिक पाठ–योजना निर्माण में रूचि लेते है।	हाँ / नहीं
आप शिक्षण करने में आनन्द की अनुभूति करते हैं।	हाँ / नहीं
आप विज्ञान का अध्यापन करना पसन्द करते हैं।	हाँ / नहीं

4. **साक्षात्कार (Interview)**– साक्षात्कार मूल्यांकन की एक महत्वपूर्ण प्रविधि है। इसमें मूल्यांकनकर्त्ता आमने–सामने बैठकर तथ्यों का संकलन करता है। साक्षात्कार में व्यक्ति का व्यक्ति से सम्पर्क होता है तथा इसका एक विशेष उद्देश्य होता है। यह एक मनोवैज्ञानिक प्रविधि है, जिसकी सहायता से बालक के सम्बन्ध में यथार्थ तथा विश्वसनीय सूचनाएँ एकत्र की जाती हैं। **गूडे एवं हैट (Goode & Hatt)** के अनुसार, "साक्षात्कार मौलिक रूप से एक सामाजिक अंतःक्रिया की प्रक्रिया है।" इसी प्रकार **जॉन डार्ले (John Darlye)** ने साक्षात्कार को एक उद्देश्यपूर्ण वार्तालाप के रूप में परिभाषित किया है।

5. **संचयी अभिलेख (Cumulative Record)**– संचयी अभिलेख में विद्यालय में अध्ययनरत प्रत्येक विद्यार्थी के सम्बन्ध में सूचनाओं को क्रमबद्ध तथा नियमित रूप से प्रस्तुत किया जाता है। इस आलेख में बालक से सम्बन्धित सम्पूर्ण महत्वपूर्ण सूचनाएँ जैसे– शैक्षिक प्रगति, मासिक परीक्षाफल, उपस्थिति, योग्यता, रूचियों आदि का अभिलेख प्रस्तुत किया जाता है। संचयी अभिलेख अभिभावकों, शिक्षकों तथा संस्था प्रधानों के लिए अधिक महत्वपूर्ण तथा उपयोगी होता है। इसकी सहायता से नवीन छात्रों से शीघ्रता से परिचित किया जा सकता है।

   जब विद्यार्थी एक विद्यालय छोड़कर दूसरे में जाता है तो उसका यह अभिलेख भी दूसरे विद्यालय में भेज दिया जाता है, जिससे उस विद्यालय के शिक्षक या प्रधानाध्यापक को इस अभिलेख की सहायता से अमुक बालक के सम्बन्ध में सम्पूर्ण जानकारी मिल जाती है। यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण अभिलेख होता है। यह

कार्ड, फोल्डर तथा बुकलेट के रूप में तैयार किया जा सकता है। अतः यह अध्यापक, प्रधानाध्यापक आदि के लिए सूचनाओं के स्रोत का कार्य करता है।

6. **प्रश्नावली (Questionnaire)**– मूल्यांकन में प्रश्नावली का विशेष महत्व है। यह एक ऐसी सूची या प्रपत्र होता है, जिसमें अनेक व्यक्ति अपना मत प्रस्तुत करते हैं। प्रश्नावली को प्रश्नों के एक समूह या सूची के रूप में भी स्पष्ट किया जा सकता है। इसमें प्रश्नों का उत्तर सूचनादाता स्वयं भरता है। इसके अन्तर्गत ऐसे प्रश्नों का समावेश किया जाता है, जिनका उत्तर सूचनादाताओं द्वारा बिना किसी संकोच के दिया जा सके। इसके द्वारा सूचनाएँ आसानी से एकत्रित की जा सकती है, क्योंकि दूरस्थ स्थानों पर रहने वाले व्यक्तियों से सूचनाएँ प्राप्त करने के लिए इसे डाक द्वारा भी उस व्यक्ति तक पहुँचाया जा सकता है। इसी कारण बालक या व्यक्ति के सम्बन्ध में सूचनाएँ एकत्र करने की यह एक महत्वपूर्ण प्रविधि है। **गुडे एवं हैट (Goode & Hatt)** के शब्दों में, "सामान्यतः प्रश्नावली से अभिप्राय प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने की युक्ति से है, जिसमें एक पत्रक (form) प्रयोग किया जाता है, जिसे सूचनादाता स्वयं भरता है।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 3– लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण का उद्देश्य क्या है?

उत्तर– ....

प्रश्न 4– अवलोकन प्रविधि का उपयोग किस लिए किया जाता है?

उत्तर– ....

5.6 इकाई सारांश

दिव्यांगता को परिभाषित या अलंकृत करने के लिए हम कितने भी राजनीतिक या सामाजिक सहानुभूतिपूर्ण शब्दों का प्रयोग कर लें, लेकिन इस तथ्य को नहीं नकार सकते कि दिव्यांगता स्त्री, पुरूष एवं तृतीय लिंग के लिए एक शारीरिक एवं मानसिक आपदा है। लेकिन प्रस्तुत चर्चा महिलाओं के सन्दर्भ में दिव्यांगता में परिसीमित है। विशेष रूप से महिलाओं की बात की जाये जाए तो दिव्यांग होना उनके लिए दोहरी दिव्यांगता है– एक तो सामाजिक अपेक्षाओं, नियमों और परम्पराओं से पैदा हुये दायरे एवं दूसरा, दिव्यांग होने के कारण सामाजिक अपेक्षाओं एवं उपेक्षाओं से पैदा हुये दायरे या सीमाएँ। अगर हम अपने समाज का ऐतिहासिक विश्लेषण करें तो सरलता से इस निष्कर्ष तक पहुँच सकते हैं कि पूर्ण महिला होने की परिभाषा अपने प्रकृति में कठोर एवं कठोर होने के क्रम में विकासवादी रही है। महिला अस्मिता एवं संरचना की परिभाषा और कठोरता महिला दिव्यांगता के सन्दर्भ में बहुत सारी समस्याओं को जन्म देती है, जो दिव्यांग महिला के अस्मिता के विकास पर एक नकारात्मक प्रभाव डालती है एवं वे अक्सर पहचान के संकट को महसूस करती हैं। ऐसे में इन महिलाओं के लिए मुख्य धारा में आ पाना एक स्वप्न ही बन कर रह जाता है। ऐसा बिलकुल नहीं है कि दिव्यांग महिलाओं के हिस्से में कोई उपलब्धि नहीं है, आज ऐसे हजारों उदाहरण मिल जायेंगे जिनमें दिव्यांग महिलाओं ने अपने कठोर परिश्रम एवं सतत संघर्ष से ये साबित किया है कि वे किसी से किसी भी क्षेत्र में कम नहीं हैं। अतः हमें अपनी "पूर्णता" और "सामान्य" की परिभाषा को कुछ आदि विस्तृत करने की आवश्यकता है और यह तभी सम्भव है जब हम समायोजन को अपनी सोच और दैनिक जीवन का हिस्सा बनाएँ। लाखों लोग आज हाशिये पर खड़े होकर गरिमापूर्ण जीवन और सम्मानित स्वीकृति के लिए मुख्य धारा की ओर देख रहे हैं, उनमें से जिनको अवसर मिल रहा है वे इसे और बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। बस यह ही मानवतावाद की मौलिक विशेषता है और यही उदारवाद में उनका समायोजन।

5.7 बोध प्रश्न के उत्तर

1. दिव्यांगता को हम दो रूपों में समझ सकते है– एक सामाजिक और एक शारीरिक।
2. भारत में 2006 में National Disability Act आया।
3. लैंगिक और दिव्यांगता विश्लेषण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य लैंगिक और दिव्यांग व्यक्तियों के सामाजिक, आर्थिक और मानसिक जीवन की समस्याओं को समझना है।

4. अवलोकन प्रविधि का उपयोग बालकों की योग्यता एवं व्यवहारों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

5.8 अभ्यास कार्य

1. लिंग विश्लेषण की आवश्यकता क्यों है?
2. लैंगिक तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी रणनीतियों के बारे में बताइये।
3. लिंग तथा दिव्यांगता विश्लेषण सम्बन्धी तकनीकों पर दृष्टिपात कीजिये।

5.9 चर्चा के बिन्दु

1. दिव्यांग महिला सशक्तिकरण के लिए किए जा सकने वाले प्रयासों की चर्चा कीजिये।

5.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- कुलश्रेष्ठ, ए. के. एवं कुलश्रेष्ठ, एन. के. (2010). विज्ञान शिक्षण. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
- सिंह, अ. (2015). लिंग एवं समाज. विवेक प्रकाशन, दिल्ली Legislative Department. दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016. https://legislative.gov.in/sites/default/files/H201649.pdf
- Meekosha, H. (2004). *GENDER AND DISABILITY*. https://disability-studies.leeds.ac.uk/wp-content/uploads/sites/40/library/meekosha-meekosha.pdf
- Thomson, T. & CBM's DID team. (2019). Disability and Gender Analysis Toolkit [Toolkit]. In InterAction, International Labour Organisation, & OurWatch, *CBM's DID team*. https://www.cbm.org/fileadmin/user_upload/CBM_disability_and_gender_analysis_toolkit_accessible.pdf
- Thomas, C. (2006). Disability and Gender: Reflections on Theory and research. *Scandinavian Journal of Disability Research*, *8*(2–3), 177–185. https://doi.org/10.1080/15017410600731368
- Gendering disability and disabling gender: Critical reflections on intersections of gender and disability on JSTOR. (n.d.). *www.jstor.org*. https://www.jstor.org/stable/43825166

इकाई–6

मानस और लिंग : शिक्षण के लिये निहितार्थ
(Psyche and Gender : Implications for Teaching)

इकाई संरचना

6.1 परिचय
6.2 इकाई के उद्देश्य
6.3 लिंग
6.4 मानस तथा लिंग विभेद
6.5 लिंग भूमिकाएँ
6.6 लिंग पहचान
6.7 शिक्षण के लिए निहितार्थ
6.8 इकाई सारांश
6.9 बोध प्रश्न के उत्तर
6.10 अभ्यास कार्य
6.11 चर्चा के बिन्दु
6.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.1 परिचय

पूर्व के अध्याय में हमने देखा कि जिससे किसी के स्त्री अथवा पुरुष होने का बोध होता है, उसे लिंग कहते हैं। लिंग के कारण स्त्री तथा पुरुष की शारीरिक संरचना में ही विभेद नहीं होता अपितु उनकी रुचियों, अभिवृत्तियों तथा क्रियाकलापों में भी भिन्नता पायी जाती है। लिंग तथा लिंग से परे कई सम्बन्धित शब्द है, जो प्रायः गलत समझे जाते हैं। लिंग भूमिकाएं, व्यवहार, दृष्टिकोण तथा व्यक्तित्व के वे लक्षण है जो किसी संस्कृति में या तो मर्दाना या स्त्री के रूप में निर्दिष्ट हैं। लिंग रूढ़िवादिता के संदर्भ में लिंग की भूमिका को समझना आम बात है। यह पुरुषों और महिलाओं की विशिष्ट विशेषताओं, वरीयताओं तथा व्यवहारों के बारे में लोगों का विश्वास और अपेक्षाएं है। जैसे लोगों का यह सोचना कि स्त्रियाँ भावुक होती हैं तथा पुरुष मजबूत तथा दृढ़। अब यदि कोई पुरुष भावुक होता है तो लोग उसे कम मर्दाना समझते हैं या किसी कमी के रूप में देखते हैं। किसी व्यक्ति के लिंग की पहचान उसके पुरुष अथवा महिला होने के मनोवैज्ञानिक अर्थ को संदर्भित करती है। इसके विपरीत, एक व्यक्ति का यौन अभिविन्यास विपरीत लिंग के सदस्यों, समान लिंग या दोनों लिंगों के प्रति उनके भावनात्मक और कामुक आकर्षण की दिशा है।

6.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त अधिगमकर्ता/विद्यार्थी–

- लिंग को परिभाषित कर सकेंगे।
- समाज में व्याप्त लिंग विभेदों को जान सकेंगे।
- समाज में निर्धारित लिंग भूमिकाओं को बता सकेंगे।
- मानस में लिंग की भूमिका को समझ सकेंगे।

- मानस तथा लिंग के संदर्भ में शिक्षण के लिए निहितार्थ को जान सकेंगे।

6.3 लिंग (Gender)

जिससे किसी व्यक्ति के स्त्री अथवा पुरुष होने का बोध होता है, उसे लिंग कहते हैं। लिंग के कारण स्त्री तथा पुरुष की शारीरिक संरचना में ही विभेद नहीं होता अपितु उनकी रुचियों, अभिवृत्तियों तथा क्रियाकलापों में भी भिन्नता पायी जाती है। लिंग को दो तरह से परिभाषित किया जा सकता है, एक तो जैविक रूप से तथा एक सामाजिक रूप से।

जैविक रूप में लिंग को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि जब स्त्री तथा पुरुष के XX गुणसूत्र मिलते है तब बालिका और जब स्त्री पुरुष के XY गुणसूत्र मिलते हैं तो बालक का जन्म होता है। लिंग के निर्धारण में लैंगिक मापदण्डों का प्रयोग किया जाता है, जो निम्न प्रकार हैं

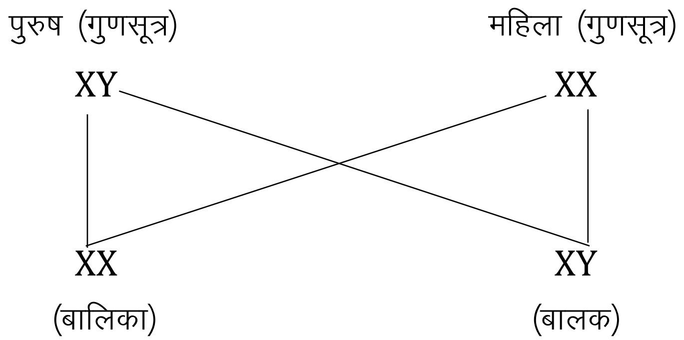

स्पष्ट है कि लिंग के निर्धारण में जैविक सम्प्रत्यय महत्वपूर्ण है। लिंग एक ऐसी धारणा है जिसमें एक संस्कृति, जाति, वर्ग तथा आर्थिक परिस्थितियों और आयु में एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति तथा एक सामाजिक समूह के दूसरे सामाजिक समूह में भी भिन्नताएं होती हैं।

मनुष्य की विशिष्ट स्थिति का निर्धारण करने में सामाजिक संरचना महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। फेमिनिस्ट विद्वानों के अनुसार–''सामाजिक लिंग को स्त्री–पुरुष विभेद के सामाजिक संगठन अथवा स्त्री पुरुष असमान सम्बन्धों की व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।''

सुप्रसिद्ध विचारक पेपनेक के अनुसार– ''सामाजिक लिंग स्त्री तथा पुरुष से सम्बन्धित है, जो स्त्री–पुरुष की भूमिकाओं को सांस्कृतिक आधार पर परिभाषित करने का प्रयास करता है एवं स्त्री–पुरुष के विशेषाधिकारों से सम्बन्धित है। सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक आधार पर लिंग सामान्यतया शक्ति सम्बन्धों का कार्य तथा असमानता का सामाजिक संगठन है।''

अतः लिंग गुणों का वह विस्तार है जिसके द्वारा हम स्त्रीत्व तथा पुरुषत्व के मध्य अन्तर कर पाते हैं। जैविक रूप से लिंग को 'नर' तथा मादा में विभाजित किया जाता है, परन्तु सामाजिक रूप से लिंग को 'स्त्री' या स्त्रीत्व (Emininity/womanhood/girlishness or womanliness) तथा 'पुरुष' अथवा पुरुषत्व (masculinity/ manhood) में विभाजित किया जाता है।

पुरुषत्व (Masculinity) पुरुष अथवा बालक व्यवहारों, भूमिका तथा गुणों का एक समूह है। स्त्रीत्व (Feminity) स्त्री अथवा बालिका के व्यवहारों, भूमिका तथा गुणों का एक समूह है।

6.4 मानस तथा लिंग विभेद (Psyche and Gender Differences)

मनोविज्ञान में लिंग में अन्तर लिंग के मानसिक कार्यों और व्यवहारों में अंतर है और यह जैविक, विकासात्मक तथा सांस्कृतिक कारकों के जटिल अंतर के कारण है। मानसिक स्वास्थ्य संज्ञानात्मक क्षमताओं, व्यक्तित्व, भावना, कामुकता और आक्रामकता की ओर झुकाव जैसे विभिन्न क्षेत्रों में अंतर पाए गए हैं। इस तरह की भिन्नता जन्मजात, सीखी या दोनों हो सकती है। आधुनिक शोध उन कारणों के बीच अन्तर करने और उठाए गए

किसी भी नैतिक चिंताओं का विश्लेषण करने का प्रयास करते हैं। चूँकि व्यवहार प्रकृति तथा पोषण के बीच अन्तःक्रिया का एक परिणाम है, अतः शोधकर्ता यह जाँचने में रुचि रखते हैं कि जीव विज्ञान तथा पर्यावरण इस तरह के मतभेद पैदा करने के लिये कैसे बातचीत करते हैं। हालाँकि यह प्रायः सम्भव नहीं होता है। आनुवांशिकी तथा पर्यावरण सहित लिंग के विभेद को प्रभावित करने के लिए कई घटक कार्य करते हैं जैसे– मस्तिष्क संरचना, कार्य में अन्तर, हार्मोन तथा सामाजीकरण। पुरुषों तथा महिलाओं के बीच अंतर के कई कारण हो सकते हैं जैविक कारणों से, मानसिक तौर पर भी अंतर आधारित हो सकता है। जिसके कारण पुरुष तथा महिला वास्तव में कुछ क्षमताओं में भिन्न होते हैं।

- लिंग भूमिकाओं (Gender Roles) में अन्तर होता है। अर्थात् पुरुषों तथा महिलाओं के कार्य करने के तरीके में अंतर होता है।

- लिंग रूढ़िवादिता (Gender Stereotype) के कारण भी लिंग में अंतर दिखाई देता है। यानी पुरुष और महिलाएं कैसे सोचते हैं उसमें अंतर पाया जाता है। जैसे हम स्त्री है तो हमें अमुक कार्य करना चाहिये या नहीं करना चाहिये इत्यादि।

कभी–कभी लिंग भूमिका तथा लिंग रूढ़िवादिता वास्तविक लिंग के अन्तर को दर्शाते हैं और कभी–कभी नहीं भी। वास्तविक लिंग अन्तर क्या है? भाषा और भाषा कौशल के संदर्भ में देखा जाए तो लड़कियाँ पहले भाषा कौशल विकसित करती हैं और लड़कों की तुलना में अधिक शब्द जानती हैं। हालांकि यह अंतर दीर्घकालिक नहीं होता है। लड़कियाँ जब दूसरे व्यक्तियों से बात कर रही होती हैं तो वे लड़कों की तुलना में उनकी प्रशंसा करने तथा उनकी टिप्पणियों पर विस्तार से सहमत होने की अधिक सम्भावना होती है। इसके विपरीत लड़के लड़कियों की तुलना में अपनी राय देने और आलोचना करने की अधिक सम्भावना रखते हैं। (लीपर एंड स्मिथ, 2004)

स्वभाव के सन्दर्भ में लड़के अनुचित प्रतिक्रियाओं को दबाने के लिए थोड़ा कम सक्षम होते हैं और लड़कियों की तुलना में चीजों को तोड़ने की थोड़ी अधिक सम्भावना रखते हैं। (एल्से– क्वेस्ट, अइड, गोल्डस्मिथ और बैन हल्ले, 2006) लड़कों में लड़कियों की तुलना में अकारण शारीरिक आक्रामकता की उच्च दर प्रदर्शित होती है और ये किसी न किसी तरह के और संगठित खेल–खेलने की अधिक सम्भावना रखते हैं। आक्रामकता के सम्बन्ध में लड़के, लड़कियों की तुलना में असुरक्षित तथा शारीरिक आक्रामकता की उच्च दर को प्रदर्शित करते हैं, परन्तु उकसाने वाली आक्रामकता में कोई अंतर नहीं है। (हाइड, 2005)

कुछ सबसे बड़े मतभेदों में बच्चों की खेल शैली शामिल है लड़के प्रायः बड़े समूहों में खेल का आयोजन करते हैं, जबकि लड़कियाँ छोटे समूहों में कम शारीरिक गतिविधियों वाला खेल खेलती हैं। (मक कोबी, 1998)। इनके अवसाद की दरों में भी अंतर पाया जाता है, लड़कियों में लड़कों की तुलना में दुःखी होने की सम्भावना अधिक होती है।

हालांकि पुरुषों तथा महिलाओं के बीच काफी परिवर्तनशीलता है। साथ ही, औसत स्तर का अन्तर होने पर भी, इनमें से अधिकांश अंतरों का वास्तविक आकार काफी छोटा होता है। इसका मतलब यह है कि किसी के लिंग को जानने से उसके वास्तविक लक्षणों का अनुमान लगाने में ज़्यादा मदद नहीं मिलती है। उदाहरण के लिये, गतिविधि स्तर के संदर्भ में लड़कों को लड़कियों की तुलना में अधिक सक्रिय माना जाता है। हालांकि कई शोधों में पाया गया है कि 42 प्रतिशत लड़कियाँ औसत लड़कों की तुलना में अधिक सक्रिय हैं। इसके अतिरिक्त कई लिंग अंतर जन्मजात नहीं होते बल्कि विशिष्ट अनुभवों तथा समाजीकरण में अंतर को दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए एक अन्तर यह है कि लड़के, लड़कियों की तुलना में बेहतर स्थानिक क्षमता रखते हैं। हालांकि तजुरियल तथा एगोज़ी (2010) ने लड़कियों को अपने स्थानिक कौशल का अभ्यास करने का मौका दिया और उसके पश्चात् यह पता चला कि अभ्यास के साथ ही यह लिंग अन्तर पूरी तरह से समाप्त हो गया। प्रायः यह माना जाता है कि लिंग में भिन्नता वास्तव में लिंग रूढ़िवादिता पर आधारित है न कि वास्तविक अंतर पर। एक विश्लेषण में यह पाया गया कि लड़कियाँ, लड़कों की तुलना में अधिक भयभीत, शर्मीली या नई चीजों से डरती नहीं हैं। लड़कों को लड़कियों की तुलना में अधिक गुस्सा नहीं है और लड़कियाँ लड़कों की तुलना में अधिक भावुक नहीं है, लड़के, लड़कियों की तुलना में गणित में बेहतर प्रदर्शन नहीं करते हैं तथा लड़कियाँ, लड़कों की तुलना में अधिक बातूनी नहीं हैं। (हाइड, 2005)।

6.5 लिंग भूमिकाएँ (Gender Roles)

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है कि लिंग भूमिकाएँ अच्छी तरह से स्थापित सामाजिक कृति है जो एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति तथा समय के साथ परिवर्तित हो सकती हैं। अमेरिकी संस्कृति में आम तौर पर लैंगिक रूढ़िवादिता के संदर्भ में लैगिक भूमिकाओं के बारे में सोचते हैं या लोगों और पुरुषों तथा महिलाओं की विशिष्ट विशेषताओं; वरीयताओं तथा व्यवहारों के बारे में विश्वास और अपेक्षाएं रखते हैं।

जब हम वयस्क होते हैं, तब तक हमारी लिंग भूमिकाएं हमारे व्यक्तित्व का एक स्थिर हिस्सा होती हैं और हम आमतौर पर कई लिंग रूढ़ियों को धारण करते हैं। बच्चे लिंग के बारे में बहुत जल्दी सीखना शुरू कर देते हैं। वे अपने पहले जन्मदिन तक, लिंग द्वारा चेहरे का भेद कर सकते हैं। वे अपने दूसरे जन्मदिन तक दूसरों के लिंग पर लेबल लगा सकते हैं और वस्तुओं को लिंग–प्रकार की श्रेणियों में भी छाँट सकते हैं। तीसरे जन्मदिन तक वे अपने स्वयं के लिंग को लगातार देख सकते हैं (मॉर्टिन, रूबल तथा स्जिकबेलो, 2002)। उस उम्र में बच्चे यह मानते हैं कि लिंग बाहरी विशेषताओं से निर्धारित होता है न कि जैविक विशेषताओं से। 3 और 6 वर्ष की आयु के बीच, बच्चे यह सीखते हैं कि लिंग स्थिर है और केवल बाहरी विशेषताओं को बदलकर, लिंग के विकसित होने से नहीं बदल सकता है। इस अवधि के दौरान बच्चे भी मजबूत और कठोर लिंग स्टीरियोटाइप विकसित करते हैं।

यह स्टीरियोटाइप (रूढ़िवादिता) खेलने के लिये संदर्भित कर सकते हैं। उदाहरण के तौर पर लड़के बन्दूकों तथा कार के साथ खेलते हैं तथा लड़कियाँ गुड़ियों से खेलती हैं। लड़के मजबूत होते हैं और लड़कियाँ बहुत भावुक। पुरुष डॉक्टर बनते हैं और महिलाए नर्स। ये रूढ़िवादिता तब तर्क कठोर रहती हैं जब तक कि बच्चे 8 या 9 साल की उम्र तक नहीं पहुँच जाते हैं। उसके पश्चात् वे संज्ञानात्मक क्षमता विकसित करते हैं जो उन्हें दूसरों के बारे में अपनी सोच में अधिक लचीला होने की अनुमति देता है।

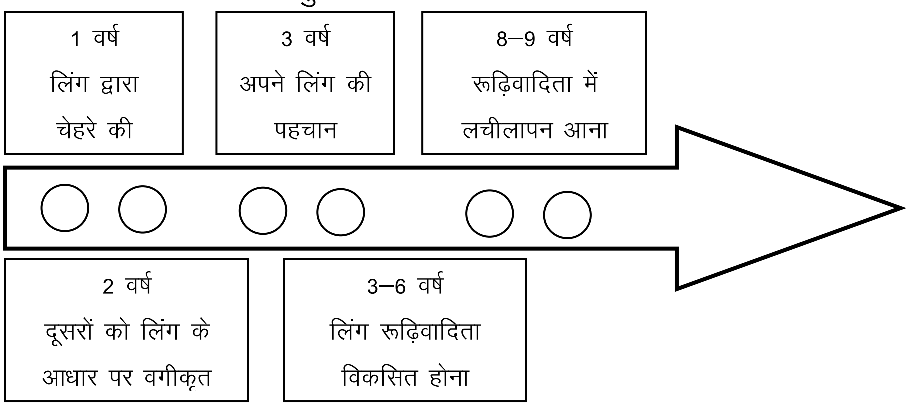

चित्र 1 : बालकों द्वारा लिंग की समझ का विकास

हमारी लैंगिक भूमिकाएं तथा लैगिक रूढ़ियाँ किस प्रकार विकसित होकर इतनी मजबूत हो जाती हैं? हमारे कई लिंग रूढ़ियाँ इतनी मजबूत हैं क्योंकि हम संस्कृति में लिंग पर काफी जोर देते हैं। (बिगलर एंड लिबेन (2007)। उदाहरण के लिए पुरुषों तथा महिलाओं के साथ उनके पैदा होने के पहले से ही अलग–अलग व्यवहार किया जाता है। गर्भावस्था के दौरान ही यह पूछा जाता है कि यह लड़का है या लड़की। और यह पता चलने के बाद कि लड़का है या लड़की लोग उसकी पसन्द, नापसन्द सब निर्धारित करने लगते हैं। जैसे–लड़का है तो उसे नीला रंग पसन्द होगा और लड़की है तो उसे गुलाबी रंग।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 1– लिंग को परिभाषित कीजिए।

उत्तर– ....

प्रश्न 2– लिंग भूमिकाएँ क्या होती हैं?

उत्तर– ....

6.6 लिंग पहचान (Gender Identity)

लिंग पहचान यह है कि आप अपने अंदर कैसा महसूस करते हैं और आप अपने लिंग को कपड़ों, व्यवहार और व्यक्तिगत उपस्थिति के माध्यम से कैसे व्यक्त करते हैं। यह एक एहसास है जो जीवन में आरम्भ से ही शुरू हो जाता है। जैसे कोई लड़की लड़कों जैसे ही बाल बनाती है और उन्हीं की तरह कपड़े पहनती है ताकि वो लड़कों की तरह पहचान बना सके। हालांकि लड़कियों का जीन्स शर्ट पहनना आम बात है पर कुछ लड़कियाँ उन्हीं की तरह ध्रुव–भाव रखती हैं ताकि वे अपनी पहचान लड़कों जैसे बना सकें। इसकी शुरुआत डेविड रीमर नाम के व्यक्ति से हुयी। डेविड रीमर का जन्म .जैविक रूप से पुरुष के रूप में हुआ था लेकिन एक ऑपरेशन के बाद तो महिला बन गया था।

6.7 शिक्षण के लिए निहितार्थ (Implications for Teaching)

मानस और लिंग के सन्दर्भ में शिक्षण एक महत्वपूर्ण और आवश्यक विषय है, जिसमें हम मानसिक स्वास्थ्य, भावनाएँ और लिंग सम्बन्धित मुद्दों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। यह शिक्षण हमें समाज में सामाजिक और भावनात्मक समझ को बढ़ावा देने के साथ–साथ स्वयं को समझने में भी मदद करता है। मानस तथा लिंग के सन्दर्भ में शिक्षण के लिए निहितार्थ को निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है–

1. **प्रशिक्षण सामग्री के द्वारा अद्वितीयता को बढ़ावा देना**– प्रशिक्षण सामग्री में प्रागैतिहासिक और समकालिक सन्दर्भों में लिंग तथा मानस की अद्वितीयता को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न प्रकार के उदाहरणों को शामिल करना।
2. **संवाद और गतिविधियों में समानता को समर्थन देना**– छात्रों के बीच समानता एवं सहमति को बढ़ावा देने के लिए गतिविधियों और चर्चाओं में मानस और लिंग से सम्बन्धित मुद्दों को शामिल करना।
3. **मानस और लिंग सम्बन्धित शिक्षक प्रशिक्षण**– शिक्षकों को लिंग और मानस सम्बन्धित मुद्दों के बारे में जागरूकता प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षण और संवाद की आवश्यकता होती है, ताकि वे छात्रों को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार समर्थन दे सकें।
4. **विविध पुस्तकों का उपयोग**– विभिन्न पुस्तकों, कहानियों और दूसरे साहित्यिक स्रोतों का उपयोग करें जो लिंग और मानस से सम्बन्धित विचारों को प्रकट करते हैं और छात्रों को इन मुद्दों को समझाने में मदद कर सकते हैं।
5. **विचारात्मक प्रश्नों को प्रोत्साहित करना**– छात्रों से लिंग और मानस से सम्बन्धित मुद्दों पर विचारात्मक प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करें ताकि उन्हें अपनी सोच को व्यक्त करने का अवसर मिले।
6. **समुदाय संलग्नता**– छात्रों को विभिन्न समुदायों के सदस्यों से मिलवाकर उनके जीवन और मान्यताओं को समझने का मौका दें, जिससे उनकी सामाजिक जागरूकता और समर्थन बढ़ सके।
7. **नाटक एवं नाट्यशाला**– छात्रों को विभिन्न प्रस्तुतियों एवं नाटकों के माध्यम से मानस और लिंग से सम्बन्धित मुद्दों के बारे में ज्यादा समझने का मौका मिलेगा।
8. **छात्र–केन्द्रित शिक्षण**– शिक्षकों को छात्रों की आवश्यकताओं और स्तर के अनुसार अद्वितीय शिक्षण योजनाएँ तैयार करने के लिए प्रोत्साहित करें जिससे प्रत्येक छात्र को मानस तथा लिंग के बारे में समझाने में सहायता मिल सके।
9. **अनुसन्धान परियोजनाएँ**– छात्रों को मानस और लिंग से सम्बन्धित अनुसन्धान परियोजनाओं को लेने के लिए प्रोत्साहित करें। इसमें सर्वेक्षण, साक्षात्कार या साहित्य समीक्षा शामिल हो ताकि इन विषयों के विशिष्ट पहलुओं का पता लगाया जा सके।
10. **ऐतिहासिक सन्दर्भ**– समाज में मानस तथा लिंग के दृष्टिकोणों का विकास कैसे हुआ, इस पर शिक्षा द्वारा छात्रों को ऐतिहासिक सन्दर्भ प्रदान किया जाना चाहिए। मानस और लिंग समानता के इतिहास में मुख्य व्यक्तियों तथा आंदोलनों के बारे में ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 3– लिंग पहचान क्या है?

उत्तर– ....

प्रश्न 4– मानस और लिंग के सन्दर्भ में शिक्षण द्वारा क्या जानकारी प्राप्त होती है?

उत्तर– ....

6.8 इकाई सारांश

मनुष्य की विशिष्ट स्थिति का निर्धारण करने में सामाजिक संरचना महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। प्राणीशास्त्रीय स्थिति मनुष्य को 'नर' तथा 'मादा' के रूप में परिभाषित करती है, किन्तु उसे पुरुष और स्त्री में विभाजित करने के अन्य कारक भी हैं। जैविक अर्थों में हम नर तथा मादा की तरह पैदा होते हैं, लेकिन हमें सामाजिक लिंग की मान्यता स्त्री और पुरुष के रूप में मिलती हैं। भारत में पितृसत्तात्मक एवं रूढिवादिता प्रचलित होने के कारण महिलाओं के साथ प्रत्येक क्षेत्र में असमानतापूर्ण व्यवहार किया जाता है।

मनुष्य समाज में उत्पन्न होता है और आजीवन वह समाज का सक्रिय सदस्य रहता है। समाज को सुदृढ़ रूप से चलाने के लिए कुछ व्यवस्थाएं तथा नियम हैं, जिनका पालन उसके सभी सदस्यों द्वारा किया जाता है। सामाजिक ताने बाने में परिवर्तन होता रहा है, परन्तु ये परिवर्तन अचानक न होकर दीर्घकालिक होते है। प्राचीन काल से ही स्त्री तथा पुरुषों के मध्य कार्य का विभाजन कर दिया गया। परिणामतः ये कार्य रूढ़ हो गये कि पुरुष अमुक कार्य नहीं कर सकता और स्त्री अमुक, बल्कि ये एक व्यवस्था के तहत किये गये थे। पुरुषों को बाहरी कार्यो की जिम्मेदारी इसलिए दी गयी क्योंकि स्त्रियों को सन्तानोत्पत्ति और बच्चों के लालन–पालन का कार्य सम्पन्न करना होता था । परिणामस्वरूप स्त्री के कार्य को अनुत्पादक माना जाने लगा, क्योंकि वह धन का अर्जन नहीं करती और सम्पूर्ण परिवार को कमाकर खिलाने के कारण पुरुषों का महत्व अत्यधिक माना जाने लगा और आर्थिक अधिकारों के विषय में भी उन्हें ही प्रमुखता दी जाने लगी। इस प्रकार पुरुष प्रधान समाज की स्थापना हो गयी जहाँ स्त्रियों के अधिकार और स्वतन्त्रता से परिमित थीं। निःशक्त महिलाओं के लिए परिस्थितियाँ और भी विषम थीं। समय के साथ बहुत सारे कानून बनें जिससे आज बहुत सारी महिलाएँ आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ रही हैं तथा प्रत्येक क्षेत्र में सफल हो रही है परन्तु कहीं न कहीं जानकारी के अभाव में निःशक्त महिलाएं अभी भी इन सुविधाओं से वंचित है। जिसके कारण वे कम उम्र में गर्भवती हो जाती है शिक्षा से वचित होती हैं या फिर मौन शोषण का शिकार हो जाती हैं।

6.9 बोध प्रश्न के उत्तर

1. जिससे किसी व्यक्ति के स्त्री अथवा पुरुष होने का बोध होता है, उसे लिंग कहते हैं।
2. लिंग भूमिकाएँ अच्छी तरह से स्थापित सामाजिक कृति है जो एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति तथा समय के साथ परिवर्तित हो सकती हैं।
3. लिंग पहचान यह है कि आप अपने अंदर कैसा महसूस करते हैं और आप अपने लिंग को कपड़ों, व्यवहार और व्यक्तिगत उपस्थिति के माध्यम से कैसे व्यक्त करते हैं।
4. मानस और लिंग के सन्दर्भ में शिक्षण एक महत्वपूर्ण और आवश्यक विषय है, जिसमें हम मानसिक स्वास्थ्य, भावनाएँ और लिंग सम्बन्धित मुद्दों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं।

6.10 अभ्यास कार्य

1. बालकों द्वारा लिंग की समझ के विकास को अपने शब्दों में बताइये।
2. समाज में व्याप्त लिंग रूढ़िवादिता के मजबूत होने के क्या कारण हो सकते हैं?
3. मानस तथा लिंग के सन्दर्भ में शिक्षण की भूमिका पर दृष्टिपात कीजिए।

6.11 चर्चा के बिन्दु

1. समाज मे व्याप्त लिंग विभेदों को समाप्त करने के लिए लोगों को जागरूक करने के प्रयासों पर चर्चा कीजिए।

6.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- De Silva De Alwis, R., Secretariat for the Convention on the Rights of Persons with Disabilities of the Department of Economic and Social Affairs/United Nations, United Nations Population Fund, & Wellesley Centers for Women. (2008b). *Disability Rights, Gender, and Development: A Resource Tool for Action*. https://www.un.org/disabilities/documents/Publication/UNWCW%20MANUAL.pdf
- Hans, A., Mohanty, R., & Shanta Memorial Rehabilitation Centre. (n.d.). *Inclusion of disability and gender in disaster management and response*. https://www.preventionweb.net/files/9661_InclusionofDisabilityGender.pdf
- Legislative Department. दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016. https://legislative.gov.in/sites/default/files/H201649.pdf
- Meekosha, H. (2004). *GENDER AND DISABILITY*. https://disability-studies.leeds.ac.uk/wp-content/uploads/sites/40/library/meekosha-meekosha.pdf

इकाई–7
समावेशी समानता
(Inclusive Equality)

इकाई संरचना

7.1 परिचय
7.2 इकाई के उद्देश्य
7.3 कानून के समक्ष समानता
7.4 शैक्षिक समानता
7.5 आर्थिक समानता (कार्य तथा रोजगार में
7.6 स्वास्थ्य सम्बन्धी समानता
7.7 हिंसा एवं उत्पीड़न
7.8 पारिवारिक जीवन एवं मातृत्व
7.9 ग्रामीण महिलाएँ
7.10 उपलब्धता
7.11 इकाई सारांश
7.12 बोध प्रश्न के उत्तर
7.13 अभ्यास कार्य
1.14 चर्चा के बिन्दु
7.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.1 परिचय

भारत में अक्षम महिलाओं एवं बालिकाओं के लिये चिन्ता के मुद्दों को शामिल करके तत्काल उनकी जरूरतों को पूरा करने की आवश्यकता है।

व्यक्तिगतता के रूप में विलोपन तथा समूह के रूप में अदृश्यता अक्षम महिलाओं का भाग्य है। छेड़खानी, ताना सुनने वाली, नीची नजर से देखने और बात करने के अलावा अक्षम महिलाओं को लिंग तथा अक्षमता दोनों का संयुक्त रूप से अनुभव करना पड़ता है। वे समाज के हाशिये पर एक अदृश्य अस्तित्व जीती हैं। बहिष्करण, कलंक तथा पूर्वाग्रह उनके जीवन का एक नियमित पहलू है। स्वतन्त्रता, सम्मान, गरिमा और व्यक्तित्व की समानता से उन्हें वंचित किया जाता है। अक्षम महिलाओं के अधिकार के बारे में जानकारी तथा जागरूकता की कमी है, जिस कारण निगरानी प्रक्रिया (Monitoring process) की भी कमी है।

7.2 इकाई के उद्देश्य

- विद्यार्थी समावेशी समानता को समझ सकेंगे।
- कानून के समक्ष समानता, शैक्षिक तथा आर्थिक समानता को जान सकेंगे।
- महिलाओं के स्वास्थ्य सम्बन्धी समानता को समझ सकेंगे।

7.3 कानून के समक्ष समानता (Equality before the Law)

अक्षम महिलाएँ वास्तविकता तथा समानता की प्राप्ति से अभी काफी दूर हैं। भारत द्वारा अनुसमर्पित विभिन्न सम्मेलनों में कानून के समक्ष समान मान्यता की कानूनी व्याख्या को शामिल किया गया है। CEDAW (Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination against Women) (Art. 15) तथा CRPD (Convention on the Rights of Persons with Disabilities) (Art. 12&13) में दो महत्वपूर्ण घटक है – कानूनी क्षमता तथा न्याय तक पहुँच। राष्ट्रीय न्यास अधिनियम (The National Trust Act) स्वलीनता (Autism), मानसिक अक्षमता (Intellectual Disability), मस्तिष्क पक्षाघात (Cerebral Palcy) तथा बहु विकलांग लोगों के लिये संरक्षण व्यवस्था प्रदान करके समानता को सीमित करता है। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम (Representation of People's Act), 1950 के अनुसार कोई व्यक्ति मतदाता सूची में पंजीकरण के लिये अयोग्य हो जायेगा यदि वह विकृत दिमाग का है। इसलिये मनोसामाजिक अक्षमता वाले व्यक्तियों को मताधिकार के मूल अधिकार से वंचित किया जाता है।

कानून के समक्ष समानता के लिये सबसे स्पष्ट बाधाओं में से एक न्याय प्रणाली तक महिलाओं की पहुँच है तथा न्याय प्रणाली तक भौतिक पहुँच का अभाव है। उदाहरण के लिये चेन्नई में फैमिली कोर्ट देश भर में कई अन्य लोगों की तरह दुर्गम थी, जिसकी महिलाओं ने शिकायत की थी। दृष्टिबाधित महिलाओं के लिये उचित आवास प्रदान करने में विफलता इस बात की ओर संकेत करता है कि हम उन्हें वैकल्पिक प्रारूपों में सांकेतिक भाषा के अनुवादकों तथा सामग्रियों को भी प्रदान करने में विफल हैं। यदि समकक्षों न्याय प्रणाली तक नहीं पहुँच पाती हैं, तो इसका तात्पर्य यह है कि उन्हें उनके अधिकारों से भी वंचित रखा जाता है।

राज्य को अक्षम महिलाओं एवं बालिकाओं को कानूनी क्षमता का प्रयोग करने के लिये या कानूनी क्षमता तक पहुँच प्रदान करने के लिये आवश्यक सहायता तथा उचित उपाय करने की आवश्यकता है। ऐसे कानून वैधानिक क्षमता को हटाने तथा संरक्षकता (Guardianship) को प्रतिस्थापित करने वाले होने चाहिए। उनका (कानून) का उन्मूलन करके उसके स्थान पर सहयोगी निर्णायक बनने वाले कानून बनाए जाने चाहिये, जिससे अक्षम महिलाओं तथा बालिकाओं की स्थिति में सुधार लाया जा सके।

7.4 शैक्षिक समानता (Educational Equality)

भारतीय शैक्षिक क्षेत्र में अक्षम महिलाओं एवं बालिकाओं का उनके पुरुष समकक्षों या अन्य ऐसी महिलाएँ जो अक्षम नहीं है, की तुलना में अच्छा प्रदर्शन नहीं है। जनसंख्या जनगणना (2001) के अनुसार अधिकांश दिव्यांग लोग निरक्षर पाये गये तथा केवल एक तिहाई (37%) से थोड़ा अधिक लोगों के साक्षर होने की सूचना प्राप्त हुई। सर्व शिक्षा अभियान के तहत भारत में शिक्षा सम्बन्धी प्रमुख कार्यक्रमों में विद्यालय न जाने वाली लड़कियों में 30% लड़कियाँ ऐसी हैं, जो अक्षम हैं। शिक्षा के सभी स्तरों पर तथा विभिन्न प्रकार की अक्षमताओं के बीच लैंगिक अन्तर निरन्तरता में बना हुआ है। उदाहरण के लिये बहु–विकलांगता वाले व्यक्तियों, बौद्धिक अक्षमता वाले व्यक्तियों तथा बोलने व सुनने की अक्षमता वाले व्यक्तियों में मुख्य रूप से संचार साधनों की कमी तथा सीखने के अनुकूल माहौल में कमी के कारण शिक्षा में नामांकन में कमी पाई जाती है तथा इसमें भी अक्षमता के विभिन्न प्रकार की श्रेणियों में विकलांग महिलाओं में विकलांग पुरुषों की तुलना में कम पाये गये हैं।

अक्षम बालिकाओं में अभी शिक्षा तक पहुँच बनाने तथा शिक्षा में बने रहने में कई बाधाएँ हैं। सबसे पहले परिवार अक्षम बालिका की शिक्षा में निवेश करना आवश्यक नहीं समझता है, क्योंकि यह परिवार सोचता है कि वह उपलब्ध संसाधन का प्रयोग उस अक्षम बालिका के भाई–बहन की शिक्षा के लिये कर सकता है तथा दूसरा स्कूल पहुँचने के लिये सुलभ परिवहन और सुरक्षित आवागमन के विकल्प उपलब्ध नहीं हो सकते।

विद्यालयों में विशेष शिक्षा वाले शिक्षकों की अनुपस्थिति जैसे कारण और बुनियादी ढाँचागत सुविधाएँ जैसे सुलभ शौचालय अक्षम बालिकाओं की शिक्षा के लिये प्रमुख बाधाएँ हैं। सर्व शिक्षा अभियान के तहत रैंप वाले स्कूल पूरी तरह से होने का दावा करते हैं, हालांकि इन रैंप तक पहुँच, रैंप की सही ढाल, कक्षाओं, पुस्तकालय, कैंटीन, शौचालय, पानी पीने के क्षेत्र और अध्ययन सामग्री आदि को अभी तक बाधा मुक्त नहीं बनाया गया है।

अन्य बुनियादी सुविधाओं जैसे आवासीय सुविधाओं और अक्षम महिलाओं की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये डिजाइन किये गये विशेष उपकरण की अनुपस्थिति शिक्षा प्राप्ति के लिये एक अतिरिक्त बाधक के रूप में कार्य

करता है। शैक्षणिक संस्थानों में सांकेतिक भाषा को समझाने की व्यवस्था न होने के कारण तथा साथ ही संचार के अन्य रूप में निर्देश प्रदान करने की व्यवस्था न होने के कारण श्रवण बाधित बालिकाओं को परेशानी होती हैं। समावेशी शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत चयनित किये गये शिक्षकों को पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित नहीं किया जाता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1– CEDAW का पूर्ण रूप लिखिए।

उत्तर– ....

प्रश्न 2– अक्षम बालिकाओं में अभी शिक्षा तक पहुँच बनाने तथा शिक्षा में बने रहने में आने वाली कोई एक बाधा बताइए।

उत्तर– ....

7.5 आर्थिक समानता (कार्य तथा रोजगार में) (Economical Equality in Work and Employment)

अक्षम महिलाओं की आर्थिक स्वतन्त्रता सही मायने में उनके सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालांकि उन्हें व्यवस्थित रूप से मुख्यधारा के कार्यबल से बाहर रखा गया है, जिन्हें भ्रामक रूप से उत्पादन कार्यों में अक्षम और समाज के बोझ के रूप में पेश किया जा रहा है। रूढ़िवादी मानसिकता अक्षम महिलाओं की या तो गृह निर्माता की पारम्परिक भूमिका या जीविकोपार्जन की नई भूमिका के रूप में अनुपयुक्त समझती है। दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम (PWDs) 1995 भी सभी अक्षम व्यक्तियों की क्षमता को उचित मान्यता देने में विफल रहा है और इसमें अक्षम महिलाओं के लिये कोई विशेष प्रावधान नहीं है। अक्षम व्यक्तियों और विशेष रूप से अक्षम महिलाओं को श्रम बल में भाग लेने से रोकने और आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में आने वाली समस्याओं में मुख्य बातें उनके अपेक्षित कौशल की कमी (अपर्याप्त और अनुचित व्यावसायिक और कौशल विकास कार्यक्रम से जुड़ी), भेदभाव, सहकर्मियों द्वारा उनकी कार्य– क्षमता पर सन्देह करना, निर्णय लेने की स्थिति में अक्षम व्यक्तियों और महिलाओं के प्रतिनिधित्व का अभाव, सरकारी क्षेत्र में आरक्षण नीति की निगरानी का अभाव और निजी क्षेत्र में सकारात्मक कार्यक्रमों का कार्यान्वयन न होना शामिल हैं।

7.6 स्वास्थ्य सम्बन्धी समानता (Health related Equality)

भारत में नीतिगत सोच में, चिकित्सा मॉडल के प्रभुत्व को देखते हुये अक्षमता स्वयं अक्षम व्यक्ति के लिए केन्द्रीय और एकमात्र स्वास्थ्य चिन्ता बन जाती है। दिव्यांग व्यक्ति के लिए सामान्य स्वास्थ्य सम्बन्धी चिन्ताएँ (टीकाकरण, पोषण) उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि अक्षमता विशिष्ट स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ। फिर अक्षम महिलाओं की प्रजनन और बाल स्वास्थ्य आवश्यकताओं की उपेक्षा को सम्बोधित करना भी आवश्यक था। सरकार धीरे–धीरे स्वास्थ्य क्षेत्र से बाहर निकल रही है और परिवार के भीतर भी संसाधनों के अनुचित वितरण से, बुनियादी स्वास्थ्य में अन्तर अक्षम महिलाओं को और भी अधिक नुकसान में डालता स्वास्थ्य सेवा तक पहुंचा है, क्योंकि वे सबसे गरीब लोगों में से एक हैं। अक्षम महिलाओं के लिए स्वास्थ्य सेवाओं में भेद–भाव एक वास्तविकता है, जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। स्वास्थ्य देखभाल समायोजन में, जिसमें यौन उत्पीड़न, अपमान और जबरन चिकित्सा प्रक्रियाएँ, या जो बिना सूचित सहमति के आयोजित की जाती है और जो अपरिवर्तनीय हो सकती है, जैसे कि जबरन हिस्टेरेक्टॉमी, जबरन सिजेरियन सेक्शन (शल्यक्रियात्मक प्रसव), जबरन गर्भपात और गर्भ निरोधकों का जबरन उपयोग, विशेष रूप से वंचित महिलाओं एवं लड़कियों के लिए खिलाफ हो रही ऐसी हिंसा की निन्दा करनी चाहिए तथा कार्यवाही की जानी चाहिए।

- **जबरन हिरासत एवं उपचारः**

मानसिक अस्पताल/शरणालय में पुरुषों की तुलना में अधिक महिलाएँ पाई जाती हैं, जबकि पुरुषों को प्रारम्भिक व्यवस्था में इलाज के लिए भर्ती कराया जाता है, महिलाओं को उनकी बीमारी पुरानी होने के

कारण छोड़ दिया जाता है। महिलाओं को इलाज के बाद शायद ही कभी घर वापस ले जाया जाता है।

- **जबरन बन्ध्यीकरण, गर्भपात और इच्छामृत्यु:**

  स्वास्थ्य के सन्दर्भ में मनो–सामाजिक और मानसिक अक्षमताओं वाली महिलाओं का अधिकार चिन्ता का एक प्रमुख क्षेत्र है, क्योंकि वे प्रणाली में सबसे कमजोर है, और देखभाल और सुरक्षा व्यवस्था के आधार पर उपचार और संस्थागतकरण के अधीन है। यहाँ तक कि सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों, हस्तक्षेपों और सार्वजनिक और निजी क्षेत्र में मानसिक स्वास्थ्य संस्थानों और अस्पताल की निगरानी के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के दायित्व के बावजूद, दुर्व्यवहार विशेष रूप से महिलाओं का यौन शोषण, बड़े पैमाने पर बना हुआ है। संस्थानों के भीतर और परिवार द्वारा जबरन बन्ध्यीकरण (Sterilization) आम बात है हालांकि यह मानवाधिकार का उल्लंघन है। अक्षम महिलाओं को उनकी पसन्द के अनुसार गर्भनिरोधक का उपयोग करने में सक्षम होना चाहिए। हाल के वर्षों में महिलाओं को मासिक धर्म स्वच्छता का प्रबंधन करने और उन्हें बलात्कार से बचाने के लिए सिखाने के बजाय कुछ दवाओं का उपयोग करके नसबन्दी के तरीकों की उपलब्धता को बड़े पैमाने पर आजमाया जा रहा है।

अक्षम महिलाएँ गर्भावस्था और प्रसवोत्तर देखभाल से सम्बन्धित परिवार नियोजन सेवाओं में शायद ही कभी शामिल होती हैं। उनका गैर सहमति से उपयोग अक्षम महिलाओं को कानूनी समता से वंचित करता है और उनके शरीर पर उनके अधिकार का उल्लंघन करता है।

अजन्मे बच्चे के लिंग की पहचान को पता करके लड़के को ही पैदा करना एक प्रकार के लैंगिक भेद–भाव को ही बढ़ावा देता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 3– दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम किस वर्ष आया था?

उत्तर– ....

प्रश्न 4– क्या दिव्यांग व्यक्ति को भी टीकाकरण की आवश्यकता होती है?

उत्तर– ....

7.7 हिंसा एवं उत्पीड़न (Violence and Persecution)

इसके सभी पहलुओं में हिंसा अक्षम महिलाओं के लिए चिन्ता का एक गम्भीर क्षेत्र बना हुआ है, दोनों एक रूप में व्यक्तिगत अनुभव और एक संरचनात्मक वास्तविकता जो उन्हें जीवन के सभी क्षेत्रों में व्यवस्थित रूप से उत्पीड़ित की जाती है। पीड़ित व्यक्ति को अधिक संवेदनशीलता के अलावा अन्य कारकों की भी बहुलता है जैसे कि अक्षमता की गम्भीरता, दूसरों पर निर्भरता, दुर्व्यवहार, संचार सीमाएँ (उदाहरण के लिए, बोलने और सुनने की अक्षमता वाली महिलाएँ, बौद्धिक अक्षमता, मनोसामाजिक अक्षमता), संस्थागत व्यवस्थाओं में आसान पहुँच, उत्पीड़न या दुर्व्यवहार की शिकायतों की कम या गैर–विश्वसनीयता, अक्षम महिलाओं (विशेष रूप से मनोसामाजिक और बौद्धिक अक्षमता वाली महिलाएँ) आदि को और अधिक मानसिक तनाव का अनुभव कराते है।

एक बार दुर्व्यवहार का अनुभव हो जाने के बाद और उसे स्वीकार करने के बाद, न्याय तक पहुँचने में कई बाधाएँ आती है, जिसमें शिकायतों तथा उनके निवारण की जटिल प्रक्रिया, राज्य और निजी दोनो क्षेत्र की जवाबदेही का अभाव तथा पुलिस तथा न्यायिक प्रणाली में कर्मियों की असंवेदनशीलता आदि शामिल है। CRPD हो रही हिंसा की पहचान करता है तथा अनुच्छेद 15 तथा 16 के तहत उत्पीड़न दुर्व्यवहार, शोषण तथा हिंसा से सुरक्षा प्रदान करता है।

हिंसा के मुद्दे पर चिन्ता के महत्वपूर्ण क्षेत्र संस्थानों एवं घर दोनों जगह पाए जाते हैं–

- **संस्थानों के भीतर हिंसाः**

अक्षम महिलाओं एवं लड़कियों के सम्बन्ध में संस्थानों में मानसिक स्वास्थ्य सुविधाएँ, देखभाल, आवासीय छात्रावास, निराश्रितों के लिए घर, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों कि लिये बाल–गृह और धार्मिक–स्थान शामिल हैं। इन संस्थानों के भीतर हिंसा की श्रृंखला में गन्दे बने रहने की स्थिति, विशेष रूप से मासिक धर्म के दौरान कपड़ो की गैर व्यवस्था, शारीरिक शोषण और यौन शोषण व हिंसा की स्थिति शामिल है। हालांकि, इस तरह की प्रणालीगत हिंसा की समस्या का कोई जवाब नहीं है।

➢ **घर के भीतर हिंसा:**

हालांकि घरेलू हिंसा अधिनियम 2005, सभी महिलाओं के लिए घरेलू परिवेश में हिंसा और दुर्व्यवहार के मुद्दों को सम्बोधित करने के लिए लागू किया गया। अक्षम महिलाओं को अपने ही रिश्तेदारों के हाथों गम्भीर दुर्व्यव्यहार का सामना करना पड़ रहा है, जिसमें जानबूझकर अलगाव, बुनियादी सुविधाओं से वंचित करना, जंजीर लगाना, मानसिक शोषण, भावात्मक अभाव और परित्याग शामिल हैं। अक्षम महिलाओं के लिए परित्याग दो स्तरों पर होता है, एक उनकी अक्षमता के कारण और दूसरा जब उन्हें यौन हिंसा का शिकार पाया जाता है, खासकर ऐसे मामलो में जहाँ उन्होंने दुर्व्यवहार के परिणामस्वरूप गर्भधारण किया है। दोनो ही मामले में, उनकी असुरक्षित और बेघर होने की स्थिति से समाज में अधिक यौन शोषण के लिए उनकी अति संवेदनशीलता बढ़ जाती है।

➢ **संघर्ष क्षेत्रों में हिंसा:**

संघर्ष क्षेत्रों में रहने वाली अक्षम महिलाओं के लिए, इन सभी कारकों में और अधिक वृद्धि होती है। संघर्ष का माहौल, उन्हे दुर्व्यव्यहार और हिंसा का आसान लक्ष्य बना देता है।

7.8 पारिवारिक जीवन एवं मातृत्व (Family Life and Motherhood)

कई अक्षम महिलाएँ विशेष रूप से बौद्धिक अक्षमता वाली महिलाओं 'को पारिवारिक जीवन और मातृत्व से वंचित कर दिया जाता है। अक्षम महिलाओं के बारे में रूढ़िवादी विचारों के परिणामस्वरूप वे पारिवारिक जीवन से बाहर रहती हैं। इसे दूर करने के लिए कई राज्य पुनर्वास और अन्य सुविधाएँ प्रदान करने के बजाय ऐसी महिलाओं की जबरदस्ती शादी करने लगे हैं। इसे एक ऐसा विचार कहा जा सकता है जो अक्षम महिलाओं पर वैवाहिक अवसरों को बढ़ाने की आड़ में हिंसा को बढ़ाने में योगदान दे रही है। अक्षम महिलाएँ अपने बच्चों को उनकी देखभाल से जबरदस्ती हटाती हुई पाई जाती हैं। दहेज के कारण कई शादियाँ की जाती है, जिस कारण तलाक की संख्या बहुत अधिक है। तलाक के कारण कई महिलाओं ने अपने बच्चों का संरक्षण खो दिया तथा उन्हें अयोग्य माता घोषित किया जाने लगा।

7.9 ग्रामीण महिलाएँ (Rural Women)

अधिकतर अक्षम महिलाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में रहती हैं। उनमें से अधिकांश स्वास्थ्य देखभाल से वंचित हैं और साक्षरता का स्तर भी कम है। ज्यादातर महिलाएं कृषि सम्बन्धी गतिविधियों में काम करती हैं, लेकिन कुछ अक्षम महिलाएँ कृषि सम्बन्धी गतिविधियों के लिए भी नहीं बनी हैं। हालांकि भारत में ग्रामीण विकास में अक्षमता से सम्बन्धित कई योजनाएँ हैं, लेकिन यह केन्द्र बिन्दु नहीं है। स्वयं सहायता समूहों तक पहुँच में तीन प्रतिशत आरक्षण है, लेकिन यह जानने के लिए कोई आँकड़ा उपलब्ध नहीं है, कि महिलाओं तक इसकी पहुँच कितनी है।

7.10 उपलब्धता (Availability)

CRPD का अनुच्छेद 9 उपलब्धता को एक मूल अधिकार के रुप में मान्यता देता है, जिसमें न केवल भौतिक और आधारभूत पहुँच शामिल है, बल्कि उपयुक्त सूचना, संचार एवं सेवाओं तक पहुँच भी शामिल है। विकलांग व्यक्ति (समान अवसर अधिकारों का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 की धारा 44–46 गैर–भेदभाव को निर्धारित करता है। यद्यपि सरकार भौतिक/पर्यावरण सुलभता लाने का प्रयास कर रही है, पर्याप्त योजना की कमी और घटिया कार्यान्वयन, समाधान की तुलना में अधिक बाधाओं को जन्म देता है। अक्षम व्यक्ति शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार के अवसरों, अवकाश, मनोरंजन, पर्यटन आदि तक सुरक्षित बुनियादी ढाँचे के निर्माण तथा बाहरी वातावरण

के अभाव में नहीं पहुँच सकते।

बोध प्रश्न

प्रश्न 5— घरेलू हिंसा अधिनियम 2005, किन मुद्दों को सम्बोधित करने के लिए लागू किया गया?

उत्तर— ....

प्रश्न 6— CRPD का अनुच्छेद 9 उपलब्धता को किस रूप में मान्यता देता है?

उत्तर— ....

7.11 इकाई सारांश

शिक्षा के क्षेत्र में लैंगिक समानता के सम्बन्ध में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। लड़कियों एवं महिलाओं को कई तरह से वंचित किया जाता है। शिक्षा में लैंगिक असमानता की व्यापकता को शिक्षा प्रणाली की प्रगति के मार्ग में प्रमुख बाधा माना जाता है। शिक्षा में लैंगिक असमानता को बढ़ावा देने वाले प्रमुख कारक हैं, गरीबी की स्थिति, पारम्परिक दृष्टिकोणों की व्यापकता स्कूल का बुनियादी ढाँचा, लड़कियों के बीच भेदभावपूर्ण व्यवहार, आपराधिक और हिंसक कृत्यों की घटना, बाल विवाह, माता पिता की शिक्षा, माता—पिता का व्यवसाय, घरेलू जिम्मेदारियों का प्रबन्धन और पढ़ाई में रुचि की कमी। जब लड़कियाँ या महिलाएँ इनमें से एक या अधिक कारकों का अनुभव कर रही होती हैं, तो आमतौर पर यह उन्हें शारीरिक रूप से और साथ ही मानसिक रूप से भी प्रभावित करती है। ऐसे कार्यक्रम और योजनाएँ बनाई गई हैं, जिनका मुख्य उद्देश्य बालिकाओं और महिलाओं के साथ सम्मान के साथ व्यवहार करने और उन्हें समान अधिकारों और अवसरों का प्रावधान करने के लिये सभी श्रेणियों, पृष्ठभूमि और समुदायों से सम्बन्धित व्यक्तियों के बीच जागरुकता पैदा करना है। जब व्यक्ति और समुदाय बालिकाओं को समान अधिकार और अवसर प्रदान करेंगे, तो यह न केवल उनके प्रभावी वृद्धि और विकास को बढ़ावा देगा, बल्कि समुदायों और सम्पूर्ण राष्ट्र की भलाई को भी बढ़ावा देगा।

7.12 बोध प्रश्न के उत्तर

1. CEDAW का पूर्ण रूप Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination against Women है।
2. अक्षम बालिकाओं में अभी शिक्षा तक पहुँच बनाने तथा शिक्षा में बने रहने में आने वाली कोई एक बाधा यह है कि परिवार अक्षम बालिका की शिक्षा में निवेश करना आवश्यक नहीं समझता है।
3. दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम 1995 में आया था।
4. हाँ, दिव्यांग व्यक्ति को भी टीकाकरण की आवश्यकता होती है।
5. घरेलू हिंसा अधिनियम 2005, सभी महिलाओं के लिए घरेलू परिवेश में हिंसा और दुर्व्यवहार के मुद्दों को सम्बोधित करने के लिए लागू किया गया।
6. CRPD का अनुच्छेद 9 उपलब्धता को एक मूल अधिकार के रुप में मान्यता देता है।

7.13 अभ्यास कार्य

1. महिलाओं की कानून के समक्ष समानता को अपने शब्दों में बताइए।
2. महिलाओं की स्वास्थ्य सम्बन्धी समानता में आने वाली बाधाओं पर दृष्टिपात कीजिये।
3. दिव्यांग महिलाओं को किस प्रकार की हिंसा तथा उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है? विस्तृत चर्चा कीजिये।
4. दिव्यांग महिलाओं के पारिवारिक जीवन में आने वाली समस्याओं का वर्णन कीजिये।

7.14 चर्चा के बिन्दु

प्र01. अक्षम महिला एवं बालिका के समावेशी समानता को बढ़ावा देने के लिए किए जा सकने वाले प्रयासों पर चर्चा कीजिये।

7.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- त्रिपाठी, प्र. (2019). *लिंग, विद्यालय एवं समाज.* अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा सिंह, अ. (2015). *लिंग एवं समाज.* विवेक प्रकाशन, दिल्ली Legislative Department. दिव्यांगजनअधिकारअधिनियम2016. https://legislative.gov.in/sites/default/files/H201649.pdf
- Monika, Sambyal, S., & Kiran. (2023).Women Disability:Existing Challenges and future Possibilities to stir up their voices for justice. *ResearchGate*. https://www.researchgate.net/publication/373367009.
- Raha,S.&Sengupta,S.(2018).Rights of Women with Disabilities Under Indian Legislations.*Articles Section of www.manupatra.com*, 191–210. http://docs.manupatra.in/newsline/articles/Upload/7102F404-0902-4EEC-BA55-F8EFC25DA6D4.pdf.

इकाई–8

लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिए शिक्षक की भूमिका

(Teacher's role in promoting Gender Equality)

इकाई संरचना

8.1 परिचय

8.2 इकाई के उद्देश्य

8.3 लैंगिक समानता

8.4 लैंगिक समानता में शिक्षक की भूमिका

8.5 एक सामान्य कक्षा में लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिए शिक्षक की भूमिका एवं लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए कार्य

8.6 इकाई सारांश

8.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.8 अभ्यास कार्य

8.9 चर्चा के बिन्दु

8.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.1 परिचय

भारत ने स्वतन्त्रता प्राप्त करने के साथ ही नारी शिक्षा व नारी स्वास्थ्य के प्रति अपना ध्यान आकर्षित किया। पहले भारत में पुरूषों तथा स्त्रियों की शिक्षा में असमानता थी। स्वतन्त्र होने पर देश के संविधान में इस असमानता को हटाते हुये कहा गया कि राज्य किसी भी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, जाति, लिंग, जन्म–स्थान या इनमें से किसी भी आधार पर कोई विभेद नहीं कर सकता। स्वतन्त्र भारत में आज सभी क्षेत्रों में नारी को शिक्षा प्राप्त करने और जीवनयापन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता है। बालक–बालिकाओं की शिक्षा को भी किन्हीं क्षेत्रों में अलग और अधिकांश क्षेत्रों में समान स्तरों में क्रियान्वित करके ही समाज के सर्वांगीण विकास की बात सोची जा सकती है। व्यक्तित्व विकास के लिए शिक्षा और रोजगारोन्मुख शिक्षा– ये अगले दो स्तर हैं जिन पर अलग–अलग ध्यान देने की आवश्यकता है।

भारत की शिक्षा व्यवस्था स्त्री एवं पुरूष में कोई भेद नहीं करती है। यह बात भी उतनी व्यावहारिक है कि सामान्य शिक्षा का झुकाव व्यावसायिक शिक्षा की ओर होना चाहिए और व्यावसायिक शिक्षा में सामान्य शिक्षा का अंश होना चाहिए। शिक्षा के व्यवसायीकरण से यह मतलब है कि बच्चों में ज्ञान, कौशल और अच्छी प्रवृत्ति का विकास हो ताकि वे अपने ज्ञान व कौशल को व्यवसायों में प्रयोग कर सकें। व्यावसायीकरण के द्वारा बालिकाओं में नए–नए कौशल सीखने की क्षमता का विकास होना चाहिए। शिक्षा के द्वारा हमारी महिलाएँ ऐसी बननी चाहिए कि वे गृहिणी और कामगार दोनों की भूमिका भली प्रकार निभा सकें।

शिक्षकों की भूमिका लिंग समानता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण है। वे छात्रों को शिक्षा में समानता की महत्वपूर्णता सिखाने के लिए सकारात्मक प्रेरणा प्रदान करते हैं और उन्हें समाज में विभिन्न भूमिकाओं में स्थान बनाने के लिए प्रेरित करते हैं। शिक्षकों का कार्यक्षेत्र लिंग स्थितियों को समझने और उन्हें बदलने में सहायक होती है, जिससे समाज में सामंजस्य और समानता की भावना बढ़ती है।

8.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त अधिगमकर्ता/विद्यार्थी—

- लैंगिक समानता को परिभाषित कर सकेंगे।
- समाज में व्याप्त विभिन्न लैंगिक असमानताओं को जान सकेंगे।
- लैंगिक समानता के लिए शिक्षक की भूमिका को समझ सकेंगे।
- लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए विभिन्न उपायों को बता सकेंगे।

8.3 लैंगिक समानता (Gender equality)

लैंगिक समानता, जिसे यौन समानता या लिंगों की समानता के रूप में भी जाना जाता है, आर्थिक भागीदारी और निर्णय लेने सहित लिंग की परवाह किए बिना संसाधनों और अवसरों तक पहुँच में समान अवसर की स्थिति है और लिंग की परवाह किए बिना विभिन्न व्यवहारों, आकांक्षाओं और जरूरतों को समान रूप से महत्व देने की स्थिति ही लैंगिक समानता है।

लैंगिक समानता महिलाओं और पुरूषों के प्रति निष्पक्ष होने की प्रक्रिया है। निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए महिलाओं के ऐतिहासिक और सामाजिक नुकसान की भरपाई के लिए रणनीतियाँ और उपाय हमेशा उपलब्ध होने चाहिए जो महिलाओं और पुरूषों को समान स्तर पर काम करने से रोकते हैं। लैंगिक समानता के लिए महिलाओं एवं पुरूषों द्वारा सामाजिक रूप से मूल्यवान वस्तुओं, अवसरों, संसाधनों और पुरस्कारों का समान आनन्द लेना आवश्यक है।

लैंगिक समानता आन्तरिक रूप से सतत विकास से जुड़ी हुई है और सभी के लिए मानवाधिकारों की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण है। लैंगिक समानता का समग्र उद्देश्य एक ऐसा समाज बनाना है जिसमें महिलाओं और पुरूषों को जीवन के सभी क्षेत्रों में समान अवसर, अधिकार और दायित्व प्राप्त हों।

महिलाओं और पुरूषों के बीच समानता तब मौजूद होती है, जब दोनों लिंग शक्ति और प्रभाव के वितरण में समान रूप से साझा करने में सक्षम होते हैं, काम के माध्यम से या व्यवसाय स्थापित करने के माध्यम से वित्तीय स्वतन्त्रता के समान अवसर हों, शिक्षा तक समान पहुँच और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं, रूचियों और प्रतिभाओं को विकसित करने के अवसर का आनन्द लें, घर और बच्चों की ज़िम्मेदारी साझा करें। कार्यालय तथा घर दोनों जगह का वातावरण जबरदस्ती, धमकी तथा अन्य लिंग आधारित हिंसा से पूरी तरह मुक्त हो।

8.4 लैंगिक समानता में शिक्षक की भूमिका (Role of a Teacher in Gender Equality)

लैंगिक भेदभाव या लैंगिक असमानता किसी एक क्षेत्र, राज्य या देश से सम्बन्धित नहीं है, बल्कि यह एक वैश्विक समस्या है। शिक्षा ही एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन है जो लैंगिक असमानता को दूर कर लैंगिक समानता का विकास करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

किसी भी सामाजिक बुराई को दूर करने के लिए सर्वप्रथम जो बात सामने आती है, वह शिक्षा ही है, क्योंकि शिक्षा ही वह माध्यम है जो लोगों को जागरूक करने का कार्य करती है तथा सही एवं गलत के बीच अन्तर करना भी सिखाती है।

शिक्षक को लिंग सम्बन्धी भेदभाव एवं लिंग सम्बन्धी भ्रामक धारणाओं से दूर रहना चाहिए। एक शिक्षक को अपनी साथी शिक्षिकाओं को हमेशा अपने समकक्ष समझने का प्रयास करना चाहिए। शिक्षक द्वारा जब लिंग सम्बन्धी पूर्वाग्रहों एवं रूढ़िवादी धारणाओं पर आवाज नहीं उठाई जाएगी तब तक समाज में इस प्रकार की स्थिति बनी रहेगी। इस प्रकार लिंग सम्बन्धी पूर्वाग्रहों एवं रूढ़ियों को शिक्षक को न तो अपने मन में स्थान देना चाहिए और न ही इसका समर्थन करना चाहिए ।

एक शिक्षक को लिंग सम्बन्धी पूर्वाग्रह एवं रूढ़िवादिता को समाप्त करने के लिए निम्नलिखित प्रयास करने चाहिए—

1. **स्त्रियों का सम्मान**– समाज में स्त्रियों को पुरूषों की तुलना में कम सम्मान दिया जाता है क्योंकि समाज में पुरूषों की प्रधानता मानी जाती है। पुरूष की प्रधानता के अनेक कारण मानें जाते हैं। एक शिक्षक को इन सभी पूर्वाग्रहों एवं रूढ़िवादियों को दूर करने के लिए स्वयं अपनी पत्नी को समाज में सम्मान देना चाहिए एवं शिक्षिकाओं को सम्मान प्रदान करना चाहिए। इससे अन्य व्यक्ति भी प्रेरित होंगे तथा स्त्रियों को सम्मान प्रदान करेंगे। इससे लिंग सम्बन्धी पूर्वाग्रह एवं रूढ़िवादिता को समाप्त किया जा सकता है।

2. **महिला सशक्तीकरण का विकास**– लिंग सम्बन्धी पूर्वाग्रहों एवं रूढ़ियों को समाप्त करने के लिए एक शिक्षक को महिला सशक्तीकरण की भावना को सुदृढ़ करने का प्रयास करना चाहिए। स्त्रियों के साथ समाज में होने वाले अन्याय का विरोध करने का प्रयास करना चाहिए। स्त्रियों को इस तथ्य से अवगत कराना चाहिए कि वह भी पुरूषों से कम नहीं हैं, पुरूषों की भाँति सभी कार्यों को कर सकती हैं तथा पुरूषों से भी अच्छा प्रदर्शन कर सकती हैं। इसके लिए लिंग सम्बन्धी सभी पूर्वाग्रह एवं रूढ़िवादी धारणाएँ समाप्त हो सकती हैं।

3. **बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन**– लिंग सम्बन्धी रूढ़ियों एवं पूर्वाग्रहों को समाप्त करने के लिए एक शिक्षक को बालिका शिक्षा को प्रोत्साहित करना चाहिए। कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर बालिकाओं को पुरस्कृत किया जाना चाहिए। विद्यालय में शिक्षक द्वारा बालिकाओं को महत्वपूर्ण कार्य दिये जाने चाहिए, जिससे उनको यह अनुभव न हो कि उनके साथ भेदभाव किया जा रहा है। जो अभिभावक किसी समस्या के कारण बालिकाओं को विद्यालय नहीं भेजते हैं, शिक्षक को उनकी समस्याओं को दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

4. **पुरूष एवं स्त्री के प्रति समन्वित दृष्टिकोण का विकास**– शिक्षक को यह प्रयास करना चाहिए कि वह समाज में नारी एवं पुरूष के सह अस्तित्व को बताए, जिससे कि समाज यह समझ सके नारी के अभाव में सृष्टि सम्भव नहीं है। इसलिए नारी के साथ भेदभाव करना एक अपराध ही नहीं वरन समाज के विनाश की नींव डालना है। नारी एवं पुरूष दोनों ही मिलकर इस समाज को नवीन दिशा प्रदान कर सकते हैं।

5. **महान स्त्रियों का वर्णन**– शिक्षक द्वारा विद्यालय एवं समाज दोनों में ही स्त्रियों द्वारा किए जाने वाले महान कार्य के बारे में बताया जाना चाहिए। जैसे– सरोजनी नायडू, महारानी लक्ष्मीबाई, सती अनुसूइया, गार्गी एवं शबरी आदि। इन स्त्रियों ने समाज के लिए काफी कार्य किए। इस प्रकार की स्थिति से समाज में लिंग के आधार पर भेदभाव की स्थिति समाप्त होगी तथा नारी का वर्चस्व बढ़ेगा।

6. **स्त्रियों की महानता के सम्बन्ध में प्रमाण प्रस्तुत करना**– सामान्यतः भेदभाव के कारण स्त्रियों को समाज में सम्मान नहीं मिलता जिसके लिए शिक्षक को स्त्रियों की शक्ति के रूप में धार्मिक एवं ऐतिहासिक प्रमाण प्रस्तुत करने चाहिए, जैसे– सीता–राम एवं राधेश्याम में सीता एवं राधा दोनों का ही नाम पहले आता है।

   इस प्रकार प्राचीनकाल से ही नारी को आदिशक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है, इससे लिंग भेद की स्थिति समाप्त होंगी। इस प्रकार वर्तमान समय में लिंग भेद करना एक भूल होगी।

7. **स्त्रियों की योग्यता का अधिक उपयोग**– शिक्षक को विद्यालय में छात्राओं की योग्यता का सर्वाधिक उपयोग करना चाहिए, इससे यह सिद्ध किया जा सकता है कि छात्राओं में छात्रों से अधिक योग्यता होती है। इसके साथ–साथ छात्राओं में जो भी प्रतिभाएँ पाई जाती हैं, उनके विकास की व्यवस्था भी एक शिक्षक को अपने ऊपर लेनी चाहिए। स्त्रियों की प्रतिभाओं के विकास एवं उनके उपयोग से सभी पूर्वाग्रह एवं रूढ़ियाँ समाप्त हो सकेंगी।

8. **विशेष विद्यालय में छात्राओं की सुरक्षा**– शिक्षक को छात्राओं को यह सुनिश्चित करवाना चाहिए कि यह विद्यालय उनके लिए पूरी तरह से सुरक्षित है, साथ ही साथ उन्हें यह भी सुनिश्चित करवाना चाहिए कि अगर कोई व्यक्ति (प्रधानाचार्य, कोई शिक्षक या विद्यालय का कोई अन्य कर्मचारी) उनके साथ अभद्रता जैसा व्यवहार करता है तो वे इसकी सूचना विद्यालय के कार्यालय या फिर अपने माता–पिता को दे सकती हैं।

   शिक्षक को छात्राओं को अभद्र व्यवहार से बचने के लिए अच्छे स्पर्श एवं बुरे स्पर्श की भी जानकारी देनी चाहिए।

कभी–कभी कुछ मामलों में अगर विद्यालय का कोई कर्मचारी किसी छात्र या छात्रा से दुर्व्यवहार करता है तो विद्यालय के प्रधानाचार्य इस बात को दबाने का प्रयास करते हैं। ऐसे मामले में किसी शिक्षक को इस बात को दबाना नहीं चाहिए, बल्कि उस कर्मचारी के दुर्व्यवहार की जानकारी पुलिस तक पहुँचानी चाहिए।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 1– लैंगिक समानता को परिभाषित कीजिये।

उत्तर– ....

प्रश्न 2– शिक्षक द्वारा लिंग सम्बन्धी पूर्वाग्रह एवं रूढ़िवादिता को समाप्त करने के लिए किए जाने वाले कोई दो प्रयास बताइये।

उत्तर– ....

8.5 एक सामान्य कक्षा में लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिए शिक्षक की भूमिका एवं लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए कार्य

शिक्षक कक्षा में लैंगिक असमानताओं को रोकने के लिए विभिन्न प्रकार के उपाय कर सकते हैं। ऐसे भौतिक या अभौतिक प्रथाओं से बचने के लिए सावधानी बरतनी चाहिए, जो पूर्वाग्रह के मुद्दे को जन्म देती है। शिक्षक द्वारा उठाए जाने वाले प्रमुख कदम निम्नलिखित हैं–

1. **बैठने की व्यवस्था उपलब्ध कराना**– शिक्षकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि सभी छात्राओं को उनके लिंग, जाति या धर्म की परवाह किए बिना उनकी आवश्यकता के अनुसार बैठने को मिले। कभी–कभी शारीरिक रूप से दिव्यांग छात्राओं के लिए विशेष आवश्यकता उत्पन्न होती है। शिक्षक को लिंग की परवाह किए बिना उनकी सहायता के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए।
2. **उपस्थिति में नामों की व्यवस्था**– लिंग समानता सुनिश्चित करने के लिए छात्रों के नाम उनके लिंग की परवाह किए बिना वर्णमाला क्रम के अनुसार लिखने की प्रथा का पालन करना चाहिए।
3. **कक्षा की गतिविधियों में समान भागीदारी**– कक्षा की सभी गतिविधियों में बालक और बालिकाओं की समान भागीदारी सुनिश्चित करने का ध्यान रखा जाना चाहिए। चर्चाओं या प्रदर्शिनी में भाग लेने या परियोजनाओं सम्बन्धी प्रयोगों में भाग लेने में लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए।
4. **लिंग की परवाह किए बिना विद्यार्थियों को भूमिकाएँ सौंपना**– एक शिक्षक को विद्यार्थियों के लिंग की परवाह किए बिना भूमिकाएँ एवं जिम्मेदारियाँ सौंपनी चाहिए।
5. **शिक्षण सामग्री का समान वितरण**– शिक्षकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि लिंग के आधार पर बिना किसी भेदभाव के सारी शिक्षण सामग्री सभी विद्यार्थियों को समान रूप से वितरित की जाये।
6. **स्वास्थ्य शिक्षा पर जागरूकता**– दोनों लिंगों को ध्यान में रखते हुए 'स्वास्थ्य पर जागरूकता' कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। इसमें किसी भी लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं करना चाहिए।
7. **यौन शिक्षा पर जागरूकता**– यौन शिक्षा पर जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करते हुये दोनों लिंगों को ज्ञान प्रदान करने की पहल होनी चाहिए। किसी प्रकार की प्राप्त जानकारी के अनुसार कुछ बिन्दु पर अलग–अलग सत्र एवं संयुक्त सत्र आयोजित किया जाना चाहिए।
8. **कक्षा में प्रेरणादायक फिल्में एवं वीडियो दिखाना**– समाज के सुधार के लिए लैंगिक समानता की आवश्यकता और महत्व को दर्शाने वाले प्रेरक वीडियो और फिल्में कक्षा में रिक्त समय पर या किसी अवसर पर दिखाई जा सकती है।
9. **आपसी सहयोग के लिए नैतिक कहानियाँ**– लैंगिक समानता सुनिश्चित करने के लिए शिक्षक कक्षाओं में पुरूषों एवं महिलाओं के बीच आपसी महत्व पर नैतिक कहानियों का उपयोग कर सकते हैं। इससे

विद्यालयी आयु से ही विद्यार्थियों में लैंगिक समानता के मूल्यों को विकसित करने में मदद मिलेगी।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 3– एक सामान्य कक्षा में लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिए कोई दो उपाय बताइये।

उत्तर– ....

प्रश्न 4– कक्षा में लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए कोई दो उपाय बताइये।

उत्तर– ....

8.6 इकाई सारांश

लैंगिक असमानता किसी एक क्षेत्र के लिए नहीं है, यह हर क्षेत्र में व्याप्त है। किसी भी विचार को व्यक्तियों के मन में बसाने के लिए उसकी नींव बचपन से ही रखनी होती है। लैंगिक समानता की भावना एवं विचार भी शिक्षा के द्वारा ही बालकों के मन में लाया जा सकता है। एक शिक्षक ही है जो अपनी प्रभावी बातों द्वारा तथा रोजमर्रा के क्रियाकलापों द्वारा विद्यार्थियों के विचारों में परिवर्तन ला सकता है। एक शिक्षक जहाँ बैठने की व्यवस्था पर ध्यान दे सकता है वहीं वह विद्यार्थियों को प्रेरणादायी फिल्में भी दिखा सकता है। शिक्षक विद्यार्थियों को अंक प्रदान करने से लेकर उन्हें असाइनमेंट अथवा प्रोजेक्ट देने का कार्य बिना किसी लैंगिक भेदभाव के कर सकता है। शिक्षक विद्यार्थियों में लैंगिक समानता के प्रति जागरूकता ला सकता है। वह विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से ऐसा कर सकता है। इस प्रकार बहुत से ऐसे प्रयास हैं जिनके द्वारा एक शिक्षक विद्यार्थियों में लैंगिक असमानता की भावना को समाप्त करके लैंगिक समानता को ला सकता है तथा समाज में परिवर्तन कर सकता है।

8.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. लैंगिक समानता, जिसे यौन समानता या लिंगों की समानता के रूप में भी जाना जाता है, आर्थिक भागीदारी और निर्णय लेने सहित लिंग की परवाह किए बिना संसाधनों और अवसरों तक पहुँच में समान अवसर की स्थिति है और लिंग की परवाह किए बिना विभिन्न व्यवहारों, आकांक्षाओं और जरूरतों को समान रूप से महत्व देने की स्थिति ही लैंगिक समानता है।
2. शिक्षक द्वारा लिंग सम्बन्धी पूर्वाग्रह एवं रूढ़िवादिता को समाप्त करने के लिए किए जाने वाले कोई दो प्रयास निम्नलिखित हैं–
   (a) स्त्रियों का सम्मान
   (b) महिला सशक्तीकरण का विकास
3. एक सामान्य कक्षा में लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिए कोई दो उपाय निम्नलिखित हैं–
   (a) बैठने की व्यवस्था उपलब्ध कराना
   (b) कक्षा की गतिविधियों में समान भागीदारी
4. कक्षा में लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए कोई दो उपाय निम्नलिखित हैं–
   (a) यौन शिक्षा पर जागरूकता
   (b) कक्षा में प्रेरणादायक फिल्में एवं वीडियो दिखाना

8.8 अभ्यास कार्य

1. लैंगिक समानता का अपने शब्दों में वर्णन कीजिये।
2. समाज में व्याप्त विभिन्न लैंगिक असमानताओं पर दृष्टिपात कीजिये।

8.9 चर्चा के बिन्दु

1. समाज में व्याप्त लैंगिक असमानताओं को दूर किए जाने वाले उपायों की सार्थकता पर चर्चा कीजिये।

8.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- त्रिपाठी, प्र. (2019). *लिंग, विद्यालय एवं समाज.* अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा
- सिंह, अ. (2015). *लिंग एवं समाज.* विवेक प्रकाशन, दिल्ली
- Kollmayer, M., Schultes, M., Lüftenegger, M., Finsterwald, M., Spiel, C., & Schober, B. (2020). REFLECT – a teacher training program to promote gender equality in schools. *Frontiers in Education*, *5*. https://doi.org/10.3389/feduc.2020.00136
- Srivastava, N. (2022). Teacher as gender constructivist. *ResearchGate*. https://www.researchgate.net/publication/358104066_Teacher_as_Gender_Constructivist#:~:text=A%20teacher%20as%20a%20gender,class%20or%20outside%20the%20class
- *The importance of gender equality in education | JBCN Education*. (2023, June 1). https://www.jbcnschool.edu.in/blog/importance-of-gender-equality/
- *Ways to promot gender equality in classroom - Google Search*. (n.d.).

इकाई–9

कानून, सरकारी नीतियों और योजनाओं की लैंगिक आलोचना

(Gender Critique of Legislation, Government Policies and Schemes)

इकाई संरचना

9.1 परिचय

9.2 इकाई के उद्देश्य

9.3 लैंगिक समानता एवं भारत में लैंगिक असमानता

9.4 भारत में लैंगिक असमानता के कारण

9.5 लैंगिक असमानता के विरुद्ध संवैधानिक एवं कानूनी सुरक्षा के उपाय

9.6 कानून, सरकारी नीति और योजनाओं के मध्य लैंगिक आलोचना

9.7 महिला की स्थिति सुधारने हेतु कानून

9.8 भारतीय संविधान एवं लैंगिक सवाल

9.9 सामाजिक क़ानूनों की समीक्षा

9.10 इकाई सारांश

9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.12 अभ्यास कार्य

9.13 चर्चा के बिन्दु

9.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.1 परिचय

कानून की लैंगिक आलोचना में क़ानूनों और नीतियों का विश्लेषण करना शामिल है ताकि यह समझा जा सके कि वे विभिन्न लिंगों को कैसे असंगत रूप से प्रभावित कर सकते हैं या लैंगिक असमानताओं को कायम रख सकते हैं। यह उन क्षेत्रों की पहचान करना चाहते हैं जहाँ कानून रूढ़िवादिता को मजबूत कर सकता है तथा अवसरों को सीमित कर सकता है या सभी लिंगों की आवश्यकता और अधिकारों को पर्याप्त रूप से सम्बन्धित करने में विफल हो सकता है। इस प्रकार के विश्लेषण से अधिक समावेशी और न्यायसंगत क़ानूनों की सिफ़ारिशें की जा सकती हैं, जो अनुभवों और चुनौतियों पर विचार करती है।

9.2 इकाई उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त अधिगमकर्ता/विद्यार्थी–

- लैंगिक समानता को परिभाषित कर सकेंगे।
- भारत में लैंगिक असमानता के कारण को जान सकेंगे।
- भारत में महिलाओं की स्थिति को समझ सकेंगे।
- महिला हिंसा निरोधक क़ानूनों को बता सकेंगे।
- महिलाओं की स्थिति सुधारने सम्बन्धी कानूनों को जान सकेंगे।

9.3 लैंगिक समानता एवं भारत में लैंगिक असमानता (Gender Equality and Gender Equality in India)

लैंगिक समानता का अर्थ यह नहीं है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति एक लिंग का हो, अपितु लैंगिक समानता का सीधा सा अर्थ समाज में महिलाओं तथा पुरूषों के समान अधिकार, दायित्व तथा रोजगार के अवसरों के परिप्रेक्ष्य में है।

जिस प्रकार तराजू में दोनों तरफ बराबर भार रखने पर यह संतुलित होती है, ठीक उसी प्रकार किसी भी समाज व राष्ट्र में संतुलन के लिए जरूरी है कि वहाँ पुरूषों तथा स्त्रियों के मध्य लैंगिक समानता स्थापित की जानी चाहिए। आज आधुनिकता की जीवन शैली को अपनाने के बावजूद भारतीय समाज लैंगिक समानता के मामले में पिछड़ा हुआ है। सही मायनों में देखा जाए तो लैंगिक समानता का न होना ही समाज में असन्तुलन और अपराध को जन्म देता है। यह बहुत आवश्यक है कि शिक्षा, राजनीति, रोजगार, अवसर या अधिकार जैसे प्रत्येक क्षेत्र में लैंगिक समानता को ध्यान में रखा जाना चाहिए। जिस प्रकार एक सिक्के के दो पहलू की समानता है, ठीक उसी प्रकार समाज के दोनों पहलुओं अर्थात स्त्री एवं पुरूष के मध्य भी लैंगिक समानता होनी चाहिए। सरकार द्वार लैंगिक समानता के स्तर को ऊँचा उठाने हेतु कई योजनाएँ लागू की जा रही हैं, फिर भी भारत इस मामले में पिछड़ा हुआ है। अब आवश्यकता है समाज के बुनियादी ढाँचे को बदलकर दक़ियानूसी सोच को खत्म करने की। लैंगिक समानता से समाज को न केवल स्त्रियों को बल्कि शिक्षित वर्गों को भी जनजागरण का कार्य करना होगा ताकि अपराधों में रोकथाम के साथ ही महिलाओं के अधिकार सम्बन्धी व कार्यस्थल में हो रहे शोषण को समाप्त किया जा सके।

भारत में लैंगिक असमानता–

हम 21वीं शताब्दी के भारतीय होने पर गर्व करते हैं, जो एक पुत्र के जन्म लेने पर उत्साह मनाते हैं और यदि एक पुत्री का जन्म हो जाये तो शान्त हो जाते हैं, यहाँ तक कि कोई भी जश्न नहीं मनाने का नियम बनाया गया है। लड़के के लिए इतना ज्यादा प्यार कि लड़के के जन्म की चाह में हम प्राचीन काल से ही लड़कियों को जन्म के समय या जन्म से पहले मारते आ रहे हैं और यदि सौभाग्य से वह नहीं मारी जाती तो हम जीवनभर उनके साथ भेदभाव के अनेक तरीके खोज लेते हैं।

9.4 भारत में लैंगिक असमानता के कारण (Reasons for Gender Inequality in India)

भारतीय समाज में लैंगिक असमानता का मूल कारण इसकी पितृसत्तात्मक व्यवस्था में निहित है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री सिल्विया वाल्बी (Sylvia Walby) के अनुसार, पितृसत्तात्मकता सामाजिक संरचना की ऐसी प्रक्रिया या व्यवस्था है, जिसमें पुरुष, महिलाओं पर अपना प्रभुत्व जमाता है, उसका दमन करता है और उसका शोषण करता है। महिलाओं का शोषण भारतीय समाज की सदियों पुरानी सांस्कृतिक घटना है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने अपनी वैधता एवं स्वीकृति हमारे धार्मिक विश्वासों, चाहे वह हिन्दू, मुस्लिम या किसी अन्य धर्म से ही क्यों न हो, से प्राप्त की है। महिलाओं का समाज में निचला स्तर होने के कुछ कारणों में से अत्यधिक गरीबी व शिक्षा की कमी भी है। गरीबी और शिक्षा की कमी के कारण बहुत सी महिलाएँ कम वेतन पर घरेलू कार्य करने, संगठित वैश्यावृत्ति का कार्य करने, या प्रवासी मजदूरों के रूप में कार्य करने के लिए मजबूर होती हैं।

लड़की को बचपन से शिक्षित करना अभी भी एक बुरा निवेश माना जाता है, क्योंकि एक दिन उसकी शादी होगी और उसे पिता का घर छोड़ कर दूसरे घर जाना पड़ेगा। इसलिए महिलाएँ अच्छी शिक्षा के अभाव में वर्तमान में नौकरियाँ, कौशल माँग की शर्तों को पूरा करने में असक्षम हो जाती है, वहीं प्रत्येक साल हाई स्कूल और इंटरमीडिएट में लड़कियों का परिणाम लड़कों की तुलना में अच्छा होता है। अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि महिलाओं के साथ असमानता और भेदभाव का व्यवहार समाज में, घर में और घर के बाहर विभिन्न स्तरों पर किया जाता है।

भारत में महिलाओं की स्थिति (Status of Women in India)

भारत में श्रमशक्ति में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 29% है, जबकि 2004 में यह आँकड़ा 35% था। भारत में महिलाओं द्वारा किया जाने वाला आधे से अधिक श्रम अवैतनिक है और लगभग पूरा श्रम अनौपचारिक व असुरक्षित

है। अधिकतर क्षेत्रों में महिलाओं को उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिलता, जिसमें व्यापार जगत के शीर्ष पद भी शामिल हैं। हालांकि महिलाएँ खेती से जुड़े 40% कार्य करती हैं और भारत में केवल 9% भूमि पर उनका नियंत्रण है। महिलाएँ औपचारिक वित्तीय प्रणाली से भी बाहर हैं। भारत की लगभग आधी महिलाओं का कोई बैंक या बचत खाता नहीं है, जिसे वे स्वयं नियंत्रित करती हैं और 60% महिलाओं के नाम पर कोई मूल्यवान सम्पत्ति नहीं है। देश की जीडीपी में महिलाओं की हिस्सेदारी केवल 17% है, जबकि उनका विश्व औसत 37% है। इसके अतिरिक्त महिलाएँ शारीरिक रूप से अधिक असुरक्षित हैं। भारत में महिलाओं के खिलाफ अपराध की दर 53.9% है। राजधानी दिल्ली में 92% महिलाओं का कहना है कि उन्हें सार्वजनिक स्थानों पर यौन या शारीरिक हिंसा का सामना करना पड़ा है।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 1– लैंगिक समानता का अर्थ क्या है?

उत्तर– ....

....

....

प्रश्न 2– प्रसिद्ध समाजशास्त्री सिल्विया वाल्बी (Sylvia Walby) के अनुसार पितृसत्तात्मकता से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– ....

....

....

9.5 लैंगिक असमानता के विरुद्ध संवैधानिक एवं कानूनी सुरक्षा के उपाय (Legislative and Legal Remedy against Gender Inequality)

लिंग असमानता को दूर करने के लिए भारतीय संविधान ने अनेक सकारात्मक कदम उठाए हैं। संविधान की प्रस्तावना हर किसी के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय प्राप्त करने के लक्ष्यों के साथ ही अपने सभी नागरिकों के लिए स्तर की समानता और अवसर प्रदान करने के बारे में बात करती है। इसी क्रम में महिलाओं को भी वोट डालने का अधिकार प्राप्त है।

संविधान का अनुच्छेद 15 भी लिंग, धर्म, जाति और जन्म स्थान के अलग होने के आधार पर किए जाने वाले सभी भेदभावों का निषेध करता है। अनुच्छेद 15(3) किसी भी राज्य के बच्चों और महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान बनाने के लिए अधिकारित करता है, इसके अलावा राज्य के नीति–निदेशक तत्त्व भी ऐसे बहुत से प्रावधानों को प्रदान करता है जो महिलाओं की सुरक्षा एवं भेदभाव से रक्षा करने में मदद करता है।

भारत में महिलाओं के लिए बहुत से संवैधानिक सुरक्षात्मक उपाय बनाए गए हैं, पर जमीनी हकीकत इससे बहुत अलग है। इन सभी प्रावधानों के बावजूद देश में महिलाओं के साथ आज भी द्वितीय श्रेणी के नागरिक के रूप में व्यवहार किया जाता है, पुरूष उन्हें अपनी कामुक इच्छाओं की पूर्ति करने का माध्यम मानते हैं।

I. महिला हिंसा निरोधक कानून–

भारत में कई घरेलू हिंसा निरोधक कानून हैं। सबसे शुरुआती कानून दहेज प्रतिरोध अधिनियम 1961 था, जिसने दहेज देने व लेने को अपराध बताया। 1961 के कानून को मजबूत करने के प्रयास में, 1983 और 1986 में दो नई धाराओं, धारा 498ए और धारा 304बी को भारतीय दण्ड संहिता में जोड़ा गया। सबसे हालिया कानून घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 है।

महिला हिंसा निरोधक कानून निम्नलिखित हैं–

- बाल विवाह निषेध (संशोधन) विधेयक 2021 लोक सभा में प्रस्तुत किया गया।

- दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961
- दहेज प्रतिषेध नियमावली, 1961
- महिलाओं के अश्लील प्रतिनिधित्व, 1986
- सती प्रथा (निवारण) अधिनियम एवं नियमावली, 1987
- राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990
- "घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005" के तहत नियम
- महिलाओं का कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न अधिनियम 2013
- कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, 2013" के तहत नियम।

II. हिंसा पर रोक हेतु संवैधानिक प्रावधान–

भारत का संविधान न केवल महिलाओं को समानता प्रदान करता है, राज्य को महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक उपाय अपनाने का अधिकार भी देता है, जिससे उनके सामने आने वाली संचयी– सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक कठिनाइयों को दूर किया जा सके। अनुच्छेद 14 पुरूषों और महिलाओं को राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में समान अधिकार और अवसर प्रदान करता है। इसी प्रकार अनुच्छेद 16 भी सभी नागरिकों के लिए सार्वजनिक नियुक्तियों के मामले में अवसरों की समानता प्रदान करता है। अनुच्छेद 39ए में आगे उल्लेख किया गया है कि राज्य अपनी नीति को सभी नागरिकों, पुरूषों एवं महिलाओं को समान रूप से सुरक्षित करने की दिशा में निर्देशित करेगा। आजीविका के साधन का अधिकार, अनुच्छेद 39सी समान काम के लिए समान वेतन सुनिश्चित करता है। अनुच्छेद 42 राज्य को काम और मातृत्व राहत की उचित और मानवीय स्थितियाँ सुनिश्चित करने के लिए प्रावधान करने का निर्देश देता है।

संविधान का अनुच्छेद 51(ए)(ई) के माध्यम से महिलाओं की गरिमा के लिए अपमानजनक प्रथाओं को त्यागने के लिए प्रत्येक नागरिक का एक मौलिक कर्तव्य बताता है।

III. सरकारी बालिका योजनाएँ–

देश में बालिकाओं की सामाजिक स्थिति में बदलाव लाने और उनके प्रति हीन एवं नकारात्मक भावना को समाप्त करने के उद्देश्य से केंद्र सरकार एवं राज्य सरकारों की ओर से बालिकाओं के लिए कई तरह की कल्याणकारी योजनाओं की शुरुआत की गई है। इन योजनाओं के माध्यम से बालिकाओं को शिक्षा में प्रोत्साहन देकर आत्मनिर्भर बनाने के लिए सरकार उन्हें आर्थिक रूप से सहयोग प्रदान करती है। इन योजनाओं के माध्यम से बालिकाओं के विकास के साथ–साथ उनके प्रति सकारात्मक सोच को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सरकार बेटियों के लिए योजनाओं के तहत उनकी शिक्षा के साथ–साथ उनके भविष्य में उच्च शिक्षा या शादी के खर्चों के लिए बचत की सुविधा प्रदान करवाती है। सरकार द्वारा संचालित ऐसी सबसे अच्छी सरकारी योजनाएँ निम्नलिखित हैं–

- सुकन्या समृद्ध योजना
- बालिका समृद्ध योजना
- बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ योजना
- कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना
- मुख्यमन्त्री राजश्री योजना
- मुख्यमन्त्री कन्या सुरक्षा योजना

- नन्दा गौरी देवी कन्या धन योजना
- CBSE उड़ान योजना
- माध्यमिक शिक्षा के लिए लड़कियों के प्रोत्साहन की योजना
- धनलक्ष्मी योजना

IV. दिव्यांग महिलाओं के लिए योजनाएँ–

देश में महिलाओं सहित दिव्यांग व्यक्तियों के उत्थान के लिए कार्यान्वित विभिन्न योजनाएँ दिव्यांग व्यक्तियों के शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक पुनर्वास, बाधा–मुक्त वातावरण का निर्माण, सहायक उपकरण, विशेष शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण जैसी सुविधाएँ प्रदान करती है। निम्नलिखित योजनाओं में शारीरिक रूप से दिव्यांग महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान किया गया है–

- दिव्यांग महिलाओं के उत्थान के लिए ट्रस्ट फण्ड से छात्रवृत्ति योजना और राष्ट्रीय निधि से छात्रवृत्ति योजना लागू की गई है।
- विकलांग छात्रों के लिए राष्ट्रीय छात्रवृत्ति में बीस में से छः छात्रवृत्तियाँ महिला उम्मीदवारों के लिए आरक्षित है।
- विकलांग छात्रों के लिए प्री–मैट्रिक छात्रवृत्ति और पोस्ट–मैट्रिक छात्रवृत्ति में 50% छात्रवृत्ति बालिकाओं के लिए आरक्षित है।
- ट्रस्ट फण्ड से छात्रवृत्ति योजना के अन्तर्गत 30% छात्रवृत्ति दिव्यांग महिला छात्रों के लिए आरक्षित है।
- दिव्यांग छात्राओं के लिए राजीव गाँधी राष्ट्रीय अध्येतावृत्ति योजना
- दिव्यांग छात्राओं के लिए राष्ट्रीय प्रवासी छात्रवृत्ति की योजना

9.6 कानून, सरकारी नीति और योजनाओं के मध्य लैंगिक आलोचना (Gender Critics between Law and Government Schemes & Policies)

जहाँ एक ओर महिलाएँ वैश्वीकरण के नए युग में चुनौतियों का सामना कर रही हैं, वहीं अधिकांश आबादी मूल अधिकारों से वंचित रखी जा रही है, जिसका सबसे बड़ा कारण है उनका अपने अधिकारों की लड़ाई में उदासीनता और सामाजिक सुरक्षा का बढ़ता खतरा जो प्रायः घर की चौखट से न्यायालय तक पहुँच स्थापित करने का कारण बनती है।

महान शिक्षाविद् एवं समाजशास्त्री जॉन स्टुअर्ट मिल (John Stuart Mill) के अनुसार, कई लोग आग्रह भी करते हैं कि यदि स्त्रियाँ पुरूष की अधीनता से मुक्ति चाहती हैं तो सामूहिक रूप से संघर्ष क्यों नहीं करती? इस पर मिल का मत था कि सभी पुरूष, केवल अत्यधिक जंगली पुरूषों को छोड़कर, उन स्त्रियों से जिनका सम्बन्ध उनसे है, केवल बलात गुलामी ही नहीं चाहते बल्कि एक प्रिय भी चाहते हैं। अतः उन्होने उनके मस्तिष्क को भी गुलाम बनाने के सभी उपाय अपनाए हुये हैं। सभी नैतिकताएँ बताती हैं कि यह स्त्रियों का कर्तव्य है तथा सभी भावुकताएँ बताती हैं कि ये स्त्रियों की प्रकृति है कि वे दूसरे के लिए जियें।

महिला समाज में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। समाज में महिला एवं पुरूष एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक के विकास का होना या विकास का अवरुद्ध हो जाना, पूरे समाज को प्रभावित करता है। हम आधुनिक होने की बात तो करते है, लेकिन हमारे समाज में आज भी महिलाओं से जुड़े कुछ विषय हैं, जिनके जवाब हम खोज नहीं पाये हैं। वर्षों से महिलाओं की स्थिति एक शोषित वर्ग के रूप में रही है और जब कभी एक महिला की स्थिति को सशक्त करने का प्रयास किया गया तो अन्य लोगों द्वारा उसे बलपूर्वक दबा दिया गया, उन्हें कई प्रकार के रीति–रिवाजों में फँसा कर उनकी स्वयं के बारे में सोच को ही दबा दिया गया। बाल विवाह का रिवाज, दहेज प्रथा या सम्पत्ति पर अधिकार निषेध ने महिला के स्वतन्त्र विकास में बाधा उत्पन्न की है।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 3– संविधान का कौन सा अनुच्छेद लिंग, धर्म, जाति और जन्म स्थान के अलग होने के आधार पर किए जाने वाले सभी भेदभावों का निषेध करता है?

उत्तर– ....

....

प्रश्न 4– संविधान का अनुच्छेद 51(ए)(ई) क्या कहता है?

उत्तर– ....

....

9.7 महिलाओं की स्थिति सुधारने हेतु कानून (Laws to Improve the Status of Women)

महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए कानून का निर्माण किया जाना इतना आसान नहीं है और यदि कानून का निर्माण हो जाता है तो क्या कानून निर्माण से ही महिलाओं का विकास या उनकी स्थिति में सुधार सम्भव है? अब तक महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए जितने भी कानून बने हैं, चाहे वो सन् 1874 का विवाहित महिला का सम्पत्ति अधिनियम हो या सन् 1929 का हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम रहा हो, सन् 1937 का मुस्लिम शरीयत अधिनियम हो या फिर 1939 का मुस्लिम विवाह विच्छेद अधिनियम, 1946 का अलग रहने एवं भरण–पोषण हेतु स्त्रियों का अधिकार अधिनियम हो या सन् 1951 का कर्मचारी बीमा योजना हो, 1954 का विशेष विवाह अधिनियम या 1955 का हिन्दू विवाह अधिनियम, 1956 का स्त्रियों एवं कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम या 1956 का हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम या 1961 का दहेज निरोधक अधिनियम हो, इन सभी कानूनी अधिकारों का धरातल पर आना भारतीय न्यायपालिका, कार्यपालिका एवं विधायिका की एक बड़ी विफलता रही है, क्योंकि कानूनी अधिकारों के जमावड़ों के बावजूद भी भारत में लैंगिक असंतोष की एक भावना बनी हुई है।

9.8 भारतीय संविधान एवं लैंगिक सवाल (Indian Constitution and Gendered Question)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत के कर्णधारों ने संविधान का निर्माण किया जिसे 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया। संविधान के अनुच्छेद 12 से 34 में भारत के नागरिकों के मौलिक अधिकारों का वर्णन है। इन अधिकारों में लिंग, धर्म, जाति तथा भाषा के अलग–अलग लोगों को समान माना गया है। रूल्स ऑफ लॉ यथासम्भव महिलाओं को पूर्व प्रतिनिधित्व देने की बात कहता है। संविधान की धारा 14, 15 एवं 16 विकास की प्रक्रिया में महिला को समान अवसर देने की बात करता है। संविधान के नीति–निदेशक सिद्धान्त भी महिला को न्याय, स्वतन्त्रता और समता का अवसर प्रदान करने की बात करता है, परन्तु क्या यह सभी कानूनी पहल महिलाओं के समग्र विकास व न्याय दिलाने की बात पर खरा उतरता है?

प्रायः हम यह देखते हैं कि अधिनियम 1956 के तहत अनैतिक व्यापार (रोकथाम) के लिए कानून तो बना है, परन्तु वास्तविकता यह है कि यह अधिनियम अनैतिक व्यापार की रोकथाम में उस हद तक कारगर नहीं हुआ है जितना होना चाहिए।

9.9 सामाजिक कानूनों की समीक्षा (A Review of Social Laws)

भारतीय समाज में विभिन्न सामाजिक क़ानूनों के पारित हो जाने से भारतीय समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियाँ और रूढ़ियाँ समाप्त हुयी हैं, तथापि अभी भी कुछ मामलों में शिकायत दर्ज नहीं कराई जाती है। निम्नलिखित विवरण से यह बात और भी स्पष्ट हो जाएगी–

1. **मानव की सामाजिक यातनाएँ समाप्त होना**– हमारे देश में मानव समाज की सामाजिक यातनाओं को कानून द्वारा समाप्त कराने तथा नारी मुक्ति का विचार एवं भावना काफी देर से जागृत हुई। भारत में रूढ़िवादी समाज है और यहाँ पर कानून से अधिक रिवाज या रूढ़ि की पकड़ मानव जीवन को नियंत्रित

करती है, तो उस समाज का विकास सन्तोषजनक नहीं हो सकता। इसी दृष्टि को ध्यान में रखते हुये क़ानूनों का निर्माण किया गया है, फिर भी समाज में जागृति काफी देर से आने की बात को रेखांकित करना अत्यन्त आवश्यक है।

2. **वैधानिक सीमाओं का अन्तर्निहित होना तथा दण्ड की कमी**– आधुनिक क़ानूनों में अनेक सीमाएँ अन्तर्निहित हैं। यदि बाल–विवाह निरोधक अधिनियम की चर्चा की जाये तो इसमें कानून तोड़ने की सजा इस प्रकार है– "15 वर्ष से कम आयु की कन्या की शादी तय करवाने का दण्ड मात्र 15 दिन का कारावास या 1000 रूपए जुर्माना।" जुर्माने की रकम विवाह के खर्चे में शामिल कर ली जाती है। लेकिन इसमें कानून भंग करने वाला तब तक सजा का पात्र नहीं माना जाता, जब तक कि इसकी सूचना सरकार को न दी जाये और यह सूचना केवल दो ही प्रकार से व्यक्ति दे सकते हैं– प्रथम, तो सामाजिक कार्यकर्त्ता जिन्हें समाज सुधार की लगन हो तथा द्वितीय, वे व्यक्ति जिन्हें अपराध करने वालों से अदावत हो। इस प्रकार दण्ड की व्यवस्था प्रायः नहीं के समान है तथा कानून का उल्लंघन मात्र अपने आप में कोई विशेष अपराध नहीं बनता। वास्तव में मात्र कानून पारित होने से सामाजिक प्रगति नहीं हो सकती, जब तक उसके पीछे कठोर दण्ड पद्धति को दृढ़तापूर्वक लागू नहीं किया जाता हो।

3. **कानून की संख्या में कमी**– यद्यपि क़ानूनों का निर्माण कर लिया गया है, फिर भी इस क़ानूनों की संख्या अभी भी पर्याप्त कम है। विवाह, श्रम, सम्पत्ति आदि सभी से सम्बन्धित कानून बन गए हैं, लेकिन इनकी संख्या पर्याप्त अधिक नहीं है। इसलिए आज भी महिलाओं को वांछित अधिकार नहीं मिल पाये हैं। अतः डेविड राइसमेन ने सत्य ही कहा है कि "हमारे काम की व्यवस्था ऐसी है कि गृहलक्ष्मी जो सामाजिक कार्य सम्पन्न करती है, उसकी राष्ट्रीय जनगणना विवरण में या प्रज्ञा के मानस पटल पर समय या आर्थिक दृष्टि से कोई स्पष्ट व्याख्या नहीं की गई है। घरेलू महिला के कार्य को श्रम नहीं माना गया है। अतएव वह दिन ढलने पर थककर चूर भले हो जाये, किन्तु उसे थकावट अनुभव करने या प्रकट करने का अधिकार नहीं है, ऐसा कहा जाता है। यह तो एक श्रम क्षेत्र का पहलू है, अन्य सभी क्षेत्रों की भी तस्वीर ऐसी ही है।

4. **जनता की जागरूकता**– वस्तुतः केवल कानून बना देने से सामाजिक परिवर्तन होने की प्रवृत्ति भी भ्रामक है। सच तो यह है कि आज भी विधवा विवाह, बाल–विवाह, सम्पत्ति सम्बन्धी क़ानूनों के बारे में लोगों में जागरूकता की कमी है। यद्यपि कानून जनता के हित के लिए बनाए गए हैं, परन्तु जनता की मानसिकता है कि "यह उन पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए बनाए गए हैं।" अतः आज आवश्यकता यह है कि जनता में जागरूकता लाई जाये तथा उन्हें यह बताएँ कि कानून उनके लाभ के लिए बनाए गए हैं। यद्यपि दहेज सम्बन्धी कानून पारित हो गया है, लेकिन शिक्षा के अभाव में इसके रूप को और भी वीभत्स बना दिया है। यही कारण है कि आज जितना ज्यादा शिक्षित एवं योग्य लड़का होगा उसके दाम उतने ही ज्यादा होंगे। इसके विरोध में कोई भी आवाज उठाने को तैयार नहीं है। लड़की वाले यह स्वयं भी चाहने लगते हैं कि कैसे भी हो उसकी बेटी का विवाह उससे ही हो जाये। इसलिए जनता के सहयोग एवं सहकार के बिना कोई भी सामाजिक कानून सफल नहीं हो सकते।

5. **प्रभावशाली क्रियान्वयन का अभाव**– भारत में सामाजिक क़ानूनों को प्रभावकारी रीति से कार्यान्वित करने में एक बाधा प्रशासकीय भी मानी जा सकती है। हमारे पुलिस, दारोगा, पटवारी, सरपंच जनप्रतिनिधि आदि भी स्वयं अपने स्वार्थों में लिप्त रहते हैं। वे कानून भंग की घटनाओं को नजरअंदाज कर देते हैं या फिर विरोधियों को तरह–तरह के हथकंडे आजमाकर दबा देने में सहायता करने लगते हैं।

6. **नारी का उच्च स्तर**– भारत में सामाजिक कानूनों ने भारतीय महिला के स्थान को विधिक दृष्टि से ऊँचा उठाने में विशेष योगदान दिया है। यद्यपि सदियों से विवाह या सम्पत्ति के प्रामाणिक आधार तो धर्म ग्रंथ ही माने जाते रहे हैं, किन्तु अब उसकी जगह धर्म–निरपेक्ष लोकसभा द्वारा पारित क़ानूनों को ही महिलाओं के सम्बन्ध में प्रामाणिक आधार के रूप में मान्यता प्रदान किया जाना कोई साधारण कार्य नहीं है। सभी क़ानूनों ने महिलाओं की स्थिति को मजबूती प्रदान की है, जैसे– सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार, फैक्ट्री एक्ट तथा हिन्दू विवाह अधिनियम।

बोध प्रश्न–

प्रश्न 5– संविधान के अनुच्छेद 12 से 34 किस बात का वर्णन करता है?

उत्तर– ....

प्रश्न 6– भारत का संविधान कब लागू किया गया?

उत्तर– ....

9.10 इकाई सारांश

किसी भी सामाजिक समस्या का निदान उसके कारणों में निहित होता है। कोई कहने के लिए स्त्रियों के सशक्तिकरण को चाहे जितना बढ़ा–चढ़ा कर प्रस्तुत कर ले, किन्तु यह सत्य है कि आज भी प्रत्येक क्षेत्र में अपनी भागीदारी को दर्ज करने के उपरान्त भी सामाजिक रूप से उसे वह दर्जा नहीं मिल पाया है, जहाँ उसे एक पुरूष के बराबर खड़ा कर सके। आखिर क्यों कोई व्रत करना हो तो स्त्री आगे, कोई त्याग करना हो तो स्त्री आगे, शादी के बाद सौ तरह के बन्धन, सभी को खुश रखने की ज़िम्मेदारी एक बहू की, कोई काम में थोड़ी सी गलती हो गई तो बहू की खैर नहीं, शादी–शुदा स्त्री की मांग में सिन्दूर, माथे पर बिन्दी, गले में मंगलसूत्र, हाथों में चूड़ियाँ, पैरों में पायल और बिछिया, आखिर पुरूष को शादी के बाद क्यों नहीं साज–श्रृंगार के बन्धन में बाँधा जाता है, क्यों नहीं हम एक शादी–शुदा मर्द और कुँवारे को देख कर पहचान सकते, जबकि स्त्रियों के लिए ऐसा करना परमआवश्यक बाध्यता है। पुरूष शादी के बाद भी स्वतन्त्र है, पैसे कमाने के अलावा क्या पुरूष की कोई ज़िम्मेदारी नहीं। समाज के प्रति जिम्मेदार लोगों को इस पर विचार करना होगा तभी पूर्ण विकास होगा।

9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. लैंगिक समानता का सीधा सा अर्थ समाज में महिलाओं तथा पुरूषों के समान अधिकार, दायित्व तथा रोजगार के अवसरों के परिप्रेक्ष्य में है।
2. प्रसिद्ध समाजशास्त्री सिल्विया वाल्बी (Sylvia Walby) के अनुसार, पितृसत्तात्मकता सामाजिक संरचना की ऐसी प्रक्रिया या व्यवस्था है, जिसमें पुरुष, महिलाओं पर अपना प्रभुत्व जमाता है, उसका दमन करता है और उसका शोषण करता है।
3. संविधान का अनुच्छेद 15 लिंग, धर्म, जाति और जन्म स्थान के अलग होने के आधार पर किए जाने वाले सभी भेदभावों का निषेध करता है।
4. संविधान का अनुच्छेद 51(ए)(ई) के माध्यम से महिलाओं की गरिमा के लिए अपमानजनक प्रथाओं को त्यागने के लिए प्रत्येक नागरिक का एक मौलिक कर्तव्य बताता है।
5. संविधान के अनुच्छेद 12 से 34 में भारत के नागरिकों के मौलिक अधिकारों का वर्णन है।
6. भारत का संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया।

9.12 अभ्यास कार्य

1. भारतीय समाज में महिलाओं के शोषण पर दृष्टिपात कीजिये।
2. भारत में महिलाओं की स्थिति का वर्णन कीजिये।
3. भारतीय समाज में लैंगिक असमानता के कारणों की चर्चा कीजिये।
4. महिलाओं की स्थिति सुधारने हेतु बनाए गए कानूनों पर विस्तृत चर्चा कीजिये।

9.13 चर्चा के बिन्दु

1. प्राचीन काल से लेकर वर्तमान समय तक में महिलाओं के स्थिति में आए सुधार पर आलोचनात्मक चिन्तन

कीजिये।

9.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- त्रिपाठी, प्र. (2019). *लिंग, विद्यालय एवं समाज.* अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा

  सिंह, अ. (2015). *लिंग एवं समाज.* विवेक प्रकाशन, दिल्ली Editor. (2015, February 27). *Schemes for Women with Disabilities*. enabled.in. https://enabled.in/wp/Schemes-women-disabilities
- *National Policy for Women Empowerment Ministry of Women & Child Development|IN|lnqtv*. (n.d.)https://wcd.nic.in/womendevelopment/national-policy-women-empowerment
- *Top 10 central government girl child schemes in India - Check eligibility*. (n.d.). Groww. https://groww.in/p/savings-schemes/Top-10-government-girl-child-Schemes-in-india
- लैंगिक समानता. (n.d.). ड्रूपल India. https://www.unicef.org/india/hi/what-we-do/gender-equality

Notes